सामान्य हिंदी
(GENERAL HINDI)

सामान्य हिंदी के पाठ्यक्रमानुसार बी० ए० कक्षा के विद्यार्थियों तथा लोक सेवा आयोग, आई० ए० एस०, आई० पी० एस०, पी० ए० एस०, रेल सेवा आयोग, आदि की प्रतियोगिता परीक्षाओं के परीक्षार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी अनुमोदित पुस्तक।

डॉ० भोलानाथ तिवारी
डॉ० ओम्प्रकाश गाबा

प्रथम संस्करण

प्रकाशक
लिपि प्रकाशन
ई-10/4, कृष्णनगर, दिल्ली-110051

मुद्रक : भारती प्रिंटर्स, दिल्ली-110032

SAMANYA HINDI (General Hindi)
by Dr. Bhola Nath Tiwari & Dr. Om Prakash Gaba

दो शब्द

हिंदी के प्रयोग-उपयोग का क्षेत्र कई दृष्टियों से दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है, किन्तु इस वृद्धि के साथ-साथ उसकी एकरूपता भी अनेकरूपता की ओर अग्रसर हो रही है, और अब यह आवश्यक हो गया है कि हिंदी के उच्चारण एवं वाक्य-रचना तथा प्रयोग आदि को मानकीकृत करने की दिशा मे यत्न हो, उसे एकरूपित करने का प्रयास हो। यह पुस्तक इसी दिशा मे एक विनम्र प्रयास है। यों इस प्रकार की पुस्तक कई स्तर के पाठकों के लिए उपयोगी हो सकती है— प्रस्तुत पुस्तक स्नातक स्तर के छात्रों तथा उन सामान्य लोगों के लिए है जो अपनी हिंदी को सभी स्तरों पर सुधारना चाहते है, तथा मान्य हिंदी का ठीक प्रयोग करना चाहते है। आशा है, ऐसे सभी पाठक इसे अपने लिए उपयोगी पाएँगे। सुझावों और त्रुटि-निर्देशों के लिए अग्रिम आभार।

—लेखक द्वय

क्रम

1

हिंदी भाषा का परिचय

हिंदी भारत की राजभाषा और राष्ट्रभाषा है। यह मुख्यतः बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश में बोली जाती है।

हिंदी का संबंध भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत से है। संस्कृत भाषा भारत में लगभग 1500 ई० पू० से 500 ई० पू० तक बोली जाती रही है। संस्कृत के बाद पालि भाषा अस्तित्व में आई। पालि का काल लगभग 500 ई० पू० से 1 ई० तक है। पालि के बाद प्राकृत का प्रचार हुआ। प्राकृत का काल 1 ई० से लगभग 500 ई० तक है। प्राकृत के बाद अपभ्रंश भाषा का काल आता है जो 500 ई० से 1000 ई० तक है। 1000 ई० के आसपास अपभ्रंश से ही हिंदी, बंगला, मराठी, गुजराती आदि आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ है।

हिंदी भाषा के अंतर्गत निम्नांकित उपभाषाएँ तथा मुख्यतः 17 बोलियाँ आती है :

भाषा	उपभाषाएँ	बोलियाँ
हिंदी	(क) पश्चिमी हिंदी	(1) कौरवी (खड़ी बोली)
		(2) ब्रजभाषा
		(3) हरियाणी
		(4) बुंदेली
		(5) कनौजी
	(ख) पूर्वी हिंदी	(6) अवधी
		(7) बघेली
		(8) छत्तीसगढ़ी

2

वर्णमाला और लेखन

(क) वर्णमाला

हिंदी मे प्रयुक्त होने वाली देवनागरी वर्णमाला में निम्नांकित वर्ण हैं :

स्वर

अ आ इ ई उ ऊ
ऋ ए ऐ ओ औ

व्यंजन

कवर्ग —क ख ग घ ङ
चवर्ग —च छ ज झ ञ
टवर्ग —ट ठ ड ढ ण
तवर्ग —त थ द ध न
पवर्ग —प फ ब भ म
अन्तस्थ —य र ल व
ऊष्म —श ष स ह

इनके अतिरिक्त निम्नांकित का भी हिंदी-लेखन में प्रयोग होता है—

स्वर

ऑ (जैसे—ऑफ़िस, डॉक्टर, कॉलिज)

व्यंजन

ड़, ढ़ (जैसे—घोड़ा, पढ़ाई)

क़, ख़, ग़, ज़, फ़ (जैसे—क़ानून, अख़बार, ग़रीब, ज़रूरी, फ़ैसला)

ं (अनुस्वार; इसका उच्चारण ङ्, ञ्, ण्, न्, म् की तरह होता है : गंगा, चंचल, पंडित, आनंद, पंप)।

: (विसर्ग; इसका उच्चारण ह् की तरह होता है। जैसे प्रायः, वस्तुतः)

ँ (अनुनासिक अथवा चंद्रबिंदु; इसका प्रयोग स्वर को अनुनासिक बनाने के लिए होता है : पूछ —पूँछ, उगली—उँगली, सवार —सँवार)।

ऊपर के व्यंजनों में हर पंक्ति के आरंभ में व्यंजन-वर्ग का सामूहिक नाम दिया गया है। ड़, ढ़, क़, ख़, ग़, ज़, फ़ के लिए कोई सामूहिक नाम नहीं है।

इन स्वरों और व्यंजनों के यों तो अ, इ, क आदि नाम हैं, किंतु इसके अतिरिक्त, इनके साथ—'कार' जोड़कर इन्हें 'अकार', 'इकार', 'ककार', 'मकार' आदि भी कहते हैं।

वर्णमाला के व्यंजन 'शुद्ध व्यंजन और अ के योग' हैं। अर्थात् क=क् व्यंजन +अ, अथवा च=च्+अ। केवल व्यंजन दिखाना हो तो व्यंजनों के नीचे तिरछी लकीर (्) लगाते हैं, जिसे 'हल्' कहते हैं। हल् लगाने का अर्थ यह है कि वे केवल व्यंजन हैं, उनमें कोई स्वर नहीं मिला है। अर्थात्—

प्+अ=प

प−अ=प्

अनुस्वार और विसर्ग केवल व्यंजन हैं, अतः उनके साथ 'हल्' चिह्न नहीं लगाते।

चंद्रबिंदु अथवा अनुनासिक न तो स्वर है न व्यंजन। वह स्वर को अनुनासिक बनाने वाला चिह्न मात्र है : अँ, आँ, उँ, ऊँ आदि।

बहुत-सी पुस्तकों में वर्णमाला में अं, अः, क्ष, त्र, ज्ञ भी मिलते हैं किंतु वे एक ध्वनि न होकर दो ध्वनियों के मिले हुए रूप हैं—

अं=अ+ं (जैसे—अंक=अङ्क, चंचल=चञ्चल)

अः=अ+: (जैसे—प्रायः=प्राय्+अ+:)

क्ष=क्+ष

त्र=त्+र

ज्ञ=मूलतः ज्+ञ; किंतु अब इसका उच्चारण ग्यँ अथवा 'ग्य' होता है।

(7) 'र्' व्यंजन में उ और ऊ की मात्राएँ अन्य व्यंजनों की भाँति न लगाई जाकर निम्न प्रकार से लगती हैं—

र्+उ=रु
र्+ऊ=रू

चंद्रबिंदु, अनुस्वार और विसर्ग के बारे में दो बातें उल्लेखनीय हैं—

(1) चंद्रबिंदु (ँ) तथा अनुस्वार (ं) ऊपर लगाए जाते हैं—

ह (ह्+अँ) + =हँ (हँसना)
ह (ह्+अं) + =हं (हंस)

(2) विसर्ग बाद में लगाया जाता है—

य (य्+अ) + : =यः (प्रायः)

जैसे व्यंजन के साथ स्वर मिलाए जाते हैं, उसी प्रकार व्यंजन से व्यंजन भी मिलाने पड़ते हैं। इस दृष्टि से नागरी लिपि के व्यंजन दो प्रकार के हैं—

(क) एक तो हैं वे जिनके अन्त में पाई (।) होती है। जैसे ख, ग, घ, च, ज, त, थ, प आदि।

(ख) दूसरे वे होते हैं, जिनमें पाई नहीं होती। जैसे—क, ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द, फ, र, ह आदि।

पाई वाले व्यंजनों को जब किसी दूसरे व्यंजन से मिलाना होता है तो पाई हटाकर मिलाते हैं :

ख+य=ख्य (व्याख्या)। प्+य=प्य (प्यार)।
त्+थ=त्थ (कत्था)। ग्+घ=ग्घ (घिग्घी)।

त् और त मिलाने से 'त्त' एक नया रूप हो जाता है, जिसे अब 'त्त' रूप में भी लिखते हैं।

बिना पाई के व्यंजनों के संबंध में निम्नांकित बातें याद रखने की हैं—

(1) 'र' व्यंजन के '्र' (प्रेम), 'र्' (शर्म) और '्र' (ट्रेन) तीन अन्य रूप भी मिलते हैं। इन चारों के आने की स्थितियाँ ये हैं—

(अ) र : (क) शब्द के आरंभ में स्वर के पूर्व (राम)
(ख) शब्द के बीच में स्वर और स्वर के बीच (आराम)
(ग) शब्दांत में स्वर के बाद (तार)

(आ) ्र : क, ख, ग, घ, च, ज, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स तथा ह व्यंजन के बाद (क्र, ख्र, ग्र, त्र, द्र, भ्र, म्र, व्र, स्र, ह्र आदि)। 'श' के साथ इसका रूप कुछ विचित्र हो जाता है : श् + र = श्र।

(इ) ॖ : छ, ट, ठ, ड, ढ व्यंजनों के बाद (ट्रेन, ड्रामा आदि)।

(ई) र्‍ : 'र' के इस चौथे रूप को रेफ कहते हैं। इसका प्रयोग व्यंजन के पूर्व होता है : र् + म = र्म (गर्मी)। इसी तरह धर्म, स्वर्ग, चर्च, आर्य आदि में भी।

(2) 'क' को यदि 'क' से मिलाना हो तो नीचे (बिना शिरोरेखा के) या बगल में मिलाते हैं : क्क, क्क।

अन्य व्यंजनों से मिलाने के लिए 'क' के पीछे लटकी टेढ़ी लकीर को छोटी करके मिलाते हैं, जैसे—रक्खा, पक्व, क्या, रुक्मिणी आदि। 'क' को त और ष से मिलाने पर प्रायः नया रूप हो जाता है—

क् + त = क्त
क् + ष = क्ष

(3) ङ, छ, झ, ट, ठ, ड, ढ प्रायः संयोग में भी पूरे लिखे जाते हैं। केवल हल् का चिह्न लगाकर इन्हें मात्र व्यंजन कर लेते हैं। जैसे—वाङ्मय, उच्छ्वास, टट्टू। 'ङ' को क, ग से मिलाने के लिए कभी-कभी क, ग को ङ के नीचे भी लिखते हैं। जैसे—अङ्क। ट ठ ड ढ को एक-दूसरे के साथ मिलाना होता है तो कभी-कभी अन्त के व्यंजन को नीचे बिना शिरोरेखा के लिखा जाता है : ठट्ठा

(4) 'फ' को मिलाने के लिए 'क' की तरह आगे की लकीर को छोटी कर लेते हैं। जैसे—फ्ल, फ्स।

(5) 'द' के मुख्य संयुक्त रूप ये हैं—

द् + द = द्द
द् + ध = द्ध
द् + म = द्म
द् + य = द्य
द् + व = द्व

(6) 'ह्' का 'र' के साथ योग का रूप (ह्र) ऊपर दिखाया गया है। अन्य प्रचलित रूप हैं—

ह्+न=ह्न
ह्+ल=ह्ल
ह्+व=ह्व
ह्+म=ह्म
ह्+य=ह्य

(7) कुछ लिपि-चिह्नों के दो-दो रूप भी मिलते है। इनमें प्रमुख ये हैं—

अ या अ
आ या आ
ग या ख
झ या झ
ल या ळ
त्र या त्र
क्त या क्त

जब किसी स्वर के उच्चारण मे मुख के अतिरिक्त नाक से भी हवा निकलती है, तो उसे 'ँ' (चन्द्रविन्दु) चिह्न से व्यक्त करते हैं। जैसे (कँ, अँ, आँ आदि)। प्रयोग की दृष्टि से यह भी स्मरणीय है कि यदि शिरोरेखा के ऊपर कोई मात्रा हो तो चन्द्रविन्दु के स्थान पर भी अनुस्वार या बिंदु का ही प्रयोग होता है। जैसे— 'सोँठ' के स्थान पर 'सोंठ' या 'सेँक' के स्थान 'सेंक'।

ट्, ल, ण्, न्, म्, ं, ऋ, ष्, क्ष्, ड़, ढ़, क, ख, ग, ज, फ़ और ऑ के प्रयोग के विषय में निम्नांकित बातें ध्यान देने की है—

(1) ङ् का प्रयोग क, ख, ग, घ के पूर्व ही होता है। जैसे—पङ्क, पङ्ख, गङ्गा, कङ्घी। किंतु अब ऐसे स्थानों पर 'ङ्' का प्रयोग न करके प्रायः अनुस्वार (ं) का ही प्रयोग किया जा रहा है। जैसे—पंक, पंख, गंगा, कंघी। 'पराङ्मुख' और 'वाङ्मय' आदि कुछ शब्द में अपवाद है जिनमें केवल 'ङ्' का प्रयोग मिलता है। इन शब्दों में अनुस्वार का प्रयोग नहीं किया जा सकता। ङ् शब्द के आदि तथा अंत में नहीं आता।

(2) ञ का प्रयोग हिंदी में प्रायः नही हो रहा है। यों च, छ, ज, झ के पूर्व इसके प्रयोग का नियम है। जैसे—अञ्चल, पञ्छी, इञ्जन, तथा झञ्झट। किंतु

इन स्थानों पर अब अनुस्वार (ं) का ही प्रयोग होता है। जैसे—अंचल, पंछी, इंजन, झंझट। ञ् भी शब्द के आदि और अंत में नहीं आता।

(3) स्वतंत्र रूप से ण का प्रयोग मुख्यतः केवल संस्कृत तत्सम शब्दों में होता है। वह भी मध्य (प्रणाम) और अंत (प्रण) में। संयुक्त व्यंजन के प्रथम सदस्य के रूप में ण् का प्रयोग तत्सम के अतिरिक्त तद्भव, देशज आदि में भी होता है। इनमें यह ट, ठ, ड, ढ के पूर्व आता है। जैसे— घण्टा, अण्डा तथा ठण्डा आदि। किंतु अब इसके स्थान पर प्रायः अनुस्वार (ं) का ही प्रयोग होता है। जैसे—घंटा, अंडा तथा ठंडा आदि। ट, ठ, ड, ढ के अतिरिक्त, य (पुण्य), व (कण्व), ण (विपण्ण) के पूर्व भी ण का प्रयोग होता है, किंतु ऐसी स्थिति में 'ण' के स्थान पर अनुस्वार नहीं आता।

(4) संयुक्त व्यंजन के प्रथम सदस्य के रूप में 'न्' का प्रयोग त, थ, द, ध के पूर्व करने का नियम है। जैसे—अन्त, पन्थ, आनन्द और अन्धा। किंतु अब इसके स्थान पर प्रायः अनुस्वार (ं) का प्रयोग ही प्राय किया जाता है। जैसे—अंत, पंथ, आनंद और अंधा। न, म, य, व (अन्न, जन्म, अन्य, अन्वय) के पूर्व भी 'न' आता है, किंतु ऐसी स्थिति में अनुस्वार इसका स्थान नहीं ले सकता।

(5) संयुक्त व्यंजन के प्रथम सदस्य के रूप में 'म्' का प्रयोग प, फ, ब, भ के पूर्व करने का नियम है। जैसे—दम्पति, लम्बा, अम्बु। अब इसके स्थान पर अनुस्वार (ं) का ही प्रयोग प्रायः होता है। जैसे—दंपति, लंबा, अंबु। यों म व्यंजन, न (निम्न), म (सम्मान), य (नम्य), र (नम्र), ल (अम्ल) तथा व (म्वाक्रिक) के पूर्व भी आता है, किंतु ऐसी स्थिति में 'म' के स्थान पर 'अनुस्वार' नहीं आता।

(6) 'ं' का प्रयोग ऊपर दिए गए क, च, ट, त, प आदि व्यंजनों के अतिरिक्त य, र, ल, व, श, स, ह के पूर्व भी होता है। जैसे—संयत, संरचना, संलाप, संवाद, वंश, हंस, सिंह आदि।

(7) ऋ, ष, क्ष, ज्ञ का प्रयोग केवल संस्कृत शब्दों में होता है। जैसे—ऋण, शेष, शिक्षा, ज्ञान।

(8) *क़, ख़, ग़, ज़, फ़ का प्रयोग केवल अरबी-फारसी-तुर्की शब्दों में होता* है। जैसे—क़ानून, ख़बर, ग़रीब, ज़हर, फ़ौरन। ज़ और फ़ अंग्रेज़ी शब्दों में भी आते हैं। जैसे—गज़ट, आफ़िस। ऑ केवल अंग्रेज़ी शब्दों में आता है: ऑफ़िस, कॉलिज, डॉक्टर।

3

उच्चारण और उच्चारण-विषयक अशुद्धियाँ

भाषा के दो रूप हैं : एक बोलचाल का और दूसरा लिखित। बोलचाल की भाषा में ध्वनियाँ अभिव्यक्ति का माध्यम होती हैं तथा लिखित भाषा में यह माध्यम लिपि होती है। यहाँ बोली जाने वाली भाषा के माध्यम से ध्वनियों की बात की जा रही है। भाषा के उचित तथा प्रभावशाली प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि जो उच्चारण किया जाए शुद्ध हो। शब्द-चयन तथा वाक्य-रचना की दृष्टि से शुद्ध और अच्छी भाषा भी यदि ग़लत ढंग से बोली जाय तो अपना प्रभाव खो देती है। यही नहीं, अशुद्ध उच्चारण से कभी-कभी अर्थ का अनर्थ हो जाता है। शाल (ओढ़ने का) और साल (एक लकड़ी), जरा (बुढ़ापा) और ज़रा (थोड़ा), राज (राज्य) और राज़ (रहस्य), काफ़ी (पर्याप्त) और 'कॉफ़ी' (एक पेय) का अर्थ भेद उच्चारण पर ही निर्भर करता है।

स्वरों का उच्चारण

हिंदी लेखन में 12 स्वरों का प्रयोग होता है : अ, आ, ऑ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ। इनमें उन स्वरों की उच्चारण-विषयक विशेषताएँ यहाँ दी जा रही हैं, जिनके उच्चारण में प्रायः ग़लतियाँ हो जाती हैं :

ऋ—यह स्वर केवल लेखन में ही अलग है। उच्चारण में यह 'रि' है। अर्थात् कृपा, पृथक्, मृग, घृत आदि का वास्तविक उच्चारण क्रिपा, प्रिथक्, म्रिग, घ्रित आदि होता है।

ह्रस्व-दीर्घ—कुछ स्वरों के उच्चारण में थोड़ा समय लगता है और कुछ के उच्चारण में अधिक समय लगता है। उच्चारण में कम समय लगने वाले स्वर ह्रस्व कहलाते हैं और देर तक लगने वाले दीर्घ :

ह्रस्व—अ, इ, उ
दीर्घ—आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

इनमें 'अ' का दीर्घ रूप 'आ', 'इ' का दीर्घ रूप 'ई' तथा 'उ' का दीर्घ रूप 'ऊ' है।

वृत्तमुखी-अवृत्तमुखी—कुछ स्वरों का उच्चारण करते समय ओष्ठों को गोला अथवा वृत्तमुखी कर लेते है, और कुछ स्वरो का उच्चारण करते समय ओष्ठों को गोला नहीं करते, अर्थात् अवृत्तमुखी रखते हैं :

वृत्तमुखी—उ, ऊ, ओ, औ, ऑ
अवृत्तमुखी—इ, ई, ए, ऐ, आ अ

इनमे 'ऑ' स्वर 'आ' का प्रायः वृत्तमुखी रूप है।

व्यंजनों का उच्चारण

हिंदी भाषी जनता अपने अधिकाश व्यंजनों का उच्चारण ठीक करती है। केवल निम्नाकित के उच्चारण में कभी-कभी अशुद्धियाँ होती हैं, अतः इन्हे ही यहाँ संक्षेप में समझाया जा रहा है :

ञ—इसके उच्चारण मे जीभ के अगले भाग का स्पर्श तालु से कराते हैं, तथा हवा नाक से भी निकलती है। लेखन मे इसके स्थान पर अनुस्वार का ही प्रयोग प्रायः होता है : चंचल, मंजन, झंझा।

ट, ठ, ड, ढ, ण—इनके उच्चारण में जीभ उलट कर तालु के ऊपरी किनारे को छूती है।

त, थ, द, ध, न—इनमें त, थ, द, ध के उच्चारण मे जीभ दाँत के भीतरी भाग का स्पर्श करती है, किंतु न के उच्चारण में जीभ दाँत का स्पर्श न करके दाँत के पीछे मसूड़े (वर्त्स) का स्पर्श करती है।

य—इसके उच्चारण में जीभ तालु के पास जाती है, किंतु स्पर्श नही करती। यदि गलती से स्पर्श हो जाय तो इसका उच्चारण 'ज' हो जाता है। इसी ग़लती के कारण बहुत लोग 'य' को 'ज' ('यदि' को 'जदि') बोल जाते हैं।

र, ल—हिंदी मे ये दोनों जीभ की नोक तथा भीतरी मसूड़े (वर्त्स) की सहायता से बोले जाते हैं। संस्कृत में 'र' मूर्धन्य है तथा 'ल' दंत्य।

व—दोनों ओष्ठों की सहायता से इसका उच्चारण होता है, किंतु यदि दोनो ओष्ठ एक-दूसरे से मिल जायें तो ग़लती से 'व' का उच्चारण हो जाता है। इसी

गलती के कारण बहुत से लोग 'विद्यालय' का 'विद्यालय' अथवा 'वीर' का 'वीर' बोलते हैं।

स, ष, श—संस्कृत में 'स' का उच्चारण दाँत से, 'ष' का मूर्धा से और 'श' का उच्चारण तालु से होता था, अतः ये क्रमशः दंत्य, मूर्धन्य और तालव्य कहलाते थे। हिंदी में 'स' दाँत से उच्चरित न होकर मसूड़े (वर्त्स) से उच्चरित होता है, अर्थात् 'स' वर्त्स्य है। 'ष' का उच्चारण हिंदी में नहीं होता। इसके स्थान पर 'श' बोला जाता है। अर्थात् 'शेष' को हम लोग 'शेश' बोलते हैं। 'श' का उच्चारण तालु से होता है, अर्थात् यह संस्कृत की तरह ही तालव्य है।

तो ध्यान की बात है कि लिखने में यद्यपि तीन का प्रयोग होता है पर बोलने में दो ही हैं :

स—वर्त्स्य
श—तालव्य (ष भी यही है)

क़, ख़, ग़, ज़, फ़

सामान्यतः लोग इनके स्थान पर क्रमशः क, ख, ग, ज, फ बोलते हैं। इनके उच्चारण में निम्नांकित अंतर है :

(1) क-क़—'क' के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग तालु के पिछले भाग को जहाँ छूता है, 'क़' के उच्चारण में और पीछे छूते है : ताक (देख)—ताक़ (आला)।

(2) ख-ख़—'ख' के उच्चारण में जीभ तालु के पिछले भाग को छूती है, किंतु 'ख़' के उच्चारण में वह छूती नहीं, बल्कि तालु के उस भाग के केवल बहुत समीप जाती है : खुदा (खुदा हुआ)—ख़ुदा (अल्लाह)।

(3) ग-ग़—'ग' और 'ग़' का उच्चारण-स्थान एक ही है। अंतर केवल यह है कि 'ग' के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग स्पर्श करता है, किंतु 'ग़' में वह केवल समीप जाता है, छूता नहीं। बाग (घोड़े की बाग)—बाग़ (उपवन) का उच्चारण करके यह अंतर देखा जा सकता है।

(4) ज-ज़—'ज' और 'ज़' के उच्चारण में दो प्रकार के भेद हैं : (1) 'ज' का उच्चारण स्थान 'तालु' है (च, छ की तरह) जबकि 'ज़' का उच्चारण स्थान मसूड़ा है (स की तरह)। (2) 'ज' के उच्चारण में जीभ स्पर्श करती है, किंतु 'ज़' में वह स्पर्श नहीं करती केवल बहुत पास चली जाती है। जरा (बुढ़ापा)—ज़रा (थोड़ा) का उच्चारण करके यह अंतर देखा जा सकता है।

(5) फ-फ़—'फ' का उच्चारण दोनों ओष्ठों को एक दूसरे से सटा कर किया जाता है, किंतु 'फ़' का उच्चारण ऊपर के दाँत तथा नीचे के ओष्ठ को एक दूसरे

के अत्यंत पास ले जाकर किया जाता है। 'साँप का फन' और 'हर फ़न मौला' में 'फन' और 'फ़न' का उच्चारण करके यह अंतर देखा जा सकता है।

उच्चारण-विषयक अशुद्धियाँ

केवल मुख्य बातें ही यहाँ ली जा रही हैं।

अ और आ—'अ' ह्रस्व स्वर है, और 'आ' दीर्घ स्वर है। (1) बहुत-से शब्दों में लोग दीर्घ 'आ' के स्थान पर ह्रस्व 'अ' बोलते हैं जो अशुद्ध है। उदाहरण के लिए 'बाजार' को 'बजार', 'साहित्य' को 'सहित्य', 'कामायनी' को 'कमायनी', 'बारीक' को 'बरीक' जैसी ग़लतियाँ इसी वर्ग की हैं। (2) इसी प्रकार की एक ग़लती एक ख़ास तरह के शब्दों में भी होती है। हिंदी में संस्कृत से आया हुआ एक नियम है कि 'इक' आदि कुछ प्रत्ययों के लगने पर प्रारंभ में 'अ' का 'आ' हो जाता है। जो लोग इस नियम से परिचित नहीं हैं वे 'सप्ताह' से बने शब्द 'साप्ताहिक' को 'सप्ताहिक', 'समाज' से बने शब्द 'सामाजिक' को 'समाजिक' या 'संसार' से बने शब्द 'सांसारिक' को 'संसारिक' कहते हैं। ऐसे ही 'व्यावहारिक', 'आंतरिक', 'व्यावसायिक', 'आध्यात्मिक' आदि अन्य शब्दों में भी 'आ' को 'अ' बोलने की अशुद्धि लोग करते हैं। (3) इसी प्रकार हिंदी का एक नियम है कि कुछ शब्दों के बाद कोई शब्द जोड़ा जाय तो प्रारंभ के 'आ' का 'अ' हो जाता है। अर्थात् 'कान+कटा' का 'कनकटा'। जो लोग इस नियम से परिचित नहीं हैं, वे 'कानकटा' कह जाते हैं। कठपुतली (काठ+पुतली), अधखिला (आधा+खिला), पनघट (पानी+घाट), पनबिजलीघर (पानी+बिजली+घर), पंचगुना (पांच+गुना), सतगुना (सात+गुना), अठगुना (आठ+गुना) आदि में भी यही बात है। (4) हिंदी में कोई भी शब्द अकारांत नहीं है। लेखन में राम, आप, तृप्त, तुम, हम, साँप, आज आदि अकारांत हैं। किंतु वास्तविक उच्चारण में इनके अंत में 'अ' स्वर नहीं आना चाहिए अर्थात् इनका उच्चारण राम्, आप्, तृप्त्, तुम्, हम्, साँप्, आज् आदि करना चाहिए। मराठी भाषी तथा दक्षिण भारत के लोग प्रायः ऐसे शब्दों को अकारांत बोलने की ग़लती करते हैं। हिंदी क्षेत्र की दक्षिणी सीमा के लोग अथवा वे हिंदी भाषी जो महाराष्ट्र अथवा दक्षिण भारत में रहते हैं भी ऐसी ग़लती कर जाते हैं।

ह के पहले का अ

हिंदी प्रदेश के पूर्वी भाग में 'ह' के पूर्व के 'अ' का उच्चारण 'अ' ही होता है किंतु पश्चिमी हिंदी प्रदेश में इस 'अ' का उच्चारण हल्की 'ए' जैसा होता है। जैसे—'सहन' का 'सेहन' अथवा 'रहना' का 'रेहना'। वस्तुतः हिंदी का परिनिष्ठित उच्चारण यही है, अतः यथासाध्य इसी प्रकार उच्चारण करना चाहिए। कुछ

उदाहरण हैं: बहन, पहला, कहना, सहना, वह, टहलना, ठहरना, बहना, नहर, शहर, कहर आदि। किंतु यदि 'ह' के बाद 'अ' को छोड़कर कोई और स्वर हो (कहो, रहो, सहो, कहिए, रहिए, महान, महात्मा) अथवा ह अंत में हो (बारह, तेरह, चौदह, पन्द्रह, सोलह, सत्रह, अट्ठारह) तो 'अ' का उच्चारण 'अ' ही रहता है।

इ--ई; उ-- ऊ

'इ' और 'उ' ह्रस्व स्वर हैं तथा उनके दीर्घ रूप क्रमशः 'ई' 'ऊ' हैं। दीर्घ 'ई' तथा दीर्घ 'ऊ' के उच्चारण में प्रायः कोई अशुद्धि नहीं होती, किंतु ह्रस्व 'इ' और ह्रस्व 'उ' के उच्चारण में प्रायः अशुद्धि हो जाती है। इस संबंध में दो बातें याद रखने की हैं: (1) 'इ' और 'उ' हिंदी के अपने शब्दों में अंत में कभी नहीं आते, वे अंत मे जब भी आते हैं तो अन्य भाषाओं से हिंदी में लिए गए शब्दों मे। जैसे—

	संस्कृत	फारसी
इ	भक्ति, शक्ति, जाति, कवि	कि
उ	वस्तु, हेतु, धातु	+

अन्य भाषाओं से आने के कारण ऐसी स्थिति में 'इ' 'उ' का उच्चारण हिंदी जनता के लिए कठिन पड़ता है, और इसीलिए वे 'इ' के स्थान पर 'ई' (भक्ती, शक्ती, जाती, कवी, रवी, की आदि) बोल जाते हैं तथा 'उ' के स्थान पर ऊ (वस्तू, हेतू, धातू आदि)। इस प्रकार शब्दांत के अंतिम ह्रस्व इ, ह्रस्व उ को सावधानी से बोलना चाहिए। (2) ब्रज तथा बुन्देली क्षेत्र में शब्द के मध्य के ह्रस्व इ, उ का बोलने में प्रायः लोप कर देते हैं। जैसे—वे लोग 'कविता' को कव्ता 'सरिता' को 'सरता', 'यमुना' या 'जमुना' को 'जमना' (यह उच्चारण दिल्ली में भी प्रचलित है), 'बहुधा' को 'वहधा' तथा 'करुणा' का 'करणा' बोलते हैं। उच्चारण की इसी प्रवृत्ति ने 'चौधुरी' को 'चौधरी' कर दिया है, जो पश्चिमी हिंदी प्रदेश में खूब प्रचलित है। (3) पश्चिमी हिंदी प्रदेश के बहुत से लोग (मुख्यतः पंजाबी या उनसे प्रभावित अन्य लोग) इ, उ के स्थान पर 'अ' बोलने की ग़लती कर जाते हैं। जैसे—'पंडित' का 'पंडत', 'धोबिन' का 'धोबन', 'जमादारिन' का 'जमादारन', 'भंगिन' का 'भंगन', या 'साबुन' का 'साबन' आदि।

इनके उच्चारण मे सावधानी बरती जानी चाहिए—

अंत्य इ वाले कुछ शब्द—कि, तिथि, तिलांजलि, शक्ति, शांति, कोटि, क्योंकि, प्रतिनिधि, रवि, कवि, अति, भक्ति, शनि, कृति, पूर्ति, संपत्ति, पति, स्थिति, क्षति आदि।

अंत्य उ वाले कुछ शब्द—अणु, आयु, इन्दु, ऋतु, जन्तु, दयालु, कृपालु, धातु, वस्तु, पटु, पशु, प्रभु, वधु, मधु, मृत्यु, वस्तु, वायु, शत्रु।

आ—ऑ

हिंदी मे अंग्रेज़ी से कुछ शब्द ऐसे आ गए हैं जिनमे एक नए स्वर ऑ का व्यवहार होता है। जैसे—कॉलिज, हॉकी, डॉक्टर, कॉफ़ी, हॉल, बॉल, ऑफिस आदि। 'ऑ' बोलते समय यदि ओष्ठों को गोलाकार कर लें तो इस ऑ का उच्चारण शुद्ध होता है। बहुत से लोग इन शब्दों मे 'ऑ' का स्थान 'आ' बोलने की अशुद्धि कर जाते हैं, और वे डाक्टर, कालिज, आफ़िस आदि बोलते हैं। यह एक प्रश्न है कि इस 'ऑ' को हिंदी मे अपनाएँ भी या नहीं। वस्तुत: चूंकि शिक्षित वर्ग इसका प्रयोग अंग्रेज़ी के प्रभाव से कर रहा है, अत: इसका प्रयोग अच्छे उच्चारण की दृष्टि से किया जाना चाहिए। मुख्यत: ऐसे शब्दों मे जहाँ अर्थ-भेद है: कॉफी—काफ़ी, हॉल—हाल, बॉल—बाल। आगे चलकर यदि हिंदी में इस 'ऑ' के स्थान पर 'आ' को ही स्वीकार कर लिया जाय, यो उस स्थिति में इस 'ऑ' को छोड़ा जा सकता है।

ऋ

'ऋ' हिंदी मे केवल लिखने में ही स्वर है। वास्तविक उच्चारण मे यह 'रि' है। अर्थात् 'कृपा', 'घृत', 'तृप्त', 'भृत', 'मृग', 'पृथक्', 'वृत्त', 'सृष्टि' आदि शब्दों का आज वास्तविक उच्चारण क्रिपा, घ्रित, त्रिप्त, भ्रित, म्रिग, प्रिथक्, व्रित्त तथा 'स्रिष्टि' आदि है। पश्चिमी हिंदी क्षेत्र के बहुत से लोग 'ऋ' के आज के शुद्ध उच्चारण 'रि' के स्थान पर 'र' बोलने की ग़लती करते हैं। अर्थात् वे क्रष्ण, क्रपया, घ्रत, स्रष्टि, म्रग, प्रथक् आदि बोलते है, जो अशुद्ध है।

ऐ—ए

पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा हरियाणा आदि में इनकी ग़लती भी हो जाती है। अर्थात् वे 'ऐ' के स्थान पर 'ए' बोलते हैं। बैल—बेल, सैर—सेर, मैला—मेला, मैल—मेल।

औ—ओ

हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा आस-पास के इलाकों में औ—ओ में भी उच्चारण की गलती हो जाती है। इनके अंतर का ध्यान रखना चाहिए: और—ओर, कौर—कोर, कौड़ी—कोड़ी, शौक—शोक, बौना—बोना, खौलना—खोलना, बौर—बोर, डौल—डोल।

क—क़, ख—ख़, ग—ग़, ज—ज़, फ—फ़

इन व्यंजनों के संबंध मे दो प्रकार की गलतियाँ होती हैं : (क) कुछ लोग क़, ख़, ग़, ज़, फ़ के स्थान पर क, ख, ग, ज, फ बोलते हैं। इनमें 'क़' के 'क' बोलने की गलती बहुत नही खटकती, जैसे 'क़ानून' का 'कानून'। 'ख़' को 'ख' और 'ग़' को 'ग' बोलने की गलती उससे ज्यादा खटकती है, जैसे—'ख़बर' और 'ग़रीब' का 'खबर' और 'गरीब'। 'ज़' और 'फ़' के स्थान पर 'ज', 'फ' बोलने की गलती और ज्यादा खटकती है, जैसे—'ज़हर' का 'जहर' अथवा 'फ़ैसला' का फैसला'। जो गलती जितने ही कम लोग करते है, वह उतनी ही ज्यादा खटकती है। (ख) दूसरी ग़लती वे लोग करते हैं जो क़, ख़, ग़, ज़, फ़ का प्रयोग करना तो चाहते है किंतु जिन्हें इस बात का पता नहीं होता कि किन शब्दों में ये ध्वनियाँ हैं और किन शब्दों में नही हैं। परिणाम यह होता है कि उल्टा प्रयोग कर जाते है, अर्थात् 'क' के स्थान पर 'क़' (जैसे—'किताब' के स्थान पर 'क़िताब'), 'ख' के स्थान पर 'ख़' (जैसे—'खाद' के स्थान पर 'ख़ाद'), 'ग' के स्थान पर 'ग़' (जैसे—'गला' के स्थान पर 'ग़ला'), 'ज' के स्थान पर 'ज़' (जैसे—'लहजा' के स्थान पर 'लहज़ा' या 'फौज' के स्थान पर 'फौज़') तथा 'फ' के स्थान पर 'फ़' (जैसे—'सफल', 'फल', 'फूल' के स्थान पर 'सफ़ल', 'फ़ल', 'फ़ूल')।

वस्तुत: हिंदी मे क़, ख़, ग़, ज़, फ़ वाले शब्द बहुत ज्यादा नही है। उनकी सूची अपनी आवश्यकतानुसार किसी भी कोश से बनाई जा सकती है। डा० भोलानाथ तिवारी की पुस्तक 'हिंदी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण' में इन सभी ध्वनियों से युक्त शब्दों की सूची दी गई है। इस पुस्तक से सहायता ली जा सकती है।

ट—ठ

इनमें भी उच्चारण की गलती हो जाती है। अर्थात् एक के स्थान पर दूसरे का उच्चारण हो जाता है। कुछ मुख्य स्मरणीय शब्द है :

ट वाले—इष्ट, अभीष्ट, यथेष्ट, चेष्टा, तुष्ट, दुष्ट, नष्ट, पुष्ट, भ्रष्ट, रुष्ट, स्पष्ट, हृष्ट-पुष्ट।
ठ वाले—झूठ, कनिष्ठ, घनिष्ठ, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, वरिष्ठ, बलिष्ठ, गरिष्ठ, गोष्ठी, निष्ठा।

ण—न

कुछ लोग 'ण' के स्थान पर 'न' बोलने की अशुद्धि करते हैं। स्मरण, साधारण, व्याकरण, रण, मरण, उच्चारण, उद्धरण, कण, कल्याण, कारण, किरण,

कोण, क्षण, गुण, चरण, नारायण, दर्पण, परिणाम, निर्माण, प्रणाम, पुराण, प्राण, ब्राह्मण, रावण, आदि में ध्यान रखना चाहिए कि इनमें 'ण' है, 'न' नहीं।

हरियाणा, पंजाब तथा राजस्थान के लोग कुछ शब्दों में 'न' के स्थान पर भी 'ण' बोल जाते हैं। जैसे—'रानी' का 'राणी' अथवा 'कहना' का 'कहणा' आदि।

ण —ड़

कुछ लोग 'ण' के स्थान पर 'ड़' बोलते हैं। इस अशुद्धि का भी ध्यान रखना चाहिए। कुछ ध्यान रखने योग्य शब्द हैं : भूषण, गुण, प्राण, गणना, प्रणाम, अगणित, कण।

य —ज

बहुत से लोग 'य' के स्थान पर 'ज' बोलने की गलती करते हैं। पीछे बताया जा चुका है कि यह गलती क्यों हो जाती है। ये हैं कुछ शब्द जिनके उच्चारण में यह गलती प्रायः होती है : यदि, यज्ञ, यद्यपि, यजमान, यमुना, योग्य, योग्यता, यशोदा, यश, यत्र, युग, यात्रा, अयोध्या, संयोग, मर्यादा, अयोग्य आदि।

व—ब

बहुत से लोग 'व' के स्थान पर 'ब' बोलने की गलती करते हैं। इसका कारण भी पीछे बताया जा चुका है। ये हैं कुछ शब्द जिनमें यह अशुद्धि प्रायः हो जाती है : वश, वंशी, वक्तव्य, वचन, वध्य, वटी, वणिक, वदन, वध, वधिक, वन, वनस्पति, वंदना, वध्या, वर्तनी, वर्ग, वर्ष, वय, वयोवृद्ध, वस्त्र, वसंत, वर्षा, वर, वरदान, वक्ता, वर्तमान, वरिष्ठ, वर्ण, वर्णन, वस्तु, वस्त्र, वाटिका, वार्ता, विकट, विकास, विचार, विचित्र, विज्ञान, विज्ञापन आदि।

श—स

बहुत से लोग 'श' के स्थान पर 'स' बोलते हैं। यह अशुद्धि पश्चिमी बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश में प्रायः होती है। इस अशुद्धि वाले कुछ शब्द हैं : शायद, शहर, शोर, शरीर, शरीफ़, शर्त, शरबत, शक्ति, शांति, शाल, शब्द, शब्दकोश, शिला, शून्य, शूट, शतदल, शताब्दी, शिक्षा, शंका, शंख, शक, शत्रु, शत्रुता, शपथ, शरणार्थी, शरण, शव, शस्त्र, शाकाहारी, शास्त्र, शिष्ट, शीघ्र, शुद्ध, शृंगार, शैतान, शोभा, शौक, श्रद्धा, श्री, श्रेष्ठ, श्वेत।

'महत्त्व' के स्थान पर 'महत्व', 'उज्ज्वल' के स्थान पर 'उज्वल','सद्‌गुण' के स्थान पर 'सतुण', 'शरच्चन्द्र' के स्थान पर 'शरत्चन्द्र', 'अन्तःकथा' के स्थान पर 'अंतर्कथा', 'अंतःसाक्ष्य' के स्थान पर 'अंतर्साक्ष्य', 'बहिःसाक्ष्य' के स्थान पर 'बहिर्साक्ष्य', 'नीरोग' के स्थान पर 'निरोग', 'दवाइयों' के स्थान पर 'दवाईयों', 'विद्यार्थियों' के स्थान पर 'विद्यार्थीयों', 'डाकुओं' के स्थान पर 'डाकूओं' लिखने की अशुद्धि इसी के उदाहरण है। उच्चारण पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

(ई) शब्द-रचना की जानकारी का अभाव

शब्द-रचना का ठीक ज्ञान न होने से भी वर्तनी की भूलें हो जाती हैं। उदाहरण के लिए 'इक' प्रत्यय लगने पर पहले अक्षर में :

अ का आ : समाज—सामाजिक, अध्यात्म—आध्यात्मिक, शरीर—शारीरिक।

इ का ऐ : विदेश—वैदेशिक, इतिहास—ऐतिहासिक, दिन—दैनिक।

ई का ऐ : नीति—नैतिक।

उ का औ : पुराण—पौराणिक।

ऊ का औ : भूगोल—भौगोलिक, मूल—मौलिक।

ए का ऐ : वेद—वैदिक, सेना—सैनिक।

ओ का औ : लोक—लौकिक।

हो जाता है। इस नियम का ध्यान न रखने वाले प्रायः सप्ताहिक, समाजिक, वेदिक, लोकिक, इतिहासिक जैसे शब्द लिखने की अशुद्धि कर जाते हैं। इसका प्रभाव उच्चारण पर भी पड़ता है।

श्रमिक, क्रमिक आदि कुछ शब्द अपवाद भी हैं।

(उ) वर्तमान उच्चारण का प्रभाव

आज का हिंदी उच्चारण परंपरागत वर्तनी से बहुत बदल गया है। इसका परिणाम यह होता है उच्चारण के अनुसार लिखने पर भी वर्तनी की अशुद्धि हो जाती है। 'साहित्यिक' के स्थान पर 'साहित्तिक', 'करता' के स्थान पर 'कर्ता', 'सकता' के स्थान पर 'सक्ता', 'चलना' के स्थान पर 'चल्ना', 'कृतज्ञ' के स्थान पर 'क्रितग्य', 'कृपा' के स्थान पर 'क्रिपा','ज्ञान' के स्थान पर 'ग्यान', 'प्रायः' के स्थान पर 'प्रायह्', 'दोष' के स्थान पर 'दोश', 'ऋण' के स्थान पर 'रिड़्' आदि इसी श्रेणी की अशुद्धियाँ हैं।

(ऊ) अशुद्ध उच्चारण का प्रभाव

ग़लत उच्चारण के कारण भी वर्तनी में अनेक प्रकार की भूलें हो जाती हैं। इसके लिए पीछे का उच्चारण वाला अंश ध्यान से देखना चाहिए। 'प्रसाद' का 'प्रशाद' या 'परशाद'; 'नमस्कार' का 'नमश्कार' ऐसी ही अशुद्धियाँ हैं। इस वर्ग की अशुद्धियों में 'व' का 'ब' (विद्यार्थी—बिद्यार्थी), 'श' का 'स' (शहर—सहर), 'क़' का 'क' (क़ानून—कानून), 'ख़' का 'ख' (अख़बार—अखबार), 'ग़' का 'ग' (ग़रीब—गरीब), 'ज़' का 'ज' (ज़रूर—जरूर), 'फ़' का 'फ' (फ़ौरन—फौरन), 'ऑ' का 'आ' (डॉक्टर—डाक्टर), 'क्ष' का 'छ' (क्षत्रिय—छत्रिय), 'छ' का 'क्ष' (छात्र—क्षात्र), 'इ' का 'ई' (भक्ति—भक्ती), 'उ' का 'ऊ' (वस्तु—वस्तू) आदि और भी हो सकते हैं जो पीछे उच्चारण के प्रसंग से संकेतित हैं।

(ऋ) हिंदी ध्वनि-व्यवस्था के ज्ञान का अभाव

ङ, ञ, ण, ड़, ढ़ व्यंजन शब्द के आदि में नहीं आते। इसका ज्ञान न होने से भी वर्तनी में भूल हो जाती है। ड़ाली, ढ़ोल जैसे शब्द इसी के परिणाम हैं।

ऊपर वर्तनी-विषयक ऐसी अशुद्धियों को लिया गया है जो विद्यार्थियों तथा सामान्य जनता के लेखन में मिलती है। अब कुछ ऐसी बातें ली जा रही हैं जो पढ़े-लिखे लोगों के भी ध्यान रखने और जानने की है :

(अ) मिलाना-अलगाना

हिंदी लेखन में शिरोरेखा लगाते हैं, अतः वर्तनी की यह भी एक समस्या है कि किन शब्दों को मिलाकर लिखें और किन्हें अलगाकर लिखें। उदाहरण के लिए 'रामने' लिखें अथवा 'राम ने' या 'राज भवन' लिखें अथवा 'राजभवन'। ऐसे पदों अथवा शब्दों के लेखन में हिंदी में एकरूपता नहीं है। इस समस्या को निम्नांकित वर्गों में रखा जा सकता है :

(1) कारक-चिह्न—कारक-चिह्नों को लिखने के संबंध में आजकल तीन पद्धतियाँ प्रचलित हैं। (अ) कुछ लोग संज्ञा और सर्वनाम, दोनों ही के साथ कारक-चिह्नों को मिलाकर लिखते हैं : रामने, मैंने; मोहनको, तुमको; सीतासे, इससे। (आ) कुछ लोग दोनों ही स्थितियों में कारक-चिह्नों को अलग रखते हैं : राम ने, मैं ने; मोहन को, तुम को; सीता से, इस से। (इ) सामान्य लोग संज्ञा के साथ तो इन्हें मिलाकर नहीं लिखते, किंतु सर्वनाम के साथ मिलाकर लिखते हैं : राम ने, मैंने; मोहन को, तुमको; सीता से, इससे।

वस्तुतः वैज्ञानिक दृष्टि से तो संज्ञा तथा सर्वनाम दोनों के साथ ने, को, से, का, के, में, को अलग लिखना ठीक है, क्योंकि ने, को आदि की शब्द के रूप में स्वतंत्र सत्ता है, और स्वतंत्र शब्दों से ये विकसित भी हैं, किंतु इन रूपों में इन्हें

अलग लिखने वाले बहुत कम हैं। ऐसी स्थिति में यही उचित है कि उन्हें संज्ञा के साथ अलग तथा सर्वनाम के साथ मिलाकर लिखा जाए। इसके पक्ष में कई तर्क दिए जा सकते हैं : (क) अधिकांश लोग इन्हें इसी रूप में लिखते हैं। (ख) संज्ञा तथा सर्वनाम दोनों के साथ मिलाकर लिखना तो उपर्युक्त तीनों पद्धतियों में सबसे अवैज्ञानिक है। केवल संस्कृत का अंधानुकरण करने वाले ही ऐसा करते हैं। अतः संज्ञा के साथ अलग तथा सर्वनाम के साथ मिलाकर लिखना कम-से-कम उतना अवैज्ञानिक न होकर मध्यम मार्ग तो है। (ग) यदि कई संज्ञा शब्द साथ आएं तो केवल अंतिम के साथ कारक-चिह्न लगता है, अतः अलगाकर लिखना आवश्यक हो जाता है (जैसे—राम, मोहन और सीता ने...) नहीं तो वह केवल एक का कारक-चिह्न लगेगा, इसके विपरीत सर्वनाम में प्रायः सभी के साथ लगता है (जैसे—उसने, तुमने और मैंने...) अतः मिलाकर लिखा जा सकता है। (घ) संज्ञा के साथ कभी-कभी इकहरा अवतरण-चिह्न लगता है अतः मिलाकर नहीं लिखा जा सकता ('अज्ञेय' ने, 'हरिऔध' को, 'निराला' में, 'प्रसाद' से) किंतु सर्वनाम के साथ प्रायः ऐसा नहीं करना पड़ता, अतः मिलाकर लिखा जा सकता है। (ङ) सर्वनाम के संयुक्त रूप मिलते हैं (मुझे, हमें, तुम्हें, तुझे, उसे, उन्हें, इसे, इन्हें, जिसे, जिन्हें आदि) अतः अन्य रूपों को संयुक्त रखना, इन रूपों के अनुरूप है, किंतु संज्ञा के ऐसे रूप नहीं मिलते अतः इसके रूपों का असंयुक्त होना उसकी प्रकृति के अनुरूप है।

(2) समस्त पद—समस्त पदों को अलग-अलग लिखना (गृह विज्ञान, देश भक्ति, जन्म दिन) अशुद्ध है, क्योंकि ये किसी 'लंबी रचना' (गृह का विज्ञान, देश के प्रति भक्ति, जन्म का दिन) के संक्षिप्त रूप होते हैं। संक्षेप होने के कारण या तो लुप्त पद का प्रतीक योजक चिह्न इनके बीच में दिया जाना चाहिए (गृह-विज्ञान, देश-भक्ति, जन्म-दिन) अथवा इन्हें मिलाकर लिखना चाहिए (गृहविज्ञान, देशभक्ति, जन्मदिन)। दो से अधिक शब्द हों (तन-मन-धन से) अथवा शब्द बड़े हों (राजनीति-विज्ञान) तो योजक चिह्न देना ही अधिक उपयुक्त होता है, क्योंकि मिलाने से शब्द अधिक बड़ा (राजनीतिविज्ञान) हो जाता है। संधि करने पर तो स्पष्ट ही शब्दों को मिलाने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रह जाता है : शिरोरेखा, जिलाधीश, ग्रामोन्नति, वियोगावस्था, ग्रीष्मावकाश। दो अपवाद हैं : (क) द्वन्द्व समास में केवल योजक चिह्न देना चाहिए (माता-पिता, भाई-बहन, हँसी-मज़ाक, हाथ-पैर), उन्हें मिलाकर (मातापिता) नहीं लिखना चाहिए। (ख) मिलाने से यदि अर्थ में भ्रम की गुंजाइश हो तो मिलाना [illegible] । उदाहरण के लिए 'भू-तत्त्व' और 'भूतत्त्व' में अंतर करने के लिए '[illegible] लिखना ही उचित है।

(3) श्री, तो [illegible] श्री, श्रीमती, [illegible] मिलाए अलग [illegible]

लिखे जाने चाहिए : राम भी, रोटी तो, पानी तक नहीं दिया, सेर भर आटा, श्री गुप्त, गांधी जी।

(4) ही— इसे संज्ञा के साथ अलग (राम ही, सीता ही); किंतु सर्वनाम के साथ कुछ शब्दों के साथ मिलाकर (हमी, मुझी, तुझी, तुम्ही, उसी, उन्ही, इसी, इन्हीं, जिसी, जिन्हीं, किसी, किन्ही आदि); तथा कुछ के साथ अलग (मैं ही, हम ही, वे ही, ये ही, जो ही) लिखते हैं।

(5) कर, के—पूर्वकालिक क्रिया मे 'कर' अथवा 'के' को मिलाकर लिखना चाहिए : मैं खाकर आया हूँ, रोकर, चलकर, काम करके आयेगा। यदि 'कर' तथा 'के' दोनों हों तो 'कर' मिलाकर लिखा जाएगा, तथा 'के' को अलग—मैं खाकर के आऊँगा। यदि दो क्रिया रूप हों तो दोनों के बीच मे योजक-चिह्न होगा तथा 'कर' अथवा 'के' अंतिम के साथ मिलाया जाएगा : खा-पीकर आना, रो-धोके थक गया।

(अ) योजक-चिह्न—इसका प्रयोग निम्नांकित स्थितियों मे होता है : (1) द्वन्द्व समास में—रात-दिन, हवा-पानी, माँ-बाप। (2) अन्य समासों में विकल्प से—देशभक्ति अथवा देश-भक्ति। (3) सा, से, सी, जैसा, जैसे, जैसी के साथ—फूल-सा लड़का, जरा-सी जान, थोड़े-से लोग, तुम-जैसा धूर्त, उस-जैसा नेता, दुग्ध-सा श्वेत। यह ध्यान देने की बात है कि यह 'से', करण तथा संप्रदान कारक का चिह्न 'से' से भिन्न है। कारक-चिह्न 'से' में वचन-लिंग के कारण परिवर्तन नही होता, किंतु इसके सा-से-सी रूप बनते हैं। (4) जहाँ संधि करने से अर्थ परिवर्तित हो जाय—सह-अनुभूति, सहानुभूति। (5) जहाँ संधि करने से शब्द उच्चारण की दृष्टि से अटपटा बड़ा अथवा अस्पष्ट हो जाय : अल्पसंख्यक और बहु-अल्पसंख्यक, उनकी अति-आदर्शवादिता। (6) न के साथ—कभी-न-कभी, कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी।

(आ) वैकल्पिक य

हिंदी मे कुछ संज्ञा, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय शब्दों में 'य' का विकल्प से प्रयोग मिलता है।

संज्ञा— (1) पहिए—पहिये (पहिया)
किराए—किराये (किराया)
रुपए—रुपये (रुपया)
चौपाए—चौपाये (चौपाया)
(2) खोए—खोये (खोया)
(3) लताएँ—लतायें
वस्तुएँ—वस्तुयें

महिलाएं—महिलायें
माताएँ—मातायें

विशेषण—(1) नए—नये (नया)
(2) नई—नयी (नया)

क्रिया — (1) गए—गये (गया)
(2) आए—आये (आया)
पाए—पाये (पाया)
खाए—खाये (खाया)
पढाए—पढ़ाये (पढाया)
(3) किए—किये (किया)
दिए—दिये (दिया)
लिए—लिये (लिया)
(4) खेए—खेये (खेया)
सेए—सेये (सेया)
(5) भिगोए—भिगोये (भिगोया)
सोए—सोये (सोया)
खोए—खोये (खोया)
(6) गई—गयी (गया)
(7) आई—आयी (आया)
पाई—पायी (पाया)
(8) खेई—खेयी (सेया)
(9) भिगोई - भिगोयी (भिगोया)
(10) खाएँ—खायें (खाया)
कमाएँ—कमायें (कमाया)
(11) गई—गयी (गया)
(12) आई—आयी (आया)
(13) रोई—रोयी (रोया)
(14) जाइए—जाइये
खाइए—खाइये
(15) कीजिए—कीजिये
लीजिए—लीजिये
होइए—होइये

(16) आएगा—आयेगा
जाएगा—जायेगा

अव्यय— लिए—लिये

अर्थात् अ, आ, इ, ए, ओ के बाद ई, ई, ए, ऍ आदि हों तो विकल्प से 'य' का प्रयोग हिंदी में हो रहा है। इसके मूल में कारण यह है कि 'अ' और 'आ' (गया), 'आ' और 'आ' (दिखाया), 'ए' और 'आ' (सैया), तथा 'ओ' और 'आ' (भिगोया) के बीच 'य' का प्रयोग होता है। इनमें इस 'य' का प्रयोग इसलिए उचित है कि उच्चारण करते समय यह उच्चरित होता है। यदि 'य' बीच में न लाया जाए तो उच्चारण करने में कठिनाई होती है। ऐसी स्थिति में 'आ' के पूर्व 'य' लिखा जाना चाहिए।

जहां तक ई, ई, ए, ऍ के पूर्व 'य' लाने की बात है उसके पक्ष में कोई तर्क नही है। दो ही आधार हो सकते हैं:

(क) उच्चारण मे 'य' होता। किंतु हम देखते हैं कि वास्तविक उच्चारण गए, आए, आई, रोई आदि होता है, न कि गये, आये, आयी, रोयी का। अत: उच्चारण में इस 'य' की सत्ता नहीं है।

(ख) व्याकरणिक दृष्टि से प्रत्यय रूप में यी, यी, ये, यें, आदि होते। किंतु हम पाते हैं कि इनमे व्याकरण का प्रत्यय ई, ईं, ए, ऍ है। देखी, देखी, देखे, देखें, अथवा दौडी, दौड़ी, दौड़े, दौड़ें जैसे रूपों से यह बात स्पष्ट है।

इस तरह जब ऐसे शब्दों मे 'य' की सत्ता न तो उच्चारण में है और न प्रत्यय रूप में तो उसका प्रयोग समीचीन नहीं है।

निष्कर्षत: अ, आ, इ, ए, ओ के बाद आ आए तब तो 'य' का प्रयोग होना चाहिए, किंतु अ, आ, इ, ए, ओ के बाद ई, ई, ए, ऍ हों तो य का प्रयोग न करके केवल ई, ई, ए, ऍ का ही प्रयोग करना चाहिए।

(इ) य, व—य्य, व्व

नय्या, गवय्या, वय्याकरण, तय्यार, कव्वा, हव्वा रूप मे इन शब्दों को लिखना गलत है, यद्यपि कुछ लोग इन्हें इसी रूप में लिखते है। इनकी ठीक वर्तनी नैया, गवैया, वैयाकरण, तैयार, कौवा अथवा कौआ तथा हौवा अथवा हौआ है। किंतु इसके विपरीत 'शैया' लिखना अशुद्ध है, ठीक वर्तनी 'शय्या' है। ऐसे ही 'फ़व्वारा' शुद्ध है, 'फौवारा' नहीं।

ऋ —र

कुछ लोग कुछ शब्दों में 'ऋ' के स्थान पर 'र' का प्रयोग करने की गलती करते हैं :

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
कृष्ण	क्रष्ण	कृपया	क्रपया
कृपा	क्रपा	दृष्टि	द्रष्टि
सृष्टि	स्रष्टि	वृष्टि	व्रष्टि

कुछ शब्दों में मूलतः 'र' होता है किंतु उनसे बनने वाले शब्दों में 'र' का 'ऋ' हो जाता है :

मूल	बनने वाला शुद्ध रूप	अशुद्ध रूप
अनुग्रह	अनुगृहीत	अनुग्रहीत
ग्रहण	गृहीत	ग्रहीत

इसके विपरीत—

मूल	बनने वाला शुद्ध रूप	अशुद्ध रूप
दृष्टि	द्रष्टव्य	दृष्टव्य
सृष्टि	स्रष्टा	सृष्टा
दृष्टि	द्रष्टा	दृष्टा

लेखन में इनका ध्यान रखना चाहिए। (दे० पीछे लिपि का समुचित ज्ञान न होना।)

हल् चिह्न

संस्कृत में कुछ शब्दों के अंत में हल् चिह्न (जैसे—क्) लगाए जाते हैं। जैसे —साक्षात्, सन्, चित्, अकस्मात्, अलम्, भगवत्, ईषत्, तिर्यक्, पश्चात्, सम्यक्, दिक्, स्वयम्, हठात्, अर्थात्, संयोगवशात्, दैवात्, रूपवान्, महान्,

गुणवान्, लक्ष्मीवान्, विद्युत्, सुहृद्, भगवान्, हनुमान्, श्रीमान्, श्रीमन्, परिषद्, उपनिषद्, संसद्, विद्वत्, वृहद्, जगत्, वणिक्, सम्राट् आदि।

हिंदी में इन्हें हलंत रूप में ही लिखना चाहिए। कुछ लोगों का कहना है कि इन्हें हलंत लिखने की आवश्यकता नहीं। किंतु ऐसा करने से संधि में गलती की संभावना रहेगी। उदाहरण के लिए वृहद् को वृहद लिखने पर 'वृहद्काय' लिखे जाने की संभावना रहेगी, जबकि होना चाहिए वृहत्काय। ऐसे ही, वृहदाकार, न कि 'वृहताकार' अथवा 'वृहत्सभा' न कि 'वृहद्सभा' अथवा 'विद्वत्समाज' किंतु 'विद्वद्वर' अथवा 'दिक्पात' किंतु 'दिग्गज, तथा 'संसत्सदस्य' किंतु 'संसदोचित' आदि।

एक बात और। बहुत से लोग गलती से प्रथम, पंचम, सप्तम, अष्टम, दशम आदि क्रमवाचक, संख्यावाचक शब्द में 'हल्' का चिह्न लगाते हैं किंतु वस्तुतः हल् चिह्न लगाया नहीं जाना चाहिए। ये बिना हल् के होते हैं।

इसी तरह सुंदरतम, अधिकतम, अल्पतम, न्यूनतम आदि 'तम' वाले शब्दों में भी हल् का चिह्न नहीं लगता।

संस्कृत वर्तनी का 'य'

बहुत से तत्सम शब्दों में परंपरागत रूप से 'य' लिखा जाता है, यद्यपि उन शब्दों में 'य' का उच्चारण होता नहीं। जैसे स्थायी, उत्तरदायी, धराशायी, वाजपेयी, स्थायित्व, उत्तरदायित्व आदि। इनका वास्तविक उच्चारण स्थाई, उत्तरदाई, धराशाई, वाजपेई, स्थाइत्व, उत्तरदाइत्व है किंतु इनको लिखने में 'य' का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

5

शब्द-रचना

हिंदी में शब्द-रचना तीन प्रकार से होती है :

(क) उपसर्ग-द्वारा
(ख) प्रत्यय-द्वारा
(ग) समास-द्वारा

उपसर्ग शब्द के आरंभ में जोड़े जाते हैं तथा प्रत्यय शब्द के बाद में। समास में दो अथवा अधिक शब्द एक साथ जोड़े जाते हैं। उपसर्ग, प्रत्यय तथा समास द्वारा शब्द-रचना में मुख्य रूप से गलती संधियों की होती है। उदाहरण के लिए पुनः + जन्म = पुनःजन्म न होकर 'पुनर्जन्म' होगा। ऐसे ही अंत + सलिला का योग 'अंतस्सलिला' होगा किंतु अंतः + करण का अंतःकरण और अंतः + दशा का अंतर्दशा; अथवा 'दुः + चरित्र का दुश्चरित्र, किंतु दुः + दशा का 'दुर्दशा' और 'दुः + कर्म' का 'दुष्कर्म'। अर्थात् जोड़ने पर परिवर्तन अलग-अलग ध्वनियों के साथ अलग-अलग प्रकार के होते हैं। इसीलिए शब्द-रचना के लिए संधियों के नियमों का ज्ञान बहुत आवश्यक है। यहां संधि के मुख्य नियम दिए जा रहे हैं।

संधि

'संधि' यों तो व्याकरण का विषय है, किंतु इसका उचित ज्ञान न होने से शब्द-रचना, लेखन तथा उच्चारण, इन तीनों में ही गलतियों के होने की संभावना रहती है।

'संधि' शब्द का अर्थ है 'जोड़' या 'मिलना'। जब 'दो शब्द' (राम + अवतार = रामावतार) 'उपसर्ग और शब्द' (सु + आगत = स्वागत) अथवा 'शब्द और

प्रत्यय' (काला + इमा = कालिमा) आदि एक दूसरे से मिलते हैं और मिलने के कारण ध्वनि अथवा ध्वनियों में परिवर्तन या विकार होता है, तो इसको संधि कहते हैं।

हिंदी में दो प्रकार की सधियों का प्रयोग होता है :

(1) संस्कृत की संधियाँ,
(2) हिंदी की सधियाँ।

संस्कृत की संधियाँ

संस्कृत मे सधियाँ तीन प्रकार की मानी गई हैं —

(1) स्वर-संधि— इसमे मिलने वाली दोनों ध्वनियाँ स्वर होती है। जैसे— हिम (बर्फ़) + आलय (घर) = हिमालय।
(2) व्यंजन-संधि—इसमें पहली ध्वनि व्यंजन होती है और दूसरी स्वर या व्यजन। जैसे—जगत् + ईश = जगदीश, तत् + लीन = तल्लीन।
(3) विसर्ग-संधि—इसमे पहली ध्वनि विसर्ग होती है और दूसरी स्वर या व्यंजन। जैसे—दु: + आचार = दुराचार, मन: + रजन = मनोरंजन।

स्वर-संधि

स्वर-संधियाँ चार प्रकार की होती हैं—

(1) दीर्घ सधि, (2) गुण संधि, (3) वृद्धि सधि, (4) यण् संधि।

(अ) दीर्घ संधि—अ अथवा आ के बाद अ अथवा आ हो तो दोनों मिलकर 'आ', इ, ई के बाद इ, ई हो तो दोनो मिलकर 'ई'; तथा उ, ऊ के बाद उ, ऊ हो तो दोनो मिलकर 'ऊ' हो जाते है। इस संधि का परिणाम दीर्घ स्वर होता है, अत: इसे दीर्घ सधि कहते है। उदाहरण हैं —

अ + अ = आ

स्व + अधीन = स्वाधीन   परम + अणु = परमाणु
देश + अभिमान = देशाभिमान   सर्व + अधिक = सर्वाधिक

परम + अर्थ = परमार्थ
धर्म + अर्थ = धर्मार्थ
भाव + अर्थ = भावार्थ
वेद + अन्त = वेदांत
देह + अंत = देहांत
तरुण + अवस्था = तरुणावस्था

अ + आ = आ

शिव + आलय = शिवालय
रत्न + आकर = रत्नाकर
गुण + आगार = गुणागार
हिम + आलय = हिमालय
धर्म + आत्मा = धर्मात्मा
सचिव + आलय = सचिवालय
छात्र + आलय = छात्रालय
छात्र + आवास = छात्रावास

आ + अ = आ

रेखा + अंश = रेखांश
शिक्षा + अर्थी = शिक्षार्थी
विद्या + अर्थी = विद्यार्थी
परीक्षा + अर्थी = परीक्षार्थी
दीक्षा + अंत = दीक्षांत

आ + आ = आ

विद्या + आलय = विद्यालय
महा + आशय = महाशय
वार्ता + आलाप = वार्तालाप

इ + इ = ई

अभि + इष्ट = अभीष्ट
गिरि + इन्द्र = गिरीन्द्र
कवि + इन्द्र = कवीन्द्र
रवि + इन्द्र = रवीन्द्र
कपि + इन्द्र = कपीन्द्र
अति + इव = अतीव

इ + ई = ई

कपि + ईश = कपीश
गिरि + ईश + गिरीश
हरि + ईश = हरीश
मुनि + ईश्वर = मुनीश्वर

ई + इ = ई

मही + इन्द्र = महीन्द्र

ई + ई = ई

जानकी + ईश = जानकीश
नदी + ईश = नदीश
रजनी + ईश = रजनीश

उ अथवा ऊ + उ अथवा ऊ = ऊ

भानु + उदय = भानूदय	विधु + उदय = विधूदय
गुरु + उपदेश = गुरूपदेश	सु + उक्ति = सूक्ति
वधू + उत्सव = वधूत्सव	सिंधु + ऊर्मि = सिंधूर्मि
लघु + ऊर्मि = लघूर्मि	बहु + उद्देश्य = बहूद्देशीय
लघु + उपदेश = लघूपदेश	

(आ) गुण संधि—अ, आ के बाद इ, ई हो तो दोनों मिलकर 'ए', अ, आ, के बाद उ, ऊ हो तो दोनों मिलकर 'ओ' तथा अ, आ के बाद ऋ हो तो दोनो मिलकर 'अर' हो जाते है। संस्कृत मे अ, ए, ओ को 'गुण' कहते है, इसीलिए यह नाम पड़ा है।

अ अथवा आ + इ अथवा ई = ए

गण + ईश = गणेश	दिन + ईश = दिनेश
स्व + इच्छा = स्वेच्छा	नर + इन्द्र = नरेन्द्र
सुर + ईश = सुरेश	मृग + इन्द्र = मृगेन्द्र
महा + इन्द्र = महेन्द्र	गंगा + ईश्वर = गंगेश्वर
महा + ईश = महेश	राका + ईश = राकेश
नर्मदा + ईश्वर = नर्मदेश्वर	परम + ईश्वर = परमेश्वर
यथा + इष्ट = यथेष्ट	लंका + ईश = लंकेश
भारत + इन्दु = भारतेन्दु	पूर्ण + इन्दु = पूर्णेन्दु

अ अथवा आ + उ अथवा ऊ = ओ

वीर + उचित = वीरोचित	चंद्र + उदय = चंद्रोदय
सूर्य + उदय = सूर्योदय	सर्व + उपयोगी = सर्वोपयोगी
पर + उपकार = परोपकार	गंगा + उदक = गंगोदक
हित + उपदेश = हितोपदेश	वीर + उचित = वीरोचित
मद + उन्मत्त = मदोन्मत्त	उत्तर + उत्तर = उत्तरोत्तर
अछूत + उद्धार = अछूतोद्धार	पर + उपदेश = परोपदेश
	महा + उत्सव = महोत्सव

अ अथवा आ + ऋ = अर्

ब्रह्म + ऋषि = ब्रह्मर्षि	
महा + ऋषि = महर्षि	देव + ऋषि = देवर्षि

सप्त + ऋषि = सप्तर्षि　　　　राज + ऋषि = राजर्षि

(इ) वृद्धि-संधि—अ अथवा आ के बाद ए अथवा ऐ हो तो दोनों को मिलाकर 'ऐ' तथा अ अथवा आ के बाद ओ अथवा औ हो तो दोनों को मिलाकर 'औ' हो जाता है। संस्कृत व्याकरण में ऐ, औ को 'वृद्धि' कहते हैं, अतः यह नाम पड़ा है। जैसे—

अ अथवा आ + ए अथवा ऐ = ऐ

सदा + एव = सदैव	लोक + एषणा = लोकैषणा
मत + ऐक्य = मतैक्य	यथा + एव = यथैव
तथा + एव = तथैव	महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य

अ अथवा आ + ओ अथवा ओ अथवा औ = औ

महा + औषध + महौषध	परम + औषध = परमौषध
अधर + ओष्ठ + अधरौष्ठ	वन + औषधि = वनौषधि
दंत + ओष्ठ = दंतौष्ठ	

(ई) यण संधि—इ अथवा ई के बाद इ और ई को छोड़कर यदि कोई अन्य स्वर हो तो इ अथवा ई के स्थान पर 'य्'; उ अथवा ऊ के बाद उ और ऊ को छोड़कर कोई अन्य स्वर हो तो उ अथवा ऊ के स्थान पर 'व्', और 'ऋ' के बाद ऋ को छोड़कर कोई अन्य स्वर हो तो 'ऋ' के स्थान पर 'र्' हो जाता है। जैसे—

'इ' के स्थान पर 'य्'

यदि + अपि = यद्यपि	प्रति + उपकार = प्रत्युपकार
अभि + उदय = अभ्युदय	प्रति + एक = प्रत्येक
इति + आदि = इत्यादि	स्त्री + उपयोगी = स्त्र्युपयोगी[1]
गति + अवरोध = गत्यवरोध	प्रति + उत्तर = प्रत्युत्तर
उपरि + उक्त = उपर्युक्त	

'उ' के स्थान पर 'व्'

सु + आगत = स्वागत	वधू + आगमन = वध्वागमन
सु + अल्प = स्वल्प	अनु + एषण = अन्वेषण

1. हिंदी में इसका 'स्त्रियोपयोगी' रूप चलता है।

मनु + अन्तर = मन्वन्तर

'ऋ' के स्थान पर 'र्'

पितृ + आज्ञा = पित्राज्ञा　　　पितृ + अनुमति = पित्रनुमति

व्यंजन संधि

मुख्य व्यंजन-संधियां निम्नांकित हैं—

(1) त् के बाद यदि च, छ, हो तो त् के स्थान पर ज्' हो जाता है। जैसे—

शरत् + चन्द्र = शरच्चन्द्र　　सत् + चित् = सच्चित् (सच्चिदानंद)
उत् + चारण = उच्चारण　　सत् + चरित्र = सच्चरित्र

(2) त् के बाद ज या झ हो तो 'त्' के स्थान पर 'ज्' हो जाता है। जैसे—

सत् + जन = सज्जन　　　विपत् + जाल = विपज्जाल
तत् + जन्य = तज्जन्य　　　जगत् + जाल = जगज्जाल
तत् + जनित = तज्जनित　　उत् + ज्वल = उज्ज्वल
जगत् + जननी = जगज्जननी

(3) त् के बाद ड या ढ हो तो त् के स्थान पर 'ड्'; ट,ठ, हो तो 'ट्'; 'ल' हो तो 'ल्' हो जाता है। जैसे—

उत् + डयन = उड्डयन　　　उत् + लास = उल्लास
वृहद् + टीका = वृहट्टीका　　तत् + लीन = तल्लीन
　　　　　　　　　　उत् + लेख = उल्लेख

(4) त् के बाद यदि 'श' हो तो 'त्' के स्थान पर च् और 'श्' के स्थान पर 'छ'; यदि 'त्' के बाद 'ह' हो तो 'त्' का 'द्' और 'ह्' का 'ध्' हो जाता है। जैसे—

सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र　　　उत् + हार = उद्धार
उत् + श्वास = उच्छ्वास　　　तत् + हित = तद्धित
उत् + शिष्ट = उच्छिष्ट

(5) क्, च्, ट्, त्, प् के बाद यदि घोष ध्वनि (कोई स्वर, वर्ग का तीसरा, चौथा व्यंजन, अथवा य, र, ल, व, ह में से कोई भी वर्ण) हो तो 'क्' का 'ग्'; 'च्' का 'ज्'; 'ट्' का 'ड्'; 'त्' का 'द्' और 'प' का 'ब्' हो जाता है; अर्थात् अघोष व्यंजन (क्, च्, ट्, त्, प्), घोष (ग, ज, ड, द, ब) व्यंजन हो जाते हैं।

दिक् + अम्बर = दिगम्बर	श्रीमत् + भागवत = श्रीमद्भागवत
दिक् + गज = दिग्गज	तत् + भव = तद्भव
दिक् + दर्शन = दिग्दर्शन	सत् + भावना = सद्भावना
वाक् + ईश = वागीश	कृत् + अन्त = कृदन्त
वाक् + जाल = वाग्जाल	जगत् + ईश = जगदीश
दिक् + अंचल = दिगंचल	उत् + घाटन = उद्घाटन
षट् + दर्शन = षड्दर्शन	शरत् + इन्दु = शरदिन्दु
षट् + आनन = षडानन	अप् + ज = अब्ज
भगवत् + गीता = भगवद्गीता	दृक् + अश्रु = दृगश्रु
चित् + आनंद = चिदानंद (सच्चिदानंद)	

(6) क्, च्, ट्, त्, प् के बाद यदि 'म' या 'न' हो तो, 'क्' का 'ङ्'; 'च्' का 'ञ्'; 'ट्' का 'ण्'; 'त्' का 'न्' और 'प्' का 'म्' हो जाता है। जैसे—

वाक् + मय = वाङ्मय	षट् + मुख = षण्मुख
दिक् + नाग = दिङ्नाग	जगत् + नाथ = जगन्नाथ
षट् + मास = षण्मास	तत् + मय = तन्मय
उत् + नयन = उन्नयन	सत् + मार्ग = सन्मार्ग
उत् + मत्त = उन्मत्त	उत् + नायक = उन्नायक
चित् + मय = चिन्मय	

(7) 'म्' के बाद यदि कोई स्पर्श व्यंजन हो तो 'म्' के स्थान पर उसी वर्ग का अंतिम वर्ण (विकल्प में अनुस्वार) हो जाता है। जैसे—

सम् + कल्प = सङ्कल्प (संकल्प)	सम् + ध्या = सन्ध्या (संध्या)
हृदयम् + गम = हृदयङ्गम (हृदयंगम)	सम् + तोष = सन्तोष (संतोष)
सम् + गति = सङ्गति (संगति)	सम् + भव = सम्भव (संभव)
सम् + चय = सञ्चय (संचय)	सम् + पूर्ण = सम्पूर्ण (संपूर्ण)
सम् + जय = सञ्जय (संजय)	सम् + भाषण = सम्भाषण (संभाषण)

(8) 'म्' के बाद यदि य, र, ल, व, स, श, ह हो तो 'म्' का अनुस्वार हो जाता है। जैसे—

सम्+योग=संयोग
सम्+वाद=संवाद
सम्+लग्न=संलग्न
सम्+रक्षक=संरक्षक
सम्+सार=संसार
सम्+शय=संशय
सम्+हार=संहार

(अपवाद—यदि सम के बाद 'राट्' शब्द हो तो 'म्' का 'म्' ही रहता है: सम्+राट=सम्राट।)

(9) 'छ' से पूर्व स्वर हो तो छ से पूर्व 'च्' आ जाता है। जैसे—

परि+छेद=परिच्छेद
अनु+छेद=अनुच्छेद
वृक्ष+छाया=वृक्षच्छाया
वि+छेद=विच्छेद
आ+छादन=आच्छादन

(10) ऋ, र, ष के बाद 'न्' हो, और इनके बीच में स्वर, कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार, य, र, ल, व, ह आदि का व्यवधान हो तो भी 'न्' का 'ण्' हो जाता है। जैसे—

परि+नाम=परिणाम
राम+अयन=रामायण
परि+मान=परिमाण
मृत्+मय=मृन्मय (मृण्मय)
प्र+मान=प्रमाण
भूष+अन=भूषण
शोष+अन=शोषण

(11) 'स' के पहले यदि अ, आ के अतिरिक्त कोई स्वर हो तो 'स' का 'ष' हो जाता है। जैसे—

अभि+सेक=अभिषेक
सु+सुप्ति=सुषुप्ति
वि+सम=विषम

अपवाद है—

वि + स्मरण = विस्मरण   अनु + स्वार = अनुस्वार

(12) ह्रस्व स्वर (इ, उ) के बाद यदि 'र' हो और 'र्' के बाद फिर 'र्' हो तो ह्रस्व स्वर का भी दीर्घ हो जाता है और पहले 'र्' का लोप हो जाता है। जैसे—

निर् + रस = नीरस   निर् + रव = नीरव
निर् + रोग = नीरोग

विसर्ग संधि

मुख्य विसर्ग संधियाँ निम्नांकित हैं—

(1) विसर्ग के पहले 'अ' हो और बाद में कोई घोष व्यंजन (वर्ग का तीसरा, चौथा, पाँचवाँ वर्ण; य, र, ल, व, ह) हो, तो 'विसर्ग' का 'ओ' हो जाता है। जैसे --

मनः + बल = मनोबल	रजः + गुण = रजोगुण
मनः + रंजन = मनोरंजन	अधः + गति = अधोगति
मनः + हर = मनोहर	तमः + गुण = तमोगुण
मनः + रथ = मनोरथ	यशः + गान = यशोगान
तपः + वन = तपोवन	पयः + द = पयोद
पयः + धर = पयोधर	मनः + विकार = मनोविकार
सरः + ज = सरोज	मनः + योग = मनोयोग
यशः + दा = यशोदा	तपः + धन = तपोधन
तेजः + मय = तेजोमय	वयः + वृद्ध = वयोवृद्ध
तमः + गुण = तमोगुण	मनः + योग = मनोयोग
छन्दः + भंग = छन्दोभंग	यशः + अभिलाषी = यशोभिलाषी

(3) विसर्ग के बाद यदि च, छ हो तो विसर्ग का 'श्'; ट, ठ, हो तो 'ष्' और त, थ हो तो 'स' हो जाता है। जैसे—

निः + चिन्त = निश्चिन्त	मनः + ताप = मनस्ताप
निः + चल = निश्चल	दुः + तर = दुस्तर

निः + छल = निश्छल	निः + ताप = निस्ताप
हरि + चन्द्र = हरिश्चंद्र	नमः + ते = नमस्ते
दुः + चरित्र = दुश्चरित्र	धनुः + टंकार = धनुष्टकार

(4) विसर्ग के पहले कोई स्वर हो और बाद में घोष ध्वनि (स्वर, वर्ग का तीसरा, चौथा और पाँचवाँ वर्ण एवं य, र, ल, व, ह) हो तो विसर्ग का 'र्' हो जाता है। जैसे—

दुः + गुण = दुर्गुण	दुः + दिन = दुर्दिन
पुनः + निर्माण = पुनर्निर्माण	निः + आश = निराश
निः + जन = निर्जन	निः + आश्रय = निराश्रय
पुनः + जन्म = पुनर्जन्म	दुः + उपयोग = दुरुपयोग
अंतः + मुखी = अंतर्मुखी	निः + धन = निर्धन
निः + बल = निर्बल	निः + मल = निर्मल
बहिः + मुख = बहिर्मुख	पुनः + व्यवस्था = पुनर्व्यवस्था

(5) विसर्ग के पश्चात् यदि श, ष, स हो तो विसर्ग का विकल्प से श्, ष्, स् हो जाता है। जैसे—

दुः + शील = दुश्शील, दुःशील
दुः + शासन = दुश्शासन, दुःशासन
दुः + स्वप्न = दुस्स्वप्न, दुःस्वप्न
अंतः + शक्ति = अंतश्शक्ति, अंतःशक्ति
निः + सन्देह = निस्सन्देह, निःसन्देह

(6) यदि विसर्ग के पूर्व 'इ' अथवा 'उ' हो और बाद में क, ख, ग, फ हो तो विसर्ग का 'ष्' हो जाता है। जैसे—

निः + पाप = निष्पाप	निः + कपट = निष्कपट
निः + फल = निष्फल	निः + कलंक = निष्कलंक
दुः + कर्म = दुष्कर्म	दुः + कर = दुष्कर
निः + काम = निष्काम	

अपवाद है—

वि + स्मरण = विस्मरण   अनु + स्वार = अनुस्वार

(12) ह्रस्व स्वर (इ, उ) के बाद यदि 'र' हो और 'र्' के बाद फिर 'र्' हो तो ह्रस्व स्वर का भी दीर्घ हो जाता है और पहले 'र्' का लोप हो जाता है। जैसे—

निर् + रस = नीरस   निर् + रव = नीरव
निर् + रोग = नीरोग

विसर्ग संधि

मुख्य विसर्ग संधियाँ निम्नांकित हैं—

(1) विसर्ग के पहले 'अ' हो और बाद में कोई घोष व्यंजन (वर्ग का तीसरा, चौथा, पाँचवाँ वर्ण; य, र, ल, व, ह) हो, तो 'विसर्ग' का 'ओ' हो जाता है। जैसे—

मनः + बल = मनोबल   रजः + गुण = रजोगुण
मनः + रंजन = मनोरंजन   अधः + गति = अधोगति
मनः + हर = मनोहर   तमः + गुण = तमोगुण
मनः + रथ = मनोरथ   यशः + गान = यशोगान
तपः + वन = तपोवन   पयः + द = पयोद
पयः + धर = पयोधर   मनः + विकार = मनोविकार
सरः + ज = सरोज   मनः + योग = मनोयोग
यशः + दा = यशोदा   तपः + धन = तपोधन
तेजः + मय = तेजोमय   वयः + वृद्ध = वयोवृद्ध
तमः + गुण = तमोगुण   मनः + योग = मनोयोग
छन्दः + भग = छन्दोभंग   यशः + अभिलाषी = यशोभिलाषी

(3) विसर्ग के बाद यदि च, छ हो तो विसर्ग का 'श्'; ट, ठ, हो तो 'ष्' और त, थ हो तो 'स' हो जाता है। जैसे—

निः + चिन्त = निश्चिन्त   मनः + ताप = मनस्ताप
निः + चल = निश्चल   दुः + तर = दुस्तर

निः + छल = निश्छल	निः + ताप = निस्ताप
हरि + चन्द्र = हरिश्चंद्र	नमः + ते = नमस्ते
दुः + चरित्र = दुश्चरित्र	धनुः + टंकार = धनुष्टंकार

(4) विसर्ग के पहले कोई स्वर हो और बाद में घोष ध्वनि (स्वर, वर्ग का तीसरा, चौथा और पाँचवाँ वर्ण एवं य, र, ल, व, ह) हो तो विसर्ग का 'र्' हो जाता है। जैसे—

दुः + गुण = दुर्गुण	दुः + दिन = दुर्दिन
पुनः + निर्माण = पुनर्निर्माण	निः + आश = निराश
निः + जन = निर्जन	निः + आश्रय = निराश्रय
पुनः + जन्म = पुनर्जन्म	दुः + उपयोग = दुरुपयोग
अंतः + मुखी = अंतर्मुखी	निः + धन = निर्धन
निः + बल = निर्बल	निः + मल = निर्मल
वहिः + मुख = वहिर्मुख	पुनः + व्यवस्था = पुनर्व्यवस्था

(5) विसर्ग के पश्चात् यदि श, ष, स हो तो विसर्ग का विकल्प से श्, ष्, म् हो जाता है। जैसे—

दुः + शील = दुश्शील, दुःशील
दुः + शासन = दुश्शासन, दुःशासन
दुः + स्वप्न = दुस्स्वप्न, दुःस्वप्न
अंतः + शक्ति = अंतश्शक्ति, अंतःशक्ति
निः + सन्देह = निस्सन्देह, निःसन्देह

(6) यदि विसर्ग के पूर्व 'इ' अथवा 'उ' हो और बाद में क, ख, ग, फ हो तो विसर्ग का 'ष्' हो जाता है। जैसे--

निः + पाप = निष्पाप	निः + कपट = निष्कपट
निः + फल = निष्फल	निः + कलंक = निष्कलंक
दुः + कर्म = दुष्कर्म	दुः + कर = दुष्कर
निः + काम = निष्काम	

हिंदी की संधियाँ

हिंदी की संधियाँ दो प्रकार की हैं :

एक तो वे जो केवल बोलने में मिलती हैं, और जिनका लिखने में प्रयोग नहीं होता। इनका पालन न करने से उच्चारण में सहजता नहीं रह जाती। दूसरी वे हैं जो उच्चारण के साथ-साथ लेखन में भी मिलती है। यहाँ दोनों को अलग-अलग लिया जा रहा है।

केवल उच्चारण में प्रयुक्त कुछ प्रमुख हिंदी संधियाँ

(1) अल्पप्राण अघोष स्पर्श (क, च, ट, त, प) एवं स्पर्श-संघर्षी व्यंजन (च) घोष (वर्गों के 3, 4 तथा य, र, ल, व) के पूर्व आने पर घोष हो जाते हैं। अर्थात् क्, च्, ट्, त्, प् क्रमशः ग्, ज्, ड्, द्, ब् हो जाते हैं :

	लिखित रूप	उच्चरित रूप
क् का ग्	डाकघर	डाग्घर
च् का ज्	पहुँच जाऊँगा	पहुँज्जाऊँगा
ट् का ड्	ठाट-बाट	ठाड्बाट
त् का द्	मतदाता	मद्दाता
प् का ब्	धूपबत्ती	धूब्बत्ती

(2) अल्पप्राण घोष स्पर्श (ग, ज, द, ब) एवं स्पर्श-संघर्षी (ज) व्यंजन अघोष के पूर्व आने पर अघोष हो जाते है।

ग् का क्	नागपुर	नाक्पुर
ज् का च्	आजकल	आच्कल
द् का त्	बदतमीज	बत्तमीज
ब् का प्	अबकी	अप्की

(3) महाप्राण अघोष (ख, ठ, थ), अघोष के पूर्व आने पर अल्पप्राण अघोष हो जाते हैं :

ख् का क्	नेखपान	नेक्पान
ठ् का ट्	पूठताछ	पूट्ताछ
थ् का त्	हाथ-पाँव	हात्पाँव

(4) महाप्राण अघोष (ख, थ आदि), घोष के पूर्व अल्पप्राण घोष हो जाते हैं।

ख् का ग्	भूख लगी	भूग्लगी
थ् का द्	साथ दो	साद्दो

(5) त्, थ्, द्, ध् ध्वनियाँ च्, ज्, स्, ज्, श् के पूर्व उन्हीं के समान तथा छ्, झ् के पूर्व च्, ज् हो जाती हैं।

त् + च = च्च	बातचीत	बाच्चीत
त् + ज = ज्ज	बहुत जोर से	बहुज्जोर से
त् + श् = श्श	बहुत शोर है	बहुश्शोर है
थ् + च् = च्च	साथ चल	साच्चल
द् + छ् = च्छ	गोंद छू	गोंच्छू
ध + स = स्स	आध सेर	आस्सेर

लेखन में भी प्रयुक्त प्रमुख हिंदी संधियाँ

(1) प्रत्यय जोड़ने या समस्त पद बनाने में निम्नांकित परिवर्तन होते है :

आ का अ— खाट + इया = खटिया   काठ + पुतली = कठपुतली
कान + कटा = कनकटा   आधा + खिला = अधखिला
काला + मुँहा = कलमुँहा

ई का इ—विद्यार्थी + यों = विद्यार्थियों   कापी + आँ = कापियाँ
भीख + आरी = भिखारी   लड़की + आँ = लड़कियाँ

ऊ का उ—दूध + मुँहा = दुधमुँहा   मूँछ + कटा = मुँछकटा
टूटी + पुँजिया = टुटपुँजिया   लूट + एरा = लुटेरा
डाकू + ओं = डाकुओं   भालू + ओं = भालुओं

ए का इ—खेल + वाड़ = खिलवाड़   जेठ + आनी = जिठानी
एक + साठ = इकसठ   एक + तीस = इक्तीस

ओ का उ—घोड़ा + दौड़ = घुड़दौड़   दो + अन्नी = दुअन्नी

दो + गुना = दुगुना सोना + आर = सुनार
लोहा + आर = लुहार

अर्थात्—

आ का अ
ई, ए का इ
ऊ, ओ का उ

इसे ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति कह सकते हैं।

(2) अल्पप्राण के बाद 'ह' आने पर दोनों मिलकर महाप्राण हो जाते हैं :

अब + ही = अभी, जब + ही = जभी, तब + ही = तभी, सब + ही = सभी, कब + ही = कभी।

(3) आ के बाद ह आने पर दोनों का लोप हो जाता है :

यहाँ + ही = यहीं, कहाँ + ही = कहीं, वहाँ + ही = वहीं।

(4) स के बाद ह आने पर ह का लोप हो जाता है :

इस + ही = इसी, जिस + ही = जिसी, किस + ही = किसी, उस + ही = उसी।

6

शब्द-विवेक

पर्याय और उनके अर्थ भेद

पर्याय या पर्यायवाची शब्द की सही-सही परिभाषा देना कठिन है। ये ऐसे शब्द माने जाते हैं जो एक ही व्याकरणिक कोटि के (संज्ञा, क्रिया, विशेषण, क्रियाविशेषण आदि) हों, और जिनका मुख्य अर्थ समान हो। परंतु फिर भी उनके अर्थ मे कुछ-न-कुछ असमानता अवश्य होती हे। यह संभव है कि संदर्भ विशेष में एक शब्द की जगह उसका कोई विशेष पर्याय रखने पर अर्थ में विशेष अंतर न आए, परंतु अन्य संदर्भों मे ऐसा करने पर अंतर आ सकता है।

पर्यायों में सूक्ष्म अंतर करने का गद्य में विशेष महत्त्व है। पद्य या कविता में कुछ शब्द केवल छंद-रचना की अपेक्षाएँ पूरी करने के लिए प्रयुक्त होते है, परंतु गद्य में ऐसा कोई बंधन न होने के कारण अर्थ का ही विशेष महत्त्व है। अत: संदर्भ विशेष मे वही शब्द प्रयुक्त होना चाहिए जो अर्थ के स्तर पर सटीक हो, हालांकि गद्य काव्य, ललित निबंधों आदि मे, और कभी-कभी अन्य स्थलों पर भी चमत्कार पैदा करने के लिए ऐसे पर्यायों का प्रयोग कर लेते हैं जो अन्यथा अप्रयुक्त-से हैं। उदाहरण के लिए, 'सुंदर' के पर्यायों के रूप में 'मंजु', 'चारु' आदि साधारणत: प्रयुक्त नही होते। परंतु 'मंजु मराल', 'चारु चंद्र', 'चारु हास' गद्य में भी चमत्कार पैदा करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इसी तरह साधारणत: आसमान के लिए आकाश शब्द का प्रयोग करते है—'आकाश पर बादल छा रहे हैं।' यहाँ 'नभ' या 'गगन' नहीं कहेगे। परंतु 'नभमंडल', 'गगनमंडल', 'नील गगन' आदि अभिव्यक्तियों में इनका भरपूर प्रयोग होता है।

हिंदी में पर्यायों के सही-सही अर्थभेद निर्धारित करने का कोई बहुत अच्छा प्रयास अभी नहीं हुआ। वस्तुत: उत्कृष्ट साहित्य मे से शब्दों के मानक प्रयोगों का व्यापक सर्वेक्षण करने के बाद ही यह निर्धारित करना चाहिए कि संदर्भ विशेष में

शब्द विशेष ही क्यों उपयुक्त है, या उसके कौन-कौन-से पर्याय उसका स्थान ले सकते हैं, कौन-से नहीं ले सकते, और क्यों। हिंदी में ऐसा कोई उल्लेखनीय प्रयास अभी हुआ ही नहीं।

यहां हम व्यापक प्रयोग के आधार पर कुछ महत्त्वपूर्ण पर्याय-वर्गों में अर्थ-भेद निर्दिष्ट करेंगे।

अनुमति, आज्ञा, आदेश

जब हम कुछ करना चाहते हैं और वैसा करने के लिए किसी अधिकारी से पूछना आवश्यक होता है तब हम उसकी 'अनुमति' मांगते हैं। दूसरे के अधिकार-क्षेत्र में प्रवेश के लिए अनुमति लेनी होती है। परंतु जब बड़ा अधिकारी या माननीय व्यक्ति अपनी ओर से यह चाहता है कि उसके मातहत या अधिकार-क्षेत्र में आने वाले लोग ऐसा करें या न करें तब वह 'आदेश' देता है। 'आज्ञा' शब्द का प्रयोग प्रायः दोनों अर्थों में होता है। जब आज्ञा मांगी या ली जाती है तब वह अनुमति की समानार्थक होती है, जब अधिकारपूर्वक आज्ञा दी जाती है तब वह आदेश के निकट आ जाती है, जैसे—आचार्य की आज्ञा शिरोधार्य है।

अनुयायी, पिछलग्गू

किसी धर्म, मत, संप्रदाय, नेता या विचारक में आस्था रखने वाले या उसके पीछे चलने वाले को अनुयायी कहा जाता है। अतः यह सम्मानसूचक है। इसके विपरीत किसी बड़े आदमी, सत्ताधारी या गुटबाज की हर बात अंधाधुंध मान लेने वाले और उसका साथ देने वाले को पिछलग्गू कहा जाता है। पिछलग्गू की अपनी कोई इज्जत नहीं होती। अतः यह शब्द तिरस्कारसूचक है।

अपराध, पाप

नियम या क़ानून तोड़ना अपराध है जिसका दंड मिलता है। नैतिकता या धर्म का उल्लंघन करना पाप है, जिसका दंड ईश्वर देता है। यों बहुत-से काम अपराध और पाप दोनों की श्रेणी में आ सकते हैं।

अभिमान, अहंकार

अपनी धन-संपत्ति, शक्ति, यश या सुंदरता का विचार करके अपने आप को दूसरों से श्रेष्ठ समझना अभिमान है। अभिमान में यदि कोई दूसरों की उपेक्षा करता है तो उसकी निंदा की जाती है। परंतु कभी-कभी अभिमान वांछनीय होता है, जैसे हमें अपने देश पर अभिमान होना चाहिए। परंतु अहंकार में अभिमान की अति सचित होती है जिसमें आदमी दूसरों को कुछ नहीं समझता।

अमूल्य, बहुमूल्य

अमूल्य वह है जिसका कोई मूल्य न हो, अर्थात् जिसे किसी मूल्य पर भी प्राप्त न किया जा सके या जिसका मूल्य इतना अधिक हो कि उसका अनुमान न लगाया जा सके या चुकाया न जा सके। बहुमूल्य वह है जिसका मूल्य बहुत अधिक हो। बहुमूल्य वस्तु मूल्य देकर प्राप्त तो की जा सकती है, परंतु अमूल्य वस्तु भाग्य से ही उपलब्ध होती है।

अशक्त, निःशक्त

जिसमें शक्ति हो ही नहीं, वह अशक्त है। जिसकी शक्ति चुक गई हो वह निःशक्त है। यह सोच सकते हैं निःशक्त में पहले शक्ति रही होगी, अब नहीं रही; अशक्त में शक्ति रही ही न होगी।

असंभव, असंभाव्य

जो किसी भी हालत में हो न सके, वह असंभव है, जैसे सूर्य का पश्चिम से उदय होना असंभव है। असंभाव्य वह है जो असंभव तो नहीं, परंतु निर्दिष्ट परिस्थितियों में जिसकी संभावना न हो। 'आज यहाँ उनका आना असंभाव्य है'-- कहने का अर्थ यह है कि आज उनके यहाँ आने की संभावना नहीं है। फिर भी यह बात असंभव तो नहीं।

असार, निस्सार

जिसमें सार न है, न था, वह असार है। जिसमें सार तो था, पर अब निकल गया, वह निस्सार है।

अस्त्र, शस्त्र

जो हथियार फेंककर मारे जाते हैं, वे अस्त्र; जो हाथ से चलाए जाते हैं, वे शस्त्र। उदाहरण के लिए, हथगोला अस्त्र है, तलवार शस्त्र है।

अस्थायी, अस्थिर

जो थोड़े समय के लिए टिके या जिसे सदा नहीं बने रहना, वह अस्थायी है। जो एक स्थान पर या एक ही स्थिति में न टिके बल्कि कभी किसी स्थिति में रहे, कभी किसी में, वह अस्थिर। जैसे-नौकरी अस्थायी हो सकती है। वह व्यक्ति जो किसी एक नौकरी में न टिके बल्कि नौकरियाँ बदलता रहे, उसे अस्थिर कहेंगे।

आकार, आकृति

आकार से यह निर्दिष्ट होता है कि कोई वस्तु कितनी बड़ी, छोटी, लम्बी, चौड़ी या ऊँची है। आकृति से यह कि उसका रूप कैसा है, अर्थात् वह गोल, चपटी, सपाट, पिचकी हुई आदि है। परंतु समस्त पदों में, आकार आकृति के अर्थ में भी आता है, जैसा अंडाकार (अंडे की शक्ल का), शंखाकार (शंकु की आकृति का)।

आदर, सम्मान

किसी को बड़ा या माननीय समझकर उसके प्रति विनम्रता प्रदर्शित करना आदर भी है, सम्मान भी। परंतु आदर में हार्दिकता अधिक होती है, सम्मान में शिष्टाचार का अधिक ध्यान रखा जाता है। किसी के आदर में आँखें बिछाई जा सकती हैं; सम्मान में इक्कीस तोपों की सलामी दी जा सकती है। वैसे कहीं-कहीं इन दोनों का भावार्थ एक-दूसरे से मिल भी जाता है।

आपत्ति, विपत्ति

जो संकट या मुसीबत एकदम आ पड़े वह आपत्ति है। जो संकट टिका हुआ हो, जिससे निकलने का रास्ता न सूझे, वह विपत्ति। आपत्ति से बचने के लिए मनुष्य हाथ-पैर मार सकता है, मर्यादा को भी भूल सकता है (आपत्काले मर्यादा नास्ति)। विपत्ति के समय सोच-समझकर उससे उबरने का उपाय किया जाता है।

आलोचना, समालोचना

किसी चीज के दोष निकालना आलोचना है; जैसे हम कहें, 'क्रम ने इस निर्णय की आलोचना की है।' गुण-दोषों का सम्यक् विवेचन और मूल्यांकन करना समालोचना है। साहित्यिक कृतियों के गुण-दोषों के विवेचन को आलोचना भी कहा जाता है, समालोचना भी, परंतु समालोचना अधिक प्रचलित है।

आवश्यक, अनिवार्य

जिसके बगैर काम न चले, वह आवश्यक है। परंतु उसकी जगह किसी और चीज से भी काम चल सकता है। अनिवार्य वह है जिससे बच ही न सकें। यदि हम यह सोचें कि ऐसा होकर ही रहेगा, उसे भी अनिवार्य कहते हैं। प्रायः यह बुरी आशा के संदर्भ में ही आता है, जैसे 'उसका विनाश अनिवार्य है।'

ईर्ष्या, स्पर्धा

दूसरे की उन्नति को देखकर मन ही [illegible] है। दूसरे की उन्नति

देखकर स्वयं भी वैसी ही उन्नति के लिए प्रयत्न करना स्पर्धा है। अतः ईर्ष्या मनुष्य को पतन की ओर ले जाती है, स्पर्धा उत्थान की ओर।

उदाहरण, दृष्टांत

किसी बात को समझाने या स्पष्ट करने के लिए अनुभव या कल्पना के आधार पर कोई तथ्य प्रस्तुत करना उदाहरण है। किसी बात को प्रमाणित करने के लिए वैसी ही दूसरी बात की ओर संकेत करना—जो मान्य या प्रमाणित हो—दृष्टांत है।

उदास, उदासीन

मन के विरुद्ध बात होने पर या किसी बिछुड़े हुए प्रियजन की याद आने पर मन न लगे तो मनुष्य उदास होता है। उदासीन इस अर्थ में भी आता है। परंतु उदासीन का दूसरा अर्थ है किन्हीं दो पक्षों में मतभेद या लड़ाई होने पर उससे अप्रभावित और अविचलित रहना या किसी भी पक्ष की ओर झुकाव न होना। उदास इस अर्थ में नहीं आता।

उपहास, व्यंग्य

उपहास में किसी की कमी या अटपटेपन की ओर संकेत करके प्रत्यक्ष रूप से उसकी हँसी उड़ाई जाती है और उसकी प्रतिष्ठा गिराई जाती है। व्यंग्य में बात घुमा-फिरा कर की जाती है जो कभी-कभी प्रशंसा के रूप में भी हो सकती है, परंतु उसका लक्ष्य किसी की त्रुटि की ओर संकेत करना होता है। अतः व्यंग्य अप्रत्यक्ष होता है। व्यग्य करने के लिए भी सूझ-बूझ की जरूरत होती है, उसे समझने के लिए भी।

किराया, भाड़ा

किसी की जमीन, मकान या कोई और चीज निश्चित समय के लिए उपयोग में लाने पर उसके बदले नियमित रूप से दी जाने वाली धनराशि को किराया कहते है। वस्तुओं, व्यक्तियों आदि को एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाने के बदले में दी जाने वाली धन-राशि को भाड़ा कहा जाता है।

क्रुद्ध/क्रोधित, क्रोधी

कोई बात अपने मन के विरुद्ध होती देखकर, अपनी आज्ञा का उल्लंघन होते देखकर या अपमान होने पर व्यक्ति क्रुद्ध या क्रोधित हो सकता है। यदि उसे स्वयं क्रोध आता है तो वह क्रुद्ध होता है; यदि उसे क्रोध दिलाया जाता है तो वह

क्रोधित होता है। परंतु क्रोधी वह है जो स्वभाव से क्रोध करे। अतः क्रुद्ध या क्रोधित व्यक्ति के मन में समय विशेष पर क्रोध आया होता है; क्रोधी को अक्सर क्रोध आता रहता है।

खोज, आविष्कार

यदि कोई चीज मौजूद तो है पर सभ्य समाज को उसकी जानकारी नहीं तो उसे ढूंढ़ निकालना खोज है। खोज किसी वस्तु की भी हो सकती है, नियम की भी। परंतु कोई ऐसी नई चीज बना देना, जिसे पहले किसी ने न बनाया हो, आविष्कार है। आविष्कार में नई सूझ का प्रयोग आवश्यक है। पहले से प्रयुक्त चीजों में हेर-फेर करके नई चीज बना देना आविष्कार नहीं। जिसने पहली बार रेडियो बनाया, उसने इसका आविष्कार किया। पर यदि कोई नए रूप-आकार की मेज बना दे तो यह आविष्कार नहीं होगा।

गीला, भीगा

किसी चीज में थोड़ा-थोड़ा पानी लगा हो तो उसे गीला कहेंगे। यदि पानी बहुत अधिक पड़ जाए या किसी चीज को पानी में डुबो दें या डुबोकर निकाल लें तो उसे भीगा कहेंगे। बहुत हल्की वर्षा में हमारे कपड़े गीले हो सकते हैं, तेज वर्षा में वे भीग जाएँगे।

ग्रामीण, गँवार

गाँव से संबंधित वस्तु या गाँव में रहने वाले को ग्रामीण कहा जाता है। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था=गाँव की अर्थ-व्यवस्था। ग्रामीण शब्द में तिरस्कार की ध्वनि नहीं है। गँवार शब्द का प्रयोग केवल व्यक्ति के लिए होता है—ऐसे व्यक्ति के लिए, जो गाँव में रहने के कारण सभ्यता और शिष्टाचार न सीख पाया हो। अतः यह शब्द तिरस्कारसूचक है।

घर, मकान

घर अपने परिवार और स्वजनों के समूह को कहते हैं जिनके साथ जीवन-यापन की व्यवस्था कर ली गई हो। मकान ईंट-पत्थर के उस भवन को कहते हैं जिसमें घर बसाया जाता है। अतः मकान बनवाया जाता है, या किराए पर लिया जाता है, परंतु घर बसाया जाता है (विवाह करके और जीवनयापन के साधन जुटाकर)। परन्तु कहीं-कहीं घर का प्रयोग भी मकान के अर्थ में कर लेते हैं, जैसे 'घर का पता' वास्तव में मकान का पता होता है।

चिंता, चिंतन

मन में कोई उलझन पैदा होने पर या कोई संकट आने का अंदेशा होने पर जो सोच-विचार करके हम दुखी होते हैं, वह चिंता है। समाज और विश्व की चिरंतन समस्याओं का अध्ययन-मनन करके सुलझे हुए विचार प्रस्तुत करना—जो दुनिया को राह दिखा सके—चिंतन है। चिंता प्रायः व्यक्तिगत होती है, और ध्वंसात्मक, चिंतन समाज से संबंधित होता है और रचनात्मक भी।

ठंड, ठंडक

ताप कम होने पर असुविधा अनुभव होना ठंड है; परंतु ताप कम होने पर सुखद अनुभूति होना ठंडक है।

तटस्थ, निष्पक्ष

दो पक्षों में मतभेद या लड़ाई होने पर जो उनसे सरोकार न रखे या किसी की ओर न झुका हो वह तटस्थ है, परतु जो किसी पक्ष का साथ न देकर केवल उचित-अनुचित के आधार पर निर्णय दे, वह निष्पक्ष है। अतः तटस्थ व्यक्ति प्रायः निष्क्रिय होता है, निष्पक्ष व्यक्ति मतभेद को दूर करने के लिए सक्रिय होता है।

तात्कालिक, तत्कालीन

जिस पर तत्काल या तुरंत कार्रवाई करनी हो वह तात्कालिक है, जैसे तात्कालिक समस्या। जो निर्दिष्ट समय से संबंधित हो, वह तत्कालीन, जैसे तत्कालीन प्रधान मंत्री=उस समय के प्रधान मंत्री।

दया, कृपा

पीड़ित, दुखी या असहाय व्यक्ति के दुख से द्रवित होकर उसकी सहायता को तत्पर होना दया है। हम जिसका उपकार कर सकते हो, उसके उपकार के लिए तैयार रहना कृपा है। कृपा शब्द का प्रयोग शिष्टाचार के नाते भी किया जाता है जिसमे केवल नम्रता और सद्भावना ही झलकती है।

दर्शनीय, द्रष्टव्य

कोई स्थान या वस्तु सुंदरता, विशालता या ऐतिहासिक महत्त्व आदि के कारण देखने योग्य हो तो उसे दर्शनीय कहेंगे। लिखित सामग्री में यदि कोई खास बात देखने योग्य हो और उसकी ओर ध्यान खींचना हो तो उसे द्रष्टव्य कहेंगे।

दुर्लभ, दुष्प्राप्य

जिसका मिलना या जिसे पाना कठिन हो, वह दुर्लभ भी होता है, दुष्प्राप्य भी। परंतु दुर्लभ कोई मूल्यवान् वस्तु होती है, अतः उसकी अपनी महिमा होती है। परंतु दुष्प्राप्य तो साधारण-से-साधारण वस्तु भी हो सकती है जिसका मूल्य तो बहुत न हो, पर आवश्यकता बहुत हो।

नमस्कार, प्रणाम

माननीय व्यक्ति के प्रति झुकना या आदर भाव प्रदर्शित करने के लिए नमस्कार भी करते हैं, प्रणाम भी। नमस्कार बड़े से या बराबर वाले से कर सकते हैं, और छोटे के नमस्कार के उत्तर में भी। परंतु प्रणाम में अधिक नम्रता लक्षित होती है, अतः यह गुरु, माता-पिता, या अन्य पूज्य और श्रद्धेय व्यक्ति के प्रति ही अधिक उपयुक्त है।

निद्रा, तंद्रा

निद्रा आने पर मनुष्य सो जाता है (नींद); तंद्रा में शिथिलता के कारण हल्की झपकी आती है—आधे सोए, आधे जागे की स्थिति होती है (ऊँघ)।

निराश, हताश

जिसे मन की बात होने की आशा न हो, वह निराश। जिसने आशा तो बहुत लगाई हो, पर वह टूट गई हो, वह हताश।

पुरस्कार, पारितोषिक

पुरस्कार किसी की सेवा, कार्य या योग्यता-प्रदर्शन से प्रसन्न होकर प्रोत्साहन के लिए दिया जाता है। पारितोषिक किसी प्रतियोगिता या मुकाबले में जीतने पर दिया जाता है जो प्रायः पहले से निश्चित होता है।

फल, परिणाम

फल प्रायः किसी व्यक्ति के समूर्त प्रयास के संदर्भ में मिलता है। (अच्छा या बुरा); *परिणाम कई परिस्थितियों के मिले-जुले प्रभाव के कारण सामने आता है।* अतः फल मिलता है; परिणाम निकलता है।

बालोचित/बालसुलभ, बचकाना

जिन गतिविधियों से कोई बालक की तरह भोला-भाला, मासूम या चंचल प्रतीत हो उन्हें बालोचित या बालसुलभ कहेंगे। जिनमें बच्चे की तरह की मूर्खता

या शरारत का परिचय मिले उन्हें बचकाना कहेंगे। बालोचित या बालसुलभ प्रशंसासूचक है, बचकाना तिरस्कारसूचक।

वध, हत्या

शत्रु, राक्षस या अत्याचारी के प्राण ले लेना वध है, जैसे रावण-वध, कंस-वध आदि। निर्दोष के प्राण ले लेना हत्या है। वध में वीरता का परिचय दिया जाता है, हत्या में अपराध-भावना का।

वेतन, पारिश्रमिक

किसी को नौकरी पर रखकर उसकी सेवा के बदले में नियत-नियमित धन-राशि देना वेतन है। किसी से कोई श्रम करा कर उसके बदले में धनराशि देना पारिश्रमिक है।

स्वर्गिक, स्वर्गीय

स्वर्ग की तरह सुंदर और अनुपम को स्वर्गिक कहेंगे, जैसे स्वर्गिक छटा। जिसका स्वर्गवास अर्थात् देहांत हो चुका है उसे स्वर्गीय कहेंगे। कभी-कभी स्वर्गीय शब्द का प्रयोग स्वर्गिक के अर्थ में भी होता है, परंतु स्वर्गिक का प्रयोग स्वर्गीय के उपर्युक्त अर्थ में नहीं होता।

स्वतंत्र/स्वाधीन, स्वायत्त

जो किसी दूसरे के अधीन नहीं उसे स्वाधीन या स्वतंत्र कहेंगे। जिसे अपने अधिकार-क्षेत्र में नियम आदि बनाने का अधिकार हो उसे स्वायत्त कहेंगे। भारत स्वाधीन या स्वतंत्र देश है। नगरपालिकाएँ स्वायत्त संस्थाएँ हैं।

हानि, क्षति

कोई चीज़ हाथ से निकल जाना हानि है, जैसे धनहानि, मान-हानि, प्राण-हानि। किसी चीज़ के किसी हिस्से को नुकसान पहुँचना क्षति है। जहाज़ का एक हिस्सा टूट जाए तो जहाज़ को क्षति पहुँचेगी। प्रतिष्ठा के विरुद्ध कार्य करने पर प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचेगी।

पर्यायों का संकलन

यहाँ हम कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण पर्यायवाची शब्दों की सूची देंगे जो हिंदी के सामान्य ज्ञान के लिए आवश्यक है।

दुर्लभ, दुष्प्राप्य

जिसका मिलना या जिसे पाना कठिन हो, वह दुर्लभ भी होता है, दुष्प्राप्य भी। परंतु दुर्लभ कोई मूल्यवान् वस्तु होती है, अतः उसकी अपनी महिम होती है। परंतु दुष्प्राप्य तो साधारण-से-साधारण वस्तु भी हो सकती है जिसका मूल्य तो बहुत न हो, पर आवश्यकता बहुत हो।

नमस्कार, प्रणाम

माननीय व्यक्ति के प्रति झुकना या आदर भाव प्रदर्शित करने के लिए नमस्कार भी करते हैं, प्रणाम भी। नमस्कार बड़े से या बराबर वाले से कर सकते हैं, और छोटे के नमस्कार के उत्तर में भी। परंतु प्रणाम में अधिक नम्रता लक्षित होती है, अतः यह गुरु, माता-पिता, या अन्य पूज्य और श्रद्धेय व्यक्ति के प्रति ही अधिक उपयुक्त है।

निद्रा, तंद्रा

निद्रा आने पर मनुष्य सो जाता है (नींद); तंद्रा में शिथिलता के कारण हल्की झपकी आती है—आधे सोए, आधे जागे की स्थिति होती है (ऊँघ)।

निराश, हताश

जिसे मन की बात होने की आशा न हो, वह निराश। जिसने आशा तो बहुत लगाई हो, पर वह टूट गई हो, वह हताश।

पुरस्कार, पारितोषिक

पुरस्कार किसी की सेवा, कार्य या योग्यता-प्रदर्शन से प्रसन्न होकर प्रोत्साहन के लिए दिया जाता है। पारितोषिक किसी प्रतियोगिता या मुकाबले में जीतने पर दिया जाता है जो प्रायः पहले से निश्चित होता है।

फल, परिणाम

फल प्रायः किसी व्यक्ति के समूचे प्रयास के संदर्भ में मिलता है। (अच्छा या बुरा); परिणाम कई परिस्थितियों के मिले-जुले प्रभाव के कारण सामने आता है। अतः फल मिलता है; परिणाम निकलता है।

बालोचित/बालसुलभ, बचकाना

जिन गतिविधियों से कोई बालक की तरह भोला-भाला, मासूम या चंचल प्रतीत हो उन्हें बालोचित या बालसुलभ कहेंगे। जिनसे बच्चे की तरह की मूर्खता

या शरारत का परिचय मिले उन्हे बचकाना कहेंगे। बालोचित या बालसुलभ प्रशंसासूचक है, बचकाना तिरस्कारसूचक।

वध, हत्या

शत्रु, राक्षस या अत्याचारी के प्राण ले लेना वध है, जैसे रावण-वध, कंस-वध आदि। निर्दोष के प्राण ले लेना हत्या है। वध में वीरता का परिचय दिया जाता है, हत्या में अपराध-भावना का।

वेतन, पारिश्रमिक

किसी को नौकरी पर रखकर उसकी सेवा के बदले मे नियत-नियमित धन-राशि देना वेतन है। किसी से कोई श्रम करा कर उसके बदले में धनराशि देना पारिश्रमिक है।

स्वर्गिक, स्वर्गीय

स्वर्ग की तरह सुंदर और अनुपम को स्वर्गिक कहेंगे, जैसे स्वर्गिक छटा। जिसका स्वर्गवास अर्थात् देहांत हो चुका है उसे स्वर्गीय कहेंगे। कभी-कभी स्वर्गीय शब्द का प्रयोग स्वर्गिक के अर्थ में भी होता है, परंतु स्वर्गिक का प्रयोग स्वर्गीय के उपर्युक्त अर्थ में नही होता।

स्वतंत्र/स्वाधीन, स्वायत्त

जो किसी दूसरे के अधीन नहीं उसे स्वाधीन या स्वतंत्र कहेगे। जिसे अपने अधिकार-क्षेत्र मे नियम आदि बनाने का अधिकार हो उसे स्वायत्त कहेंगे। भारत स्वाधीन या स्वतंत्र देश है। नगरपालिकाएँ स्वायत्त संस्थाएँ हैं।

हानि, क्षति

कोई चीज हाथ से निकल जाना हानि है, जैसे धनहानि, मान-हानि, प्राण-हानि। किसी चीज के किसी हिस्से को नुकसान पहुँचना क्षति है। जहाज़ का एक हिस्सा टूट जाए तो जहाज़ को क्षति पहुँचेगी। प्रतिष्ठा के विरुद्ध कार्य करने पर प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचेगी।

पर्यायों का संकलन

यहाँ हम कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण पर्यायवाची शब्दों की सूची देंगे जो हिंदी के सामान्य ज्ञान के लिए आवश्यक हैं।

दुर्लभ, दुष्प्राप्य

जिसका मिलना या जिसे पाना कठिन हो, वह दुर्लभ भी होता है, दुष्प्राप्य भी। परंतु दुर्लभ कोई मूल्यवान् वस्तु होती है, अतः उसकी अपनी महिम होती है। परंतु दुष्प्राप्य तो साधारण-से-साधारण वस्तु भी हो सकती है जिसका मूल्य तो बहुत न हो, पर आवश्यकता बहुत हो।

नमस्कार, प्रणाम

माननीय व्यक्ति के प्रति झुकना या आदर भाव प्रदर्शित करने के लिए नमस्कार भी करते हैं, प्रणाम भी। नमस्कार बड़े से या बराबर वाले से कर सकते हैं, और छोटे के नमस्कार के उत्तर में भी। परंतु प्रणाम में अधिक नम्रता लक्षित होती है, अतः यह गुरु, माता-पिता, या अन्य पूज्य और श्रद्धेय व्यक्ति के प्रति ही अधिक उपयुक्त है।

निद्रा, तंद्रा

निद्रा आने पर मनुष्य सो जाता है (नींद); तंद्रा मे शिथिलता के कारण हल्की झपकी आती है—आधे सोए, आधे जागे की स्थिति होती है (ऊँघ)।

निराश, हताश

जिसे मन की बात होने की आशा न हो, वह निराश। जिसने आशा तो बहुत लगाई हो, पर वह टूट गई हो, वह हताश।

पुरस्कार, पारितोषिक

पुरस्कार किसी की सेवा, कार्य या योग्यता-प्रदर्शन से प्रसन्न होकर प्रोत्साहन के लिए दिया जाता है। पारितोषिक किसी प्रतियोगिता या मुक़ाबले में जीतने पर दिया जाता है जो प्रायः पहले से निश्चित होता है।

फल, परिणाम

फल प्रायः किसी व्यक्ति के समूचे प्रयास के संदर्भ में मिलता है। (अच्छा या बुरा); परिणाम कई परिस्थितियों के मिले-जुले प्रभाव के कारण सामने आता है। अतः फल मिलता है; परिणाम निकलता है।

बालोचित/बालसुलभ, बचकाना

जिन गतिविधियों से कोई बालक की तरह भोला-भाला, मासूम या चंचल प्रतीत हो उन्हें बालोचित या बालसुलभ कहेंगे। जिनसे बच्चे की तरह की मूर्खता

या शरारत का परिचय मिले उन्हें बचकाना कहेंगे। बालोचित या बालसुलभ प्रशंसासूचक है, बचकाना तिरस्कारसूचक।

वध, हत्या

शत्रु, राक्षस या अत्याचारी के प्राण ले लेना वध है, जैसे रावण-वध, कंस-वध आदि। निर्दोष के प्राण ले लेना हत्या है। वध में वीरता का परिचय दिया जाता है, हत्या में अपराध-भावना का।

वेतन, पारिश्रमिक

किसी को नौकरी पर रखकर उसकी सेवा के बदले में नियत-नियमित धन-राशि देना वेतन है। किसी से कोई श्रम करा कर उसके बदले में धनराशि देना पारिश्रमिक है।

स्वर्गिक, स्वर्गीय

स्वर्ग की तरह सुंदर और अनुपम को स्वर्गिक कहेंगे, जैसे स्वर्गिक छटा। जिसका स्वर्गवास अर्थात् देहांत हो चुका है उसे स्वर्गीय कहेंगे। कभी-कभी स्वर्गीय शब्द का प्रयोग स्वर्गिक के अर्थ मे भी होता है, परंतु स्वर्गिक का प्रयोग स्वर्गीय के उपर्युक्त अर्थ मे नही होता।

स्वतंत्र/स्वाधीन, स्वायत्त

जो किसी दूसरे के अधीन नही उसे स्वाधीन या स्वतंत्र कहेंगे। जिसे अपने अधिकार-क्षेत्र मे नियम आदि बनाने का अधिकार हो उसे स्वायत्त कहेंगे। भारत स्वाधीन या स्वतंत्र देश है। नगरपालिकाएँ स्वायत्त संस्थाएँ है।

हानि, क्षति

कोई चीज़ हाथ से निकल जाना हानि है, जैसे धनहानि, मान-हानि, प्राण-हानि। किसी चीज़ के किसी हिस्से को नुक़सान पहुँचना क्षति है। जहाज़ का एक हिस्सा टूट जाए तो जहाज़ को क्षति पहुँचेगी। प्रतिष्ठा के विरुद्ध कार्य करने पर प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचेगी।

पर्यायों का संकलन

यहाँ हम कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण पर्यायवाची शब्दों की सूची देंगे जो हिंदी के सामान्य ज्ञान के लिए आवश्यक हैं।

ईश्वर—ईश, प्रभु, भगवान, परमात्मा, ब्रह्म, परब्रह्म, परमेश्वर, जगत्पिता, जगत्पति, जगन्नाथ, जगदीश, जगदीश्वर।

ब्रह्मा—चतुरानन, पद्मपाणि, पद्मासन, प्रजापति, विधि, विधाता, विरंचि, वागीश, वागीश्वर, स्रष्टा, आदिपुरुष।

विष्णु—हरि, उपेंद्र, कमलनाभ, पद्मनाभ, शेषशायी, चतुर्भुज, कमलाकांत, कमलापति, कमलेश, गरुड़ध्वज, चक्रपाणि, चक्रायुध, चक्रधर, नारायण, रमापति, रमानाथ, रमाकांत, लक्ष्मीवल्लभ, श्रीकांत, श्रीधर, श्रीपति, श्रीरमण।

शिव—शंकर, शंभु, महादेव, महेश, पंचानन, पिनाकपाणि, देवाधिदेव, कैलाशनाथ, भव, भोलानाथ, आशुतोष, चंद्रभाल, चंद्रमौलि, चंद्रशेखर, त्रिनेत्र, त्रिलोचन, नीलकंठ, त्रिपुरारि, भैरव, भूतनाथ, पशुपति, धूर्जटी।

इंद्र—अमरनाथ, अमरपति, अमरेश, देवराज, देवाधिप, देवेंद्र, सुरपति, सुरनाथ, सुरेन्द्र, सुराधीश, पुरंदर, मघवा, वज्रपाणि, वज्रबाहु, सहस्राक्ष।

गणेश—गणपति, गणनायक, गणराज, गजानन, गजवदन, लम्बोदर, भवानीनंदन, शिवनंदन, विघ्नहर, विनायक, हेरंब, विद्यावारिधि।

लक्ष्मी—कमला, रमा, श्री, इंदिरा, पद्मा, पद्मिनी, चपला, चंचला।

सरस्वती—भारती, शारदा, गिरा, इला, वाणी, वाङ्मयी, वाङ्मूर्ति, वाग्देवी, वागीश्वरी, वीणापाणि, वीणावादिनी, हंसवाहिनी, विद्या।

पार्वती—अंबा, अम्बिका, जगन्माता, जगज्जननी, भवानी, शिवानी, उमा, गौरी, गिरिजा, गिरिनंदिनी, शैलजा, शैलसुता।

देवता—देव, अमर, सुर, विबुध।

कामदेव—मदन, मयन, मनोज, मनसिज, मन्मथ, स्मर, अनंग, मकरध्वज, कंदर्प, पंचशर, पुष्पधन्वा, पुष्पायुध, रतिपति।

सूर्य—दिनकर, दिनेश, दिनमान, दिनमणि, दिवाकर, प्रभाकर, भास्कर, भास्वर, भानु, रवि, अर्क, मिहिर, सविता, अंशुमाली, आदित्य, मार्तंड विवस्वान।

चंद्र—चाँद, चंद्रमा, शशि, इंदु, विधु, सोम, निशाकर, क्षपाकर, विभाकर, रजनीश, राकेश, सुधाकर, सुधांशु, हिमांशु, कलाधर, कलानिधि, ताराधिप, तारकेश्वर, तारकनाथ, शशांक, मयंक, पीयूषवर्ष।

नक्षत्र—तारा, सितारा, तारक, उडुगण, नखत।

आकाश—अम्बर, गगन, व्योम, नभ, अंतरिक्ष, शून्य, आसमान।

किरण—रश्मि, अंशु, कर, मयूख, मरीचि।

बादल—मेघ, अभ्र, घन, पर्जन्य, जलद, जलधर, नीरद, पयोद, पयोधर, अंबुद, अंबुधर, तोयद, तोयधर, धाराधर, वारिद, वारिधर।
बिजली—विद्युत्, तड़ित, चचला, चपला, क्षणिका, दामिनी, सौदामिनी।
वर्षा—बरसात, वारिश, बरखा, वृष्टि, पावस, मेह।
वसंत—कुसुमाकर, ऋतुपति, ऋतुराज, मधुऋतु, मधुमास, कामसखा, बहार।
उद्यान—उपवन, वाटिका, पुष्पोद्यान, पुष्पवाटिका; बाग़, बग़ीचा, गुलशन, गुलिस्तान, चमन।
फूल—पुष्प, सुमन, कुसुम, प्रसून; गुल।
पत्ता—पत्र, पर्ण, दल, पल्लव, पात, पत्ती।
कमल—पद्म, पुष्कर, राजीव, इंदीवर, अरविंद, उत्पल, नलिन, पुंडरीक, किंजल्क, शतदल, सहस्रदल, श्रीपर्ण, जलज, नीरज, वारिज, अम्बुज, सरोज, सरसिज, पंकज।
आम्र—रसाल, कामशर, कामांग, मधुदूत, पिकवल्लभ।
वन—वन, विपन, कानन, कांतार, अरण्य; जंगल।
सिंह—वनराज, मृगराज, मृगेंद्र, शार्दूल, केसरी; शेर।
सर्प—साँप, नाग, अहि, व्याल, भुजग, भुजंग, भुजंगम, सरीसृप, फणधर, मणिधर, विषधर।
हाथी—हस्ती, गज, करी, कुंजर, वितुंड, शुंडी, शुंडाल, नाग।
घोड़ा—घोटक, अश्व, तुरग, तुरंग, तुरंगम, वाजि, सैंधव, हय।
बंदर—कपि, वानर, मर्कट, शाखामृग।
हिरण—हरिण, मृग, सारंग, कुरंग, कुरंगम।
पशु—मृग, वनचर, चतुष्पद, चौपाया, जानवर, हैवान; मवेशी।
पक्षी—पंछी, खग, विहग, विहंग, विहंगम, पखेरू, चिड़िया।
भ्रमर—भौंरा, भृंग, अलि, अनिद, मिलिंद, मधुप, मधुकर, षट्पद, द्विरेफ, चंचरीक।
मछली—मत्स्य, मीन।
गाय—गौ, धेनु, पयस्विनी।
दूध—दुग्ध, पय, स्तन्य, क्षीर, गोरस, पीयूष।
पानी—जल, नीर, वारि, अंबु, तोय, पय, उदक, सलिल, जीवन, आप।
लहर—तरंग, उर्मि, हिलोर, वीचि; मौज।
तालाब—ताल, सर, सरोवर, तड़ाग, जलाशय, झील, पोखर।
नदी—सरिता, सरित्, नद, सलिला, तरंगिणी, पयस्विनी, स्रोतस्विनी, कल्लोलिनी, शैवालिनी; दरिया।
गंगा—भागीरथी, जाह्नवी, त्रिपथगा, सुरसरिता, सुरतरंगिणी।

पृथ्वी—पृथिवी, धरती, धरा, धरित्री, क्षिति, मही, भू, भूमि, अवनी, मेदिनी, अचला, स्थल; ज़मीन।

पर्वत—पहाड़, गिरि, नग, शैल, अचल, अद्रि, भूधर, भूभृत, धराधर, महीधर।

हिम—बर्फ़, तुषार, तुहिन, नीहार।

समुद्र—सिंधु, उदधि, सागर, अर्णव, रत्नाकर, रत्ननिधि, वननिधि, जलधि, जलनिधि, वारिधि, वारिनिधि, वारीद्र, वारीश, अंबुधि, अंबुनिधि, पयोधि, पयोनिधि, नीरधि, नीरनिधि, क्षीरनिधि, क्षीरधि, नदीश, कंपति, समुदर।

वायु—हवा, पवन, पवमान, वात, अनिल, मरुत, समीर।

अग्नि—आग, अनल, पावक, वह्नि।

ब्राह्मण—द्विज, विप्र, भूदेव, महीदेव।

मनुष्य—मानव, मनुज, मानुष, नर, जन, व्यक्ति; आदमी, इंसान।

स्त्री—नारी, महिला, वनिता, मानवी, कामिनी, रमणी, ललना; अबला; औरत।

पति—भर्त्ता, भर्त्तार, कांत, वल्लभ, स्वामी, नाथ; साजन, बालम; खाविंद, शौहर, खसम, मियाँ।

पत्नी—भार्या, कांता, अर्द्धांगिनी, वामा, वामांगिनी, सहचरी, संगिनी, सहधर्मिणी, स्त्री; बीवी, जोरू।

पुत्र—पूत, बेटा, लड़का, सुत, सुवन, आत्मज, अंगज, तनुज, औरस, तनय, नंदन, लाल।

पुत्री—बेटी, लड़की, सुता, आत्मजा, तनुजा, अंगजा, तनया, नंदिनी, दुहिता।

पिता—जनक, बाप, तात।

माता—जननी, माँ, अम्बा, अम्ब; महतारी।

बुद्धि—मति, मेधा, धी, प्रज्ञा; मस्तिष्क; दिमाग़, अक़्ल।

शरीर—देह, गात, गात्र, तन, तनु, घट, काया, कलेवर, अंग; जिस्म, बदन।

आँख—नयन, नेत्र, अक्षि, चक्षु, दृग, लोचन।

कान—कर्ण, श्रुतिपट, श्रोत्र, श्रवणेंद्रिय।

मुख—मुँह, मुखड़ा, मुखमंडल, आनन, वदन, वक्त्र; चेहरा।

कांति—शोभा, छटा, प्रभा, विभा, आभा, द्युति, सुषमा।

जिह्वा—जीभ, रसना, रसज्ञा; ज़बान।

हाथ—हस्त, कर, पाणि।

पैर—पाँव, पग, चरण, पद, पाद।

मित्र—मीत, सुहृद्, सखा, साथी, सहचर; दोस्त।

शत्रु—रिपु, अरि, वैरी, विरोधी; दुश्मन।

राजा—नरेश, नृप, नृपति, नरेंद्र, नराधिप, महीप, भूप, छत्रपति; शाह, बादशाह।

रानी—महिषी, महारानी; मलिका।

सेना—सैन्य, चमू, अनीकिनी, वाहिनी, चतुरंग, चतुरंगिणी; फ़ौज, लश्कर।

शस्त्र—आयुध, हथियार, अस्त्रशस्त्र।

खड्ग—तलवार, करवाल, असि; तेग़, शमशीर, खंजर।

बाण—तीर, शर, शायक, विशिख, शिलीमुख।

ध्वज—ध्वजा, पताका, केतु, केतन, झंडा, निशान।

घर—गृह, गेह, आवास, निवास, बसेरा, ठौर, ठिकाना, मकान।

अतिथि—मेहमान, पाहुना, अभ्यागत।

धन—दौलत, संपत्ति, संपदा, वित्त, पूंजी, द्रव्य, रुपया-पैसा।

स्वर्ण—सोना, सुवर्ण, कनक, कंचन, कांचन, हिरण्य, हेम, हाटक, चारुरत्न, कुंदन।

रजत—चांदी, रूपा।

आभूषण—भूषण, आभरण, अलंकरण, अलंकार, गहना, ज़ेवर।

सुख—चैन, आराम, आनंद, हर्ष, उल्लास, आह्लाद, प्रमोद।

दुःख—कष्ट, ताप, संताप, क्लेश, विषाद, अवसाद, खेद, रंज, ग़म।

प्रकाश—आलोक, ज्योति, दीप्ति, प्रभा, विभा, उजाला, रोशनी।

अंधकार—अँधेरा, तम, तिमिर, तमिस्र।

अमृत—अमिय, सुधा, पीयूष।

विष—गरल, हलाहल, कालकूट, ज़हर।

स्वर्ग—अमरलोक, देवलोक, सुरलोक, सुरपुर, अक्षयलोक, गोलोक, परमधाम, वैकुंठ, जन्नत, बहिश्त।

नरक—यमलोक, यमपुर, रसातल, जहन्नुम, दोज़ख।

उचित—समुचित, उपयुक्त, समीचीन, संगत, युक्तियुक्त, वाजिब, मुनासिब, जायज़।

अनुचित—अनुपयुक्त, अयुक्त, असंगत, ग़ैरवाजिब, नामुनासिब, नाजायज़।

मान—(क) अभिमान—गर्व, गौरव, अहंकार, दंभ, दर्प, मद, घमंड, ग़ुरूर।

(ख) सम्मान—आदर, समादर, सत्कार, इज़्ज़त।

(ग) मूल्य—माप।

अपमान—अनादर, निरादर, तिरस्कार, अवमानना, अवज्ञा, बेइज़्ज़ती, तौहीन।

प्रेम—प्यार, प्रणय, स्नेह, राग, अनुराग, अनुरक्ति, रति; मोह; वात्सल्य।

घृणा—घिन, अरुचि, जुगुप्सा; विरक्ति, नफ़रत।

दिन—दिवस, दिवा, वासर; रोज़।

रात—रात्रि, रैन, निशि, निशा, क्षपा, यामिनी, रजनी, शर्वरी; विभावरी; तमस्विनी।

इच्छा—चाह, अभिलाषा, कामना, आकांक्षा, मनोरथ।

सुंदर — कमनीय, कांत, चारु, सुरम्य, रमणीय, रमणीक, अभिराम, मनोरम, मनोहर, मनोज्ञ, मंजु, मंजुल, रुचिर, ललित, सुन्दर चित्ताकर्षक।

श्रेष्ठ — उत्तम, अत्युत्तम, सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ; श्रेयस्कर, उत्कृष्ट, वरेण्य।

प्रसिद्ध — विख्यात, प्रख्यात, ख्यातनामा, लब्धप्रतिष्ठ, यशस्वी, लब्धकीर्ति; नामी, नामी-गिरामी, नामवर, मशहूर।

विलोम शब्द

विलोम या विपर्याय शब्द वह है जो दिए गए शब्द का उल्टा अर्थ दे। पर्यायों में केवल भिन्नता होती है, परंतु उसकी मात्रा निश्चित नहीं होती; विलोम यथा-संभव एकदम विपरीत होने के कारण निश्चित अंतर का बोध कराते हैं। यहाँ कुछ

अभिज्ञ—अनभिज्ञ
विज्ञ—अज्ञ
पढ़ा-लिखा—अनपढ़
जानकार—अनजान
आस्तिक—नास्तिक
दोषी—निर्दोष
अपराधी—निरपराध
रोगी—नीरोग
आदर—निरादर/अनादर
आशा—निराशा
सरस—नीरस
सबल—निर्बल
सदय—निर्दय
सगुण—निर्गुण
सापेक्ष—निरपेक्ष
सार्थक—निरर्थक
साकार—निराकार
साधार—निराधार
सजीव—निर्जीव
सफल—निष्फल/विफल
सचेत—अचेत
ससीम—असीम/असीमित
गुण—अवगुण
उन्नति—अवनति
खूबसूरत—बदसूरत
इज्जत—बेइज्जती
दर्दमंद—बेदर्द
सुख—दुःख
हर्ष—विषाद
लाभ—हानि
उत्थान—पतन
मित्र—शत्रु
राग—द्वेष
जीवन—मरण/मृत्यु
संपन्न—विपन्न
संयोग—वियोग
विजय—पराजय
वैभव—पराभव/दैन्य
भाग्यवान्—भाग्यहीन/अभागा
चरित्रवान्—चरित्रहीन
सच्चरित्र—दुश्चरित्र
सज्जन—दुर्जन
सदाचार—दुराचार
सदुपयोग—दुरुपयोग
सत्कार—तिरस्कार
सुपरिणाम—दुष्परिणाम
सुलभ—दुर्लभ
सुकर—दुष्कर
उत्तम—अधम
उत्कृष्ट—निकृष्ट
अनुराग—विराग
अनुरक्ति—विरक्ति
पक्ष—विपक्ष
अनुकूल—प्रतिकूल
सरकारी—गैर-सरकारी
क़ानूनी—गैर-कानूनी
नेकनाम—बदनाम
अंतरंग—बहिरंग
आंतरिक—बाह्य
मुख्य—गौण
अथ—इति
आदि—अंत
आरंभ—अंत
आविर्भाव—तिरोभाव
इहलोक—परलोक
स्वर्ग—नरक
जड़—चेतन

जन्म - मरण/मृत्यु
बंधन—मोक्ष/मुक्ति
पुण्य—पाप
विधि—निषेध
निंदा—स्तुति
सरल—कुटिल
सरल—कठिन
तीव्र—मंद
तीक्ष्ण—मंद
संकोच—विस्तार/उन्मुक्तता
संक्षेप—विस्तार
संधि—विग्रह
सहित—रहित
प्रत्यक्ष—परोक्ष
नूतन—पुरातन
ज्येष्ठ—कनिष्ठ
वरिष्ठ—अवर
स्थावर—जंगम
बुद्धिमान्—मूर्ख
चतुर—मूर्ख
कृतज्ञ—कृतघ्न
स्वतंत्र—परतंत्र
स्वाधीन—पराधीन
व्यष्टि—समष्टि
बहुमत—अल्पमत
विराट्—वामन
अमृत—विष
राजा—रंक
प्रकाश—अंधकार
उज्ज्वल—धूमिल
प्रेम—घृणा
प्रवृत्ति—निवृत्ति
वीर—कायर
ऊँचा—नीचा

एक शब्द प्रतिस्थापन

अभिव्यक्ति को सुनिश्चित और सुनिर्दिष्ट बनाने के लिए तथा विस्तृत विचार को कम-से-कम शब्दों में व्यक्त करने के लिए उन शब्दों का ज्ञान आवश्यक है जो अपने अंदर एक परिभाषा को समेटे हों। यहाँ हम कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण शब्दों की सूची देंगे जो किसी लम्बी अभिव्यक्ति के स्थानापन्न होते हैं।

जिसे जीता न जा सके या पराजित न किया जा सके—अजेय/अपराजेय।
जिसे कहीं से भेदा या तोड़ा न जा सके—अभेद्य।
जिसका कोई कारण न हो—अकारण।
जिसका निवारण न किया जा सके या जिससे बचा न जा सके—अनिवार्य/अपरिहार्य।
ऐसा तर्क या प्रमाण जिसे काटा न जा सके—अकाट्य।
जिसे लाँघा न जा सके या पार न किया जा सके—अलंघ्य।
जिस पर विश्वास न किया जा सके—अविश्वसनीय।
जिसे तोला न जा सके या जिसकी किसी से तुलना न की जा सके—अतुल/अतुलनीय।

जिसकी उपमा न दी जा सके—अनुपम।
जिसकी कोई सीमा न हो—असीम/असीमित।
जिसकी कोई माप या परिभाषा न हो —अमित/अपरिमित।
जिसका कोई पार न हो—अपार।
जिसका कभी नाश न हो—अविनाशी/अनश्वर।
जो न कभी बूढ़ा हो, न कभी मरे—अजर-अमर।
जो अपनी जगह से हिले या डिगे नहीं —अचल/अडिग।
जिसे साधा या सुलझाया न जा सके—असाध्य।
जो नियम के अनुसार न हो—अनियमित।
जो अपना प्रभाव दिखाने में चूके नहीं—अचूक।
जिसका कोई नाम न हो या जिसका नाम कोई न जानता हो —अनाम; गुमनाम।
जैसा पहले कभी न हुआ हो—अपूर्व/अभूतपूर्व।
जिसे कोई जानकारी न हो—अनभिज्ञ/अनजान।
जिसका कोई अंत न हो—अनंत।
जो पढ़ा-लिखा न हो—अनपढ़।
जिसे जीतना कठिन हो—दुर्जेय।
जिसे कहीं से भेदना या तोड़ना कठिन हो —दुर्भेद्य।
जिसे लाँघना या पार करना कठिन हो —दुर्लंघ्य।
जिसे साधना, सुलझाना या सही हालत मे लाना कठिन हो—दुस्साध्य।
जिसे करना कठिन हो—दुष्कर।
जिसे पाना कठिन हो—दुर्लभ/दुष्प्राप्य।
जो विधि या क़ानून-सम्मत अथवा उसके अनुसार न हो—अवैध।
जिसमें कोई दोष न हो—निर्दोष।
जिसमें कोई पाप न हो—निष्पाप।
जिसका कोई शत्रु उत्पन्न ही न हुआ हो—अजातशत्रु।
जिसका कोई विरोध न हो—निर्विरोध।
जिसमें कोई विकार न हो—निर्विकार।
जिसका कोई आधार न हो—निराधार।
जिसका कोई रूप या आकार न हो—निराकार।
जिसे कोई रोग न हो—नीरोग।
जहाँ कोई आवाज न हो—नीरव।
जिसकी कोई वजह न हो—बेवजह।
जिसे चैन न पड़े—बेचैन।

जिसका कोई अर्थ, लाभ या इच्छित परिणाम न हो—निरर्थक।
जिसका इच्छित परिणाम प्राप्त हो जाए—सार्थक।
जिसका कोई उद्देश्य न हो—निरुद्देश्य।
जिसका निश्चित उद्देश्य हो—सोद्देश्य/उद्देश्यपूर्ण।
जिसे समझना सरल हो—सुबोध।
जिसे पाना सरल हो—सुलभ।
जो दृष्टि में पड़ जाए—दृष्टिगोचर।
जो देखने योग्य हो—दर्शनीय।
जिसका विश्वास किया जा सके—विश्वस्त/विश्वसनीय।
जो अनुकरण करने योग्य हो—अनुकरणीय।
खाने की इच्छा—बुभुक्षा/भूख।
पीने की इच्छा—पिपासा/प्यास।
जीने की इच्छा—जिजीविषा।
मरने की इच्छा—मुमूर्षा।
मारने की इच्छा—जिघांसा।
जीतने की इच्छा—जिगीषा।
जानने की इच्छा—जिज्ञासा।
जिसमें जानने की इच्छा हो—जिज्ञासु।
जिसे मोक्ष या मुक्ति की इच्छा हो—मुमुक्षु।
जो भविष्य की बातें बता दे—भविष्य-वक्ता।
जो ईश्वर में विश्वास रखता हो—आस्तिक।
जो ईश्वर में विश्वास न रखता हो—नास्तिक।
जो सप्ताह में एक बार हो या प्रकाशित हो—साप्ताहिक।
जो दो सप्ताह या आधे महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—पाक्षिक।
जो महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—मासिक।
जो दो महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—द्वैमासिक।
जो तीन महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—त्रैमासिक।
जो छह महीने में एक बार या वर्ष में दो बार हो या प्रकाशित हो—अर्द्ध-वार्षिक, षाण्मासिक।
जो वर्ष में एक बार हो या प्रकाशित हो—वार्षिक।
जो समय के अनुरूप हो—सामयिक/समयानुकूल/समयोचित।
जो उचित समय पर न हो—असामयिक।
जिसे चिरकाल से माना जाता हो—चिरसम्मत।
जो ज्ञात इतिहास से पहले का हो—प्रागैतिहासिक।

जिसके दस मुँह हों—दशानन।
जिसका मुँह हाथी का हो—गजानन।
जिसके नेत्र कमल के समान हों—कमलनयन/राजीवलोचन/वारिजाक्ष।
जिस स्त्री की आँखें मृग की तरह चंचल हो—मृगनयनी।
जिस स्त्री की आँखें सुंदर हो—सुलोचना/सुनयना।
जो स्त्री देखने में सुंदर हो—सुदर्शना।
जो दूर तक देख सके अथवा बहुत आगे की बातें सोच सके—दूरदर्शी।
जिसने कोई घटना अपनी आँखों देखी हो—प्रत्यक्षदर्शी।
जो सबको एक-सा देखता हो अर्थात् समान समझता हो—समदर्शी।
जिसका चरित्र अच्छा हो—सच्चरित्र/चरित्रवान्।
जिसका चरित्र बुरा हो—दुश्चरित्र/चरित्रहीन।
जो नपा-तुला खर्च करे—मितव्ययी।
जो नपा-तुलना बोलता हो—मितभाषी।
जो नपा-तुला खाता हो—मिताहारी।
जो मीठा बोलता हो—मिष्टभाषी/मिठबोला।
जो कड़वा बोलता हो—कटुभाषी।
जो लोगों को पसंद हो या जिसे जनता चाहती हो—लोकप्रिय/जनप्रिय।
जो अच्छे कुल में जन्मा हो—कुलीन।
जिसे धर्म में निष्ठा हो—धर्मनिष्ठ।
जो उपकार मानता हो—कृतज्ञ।
जो उपकार न मानता हो—कृतघ्न।
जो सब काम अपनी इच्छा से करे, किसी की न सुने—स्वेच्छाचारी।
जिसे (किसी समय) यह समझ न आए कि क्या करे, क्या न करे—किंकर्तव्य-विमूढ़।
जो सब कुछ जानता हो—सर्वज्ञ।
जो सब जगह व्याप्त हो—सर्वव्यापक।
जिसमें सब-की-सब शक्तियाँ हों—सर्वशक्तिमान।
जिसे सब मानते हों—सर्वमान्य/सर्वतोस्वीकृत।
जिसे सबने मान लिया हो—सर्वसम्मत।
जो श्रम करके जीवन-निर्वाह करता हो—श्रमजीवी।
जो बुद्धि के बल पर जीवन-निर्वाह करता हो—बुद्धिजीवी।
जो दूसरों के सहारे जीता हो—परोपजीवी।
जो दीर्घ काल तक जिए—दीर्घजीवी।
जो सदैव हरा-भरा या खिला रहे—सदाबहार; बारहमासी।

जिसका कोई अर्थ, लाभ या इच्छित परिणाम न हो—निरर्थक।
जिसका इच्छित परिणाम प्राप्त हो जाए—सार्थक।
जिसका कोई उद्देश्य न हो—निरुद्देश्य।
जिसका निश्चित उद्देश्य हो—सोद्देश्य/उद्देश्यपूर्ण।
जिसे समझना सरल हो—सुबोध।
जिसे पाना सरल हो—सुलभ।
जो दृष्टि में पड़ जाए—दृष्टिगोचर।
जो देखने योग्य हो—दर्शनीय।
जिसका विश्वास किया जा सके—विश्वस्त/विश्वसनीय।
जो अनुकरण करने योग्य हो—अनुकरणीय।
खाने की इच्छा—बुभुक्षा/भूख।
पीने की इच्छा—पिपासा/प्यास।
जीने की इच्छा—जिजीविषा।
मरने की इच्छा—मुमूर्षा।
मारने की इच्छा—जिघांसा।
जीतने की इच्छा—जिगीषा।
जानने की इच्छा—जिज्ञासा।
जिसमें जानने की इच्छा हो—जिज्ञासु।
जिसे मोक्ष या मुक्ति की इच्छा हो—मुमुक्षु।
जो भविष्य की बातें बता दे—भविष्य-वक्ता।
जो ईश्वर में विश्वास रखता हो—आस्तिक।
जो ईश्वर में विश्वास न रखता हो—नास्तिक।
जो सप्ताह में एक बार हो या प्रकाशित हो—साप्ताहिक।
जो दो सप्ताह या आधे महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—पाक्षिक।
जो महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—मासिक।
जो दो महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—द्वैमासिक।
जो तीन महीने में एक बार हो या प्रकाशित हो—त्रैमासिक।
जो छह महीने में एक बार या वर्ष में दो बार हो या प्रकाशित हो—अर्द्ध-वार्षिक, षाण्मासिक।
जो वर्ष में एक बार हो या प्रकाशित हो—वार्षिक।
जो समय के अनुरूप हो—सामयिक/समयानुकूल/समयोचित।
जो उचित समय पर न हो—असामयिक।
जिसे चिरकाल से माना जाता हो—चिरसम्मत।
जो ज्ञात इतिहास से पहले का हो—प्रागैतिहासिक।

जिसके दस मुँह हों—दशानन।
जिसका मुँह हाथी का हो—गजानन।
जिसके नेत्र कमल के समान हों—कमलनयन/राजीवलोचन/वारिजाक्ष।
जिस स्त्री की आँखें मृग की तरह चंचल हो—मृगनयनी।
जिस स्त्री की आँखें सुंदर हो—सुलोचना/सुनयना।
जो स्त्री देखने मे सुंदर हो—सुदर्शना।
जो दूर तक देख सके अथवा बहुत आगे की बातें सोच सके—दूरदर्शी।
जिसने कोई घटना अपनी आँखों देखी हो—प्रत्यक्षदर्शी।
जो सबको एक-सा देखता हो अर्थात् समान समझता हो—समदर्शी।
जिसका चरित्र अच्छा हो—सच्चरित्र/चरित्रवान्।
जिसका चरित्र बुरा हो—दुश्चरित्र/चरित्रहीन।
जो नपा-तुला खर्च करे—मितव्ययी।
जो नपा-तुला बोलता हो - मितभाषी।
जो नपा-तुला खाता हो—मिताहारी।
जो मीठा बोलता हो—मिष्टभाषी/मिठबोला।
जो कड़वा बोलता हो—कटुभाषी।
जो लोगों को पसंद हो या जिसे जनता चाहती हो—लोकप्रिय/जनप्रिय।
जो अच्छे कुल मे जन्मा हो—कुलीन।
जिसे धर्म में निष्ठा हो—धर्मनिष्ठ।
जो उपकार मानता हो—कृतज्ञ।
जो उपकार न मानता हो—कृतघ्न।
जो सब काम अपनी इच्छा से करे, किसी की न सुने—स्वेच्छाचारी।
जिसे (किसी समय) यह समझ न आए कि क्या करे, क्या न करे—किंकर्तव्य-विमूढ़।
जो सब कुछ जानता हो—सर्वज्ञ।
जो सब जगह व्याप्त हो—सर्वव्यापक।
जिसमें सब-की-सब शक्तियाँ हो—सर्वशक्तिमान।
जिसे सब मानते हो—सर्वमान्य/सर्वतोस्वीकृत।
जिसे सबने मान लिया हो—सर्वसम्मत।
जो श्रम करके जीवन-निर्वाह करता हो—श्रमजीवी।
जो बुद्धि के बल पर जीवन-निर्वाह करता हो—बुद्धिजीवी।
जो दूसरो के सहारे जीता हो—परोपजीवी।
जो दीर्घ काल तक जिए—दीर्घजीवी।
जो सदैव हरा-भरा या खिला रहे—सदाबहार; बारहमासी।

जो सदैव सुहागिन रहे—सदासुहागिन।
जिसमे कलापक्ष प्रधान हो—कला-प्रधान।
जिसमें भावपक्ष प्रधान हो—भाव-प्रधान।
वह देश, जाति, आदि जहाँ या जिसका प्रमुख व्यवसाय कृषि हो—कृषि-प्रधान।
जिसका अंत सुखमय हो—सुखांत।
जिसका अंत दुःखमय हो—दुःखांत।
जिसका प्रयोग समाप्त हो चुका हो—गतप्रयोग/लुप्तप्रयोग।
जिसका वैभव नष्ट हो चुका हो—गतवैभव।
जो आशा से बढ़कर हो—आशातीत।
जिसकी कल्पना भी न की जा सकती हो—कल्पनातीत।
जो आर्यों से भिन्न हो—आर्येतर।
जो (भाषा) हिंदी से भिन्न हो—हिंदीतर।
युद्ध के बाद का - युद्धोत्तर।
जो युग को बदल दे—युगांतरकारी।
जिसे किसी क्षेत्र में प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी हो—लब्धप्रतिष्ठ।
जिसका हृदय विशाल हो—विशालहृदय।
जो (किसी के) हित की इच्छा करे—हितैषी।
जो (किसी की) भलाई चाहे—शुभचिंतक/हितचिंतक।
जिसे (किसी के) दर्शन की अभिलाषा हो—दर्शनाभिलाषी।
जो ऊँचा पद, सम्मान या धन-संपत्ति पाना चाहता हो—महत्त्वाकांक्षी।
जिसकी बुद्धि जड़ या मंद हो—जड़बुद्धि/मंदबुद्धि।
जिसकी बुद्धि तीक्ष्ण या प्रखर हो—तीक्ष्ण बुद्धि/प्रखर बुद्धि/कुशाग्र बुद्धि।
जो नया-नया बना हो—नवनिर्मित।
जो नया-नया आया हो—नवागंतुक।
जिसके संतान न हो—निस्संतान।
जिस (स्त्री) के संतान न हो सके—वंध्या/बाँझ।

7

रूप-रचना

अच्छी भाषा लिखने के लिए उस भाषा की शुद्ध रूप-रचना का जानना आवश्यक है। हिंदी में मुख्यतः संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया की रूप-रचना इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

संज्ञा

व्यंजनांत पुंल्लिग—बालक

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	बालक	बालक
	बालक ने	बालकों ने
कर्म	बालक को	बालकों को
करण	बालक से, के द्वारा	बालकों से, के द्वारा
सम्प्रदान	बालक को, के लिए	बालकों को, के लिए
अपादान	बालक से	बालकों से
संबंध	बालक का, की, के	बालकों का, की, के
अधिकरण	बालक में, पर	बालकों में, पर
संबोधन	ऐ/हे बालक !	ऐ/हे बालको !

मित्र, मकान, घर, फूल, फल, खेत आदि सभी पुंल्लिग व्यंजनांत शब्दों के रूप बालक के समान ही होते हैं। संबोधन बहुवचन का रूप ध्यान देने योग्य है। यह 'बालको', 'मित्रो', 'दोस्तो' होता है। बहुत से लोग गलती से बालकों, मित्रों,

दोस्तों कहते हैं। आगे के सभी रूपों में भी यह बात ध्यान देने की है। संबोधन के रूप ओंकारांत होते हैं, ओंकारात नहीं।

आकारांत पुल्लिंग—लड़का

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	लड़का	लड़के
	लड़के ने	लड़कों ने
कर्म	लड़के को	लड़कों को
करण	लड़के से, के द्वारा	लड़कों से, के द्वारा
सम्प्रदान	लड़के को, के लिए	लड़कों को, के लिए
अपादान	लड़के से	लड़कों से
संबंध	लड़के का, की, के	लड़कों का, की, के
अधिकरण	लड़के में, पर	लड़कों में, पर
संबोधन	हे लड़के !	हे लड़को !

घोड़ा, बेटा, गधा, बच्चा, भतीजा आदि अन्य आकारांत शब्द के रूप लड़का की तरह ही बनते हैं। किंतु कुछ आकारांत शब्द अपवाद भी हैं। उदाहरण के लिए राजा का एकवचन में 'राजा' ही रहता है, 'लड़के' की तरह 'राजे' नहीं होता : 'लड़के का घोड़ा' किंतु 'राजा का घोड़ा' न कि 'राजे का घोड़ा'। बहुवचन में 'राजे' का प्रयोग कुछ लोग करते तो हैं किंतु मानक रूप 'राजा' ही है—'बहुत से राजा आए हैं', अथवा 'राजा लोग आए हैं।' बहुवचन का ओंकारांत रूप 'राजों' न होकर 'राजाओं' होता है। इसी तरह (देवता) 'देवताओं' होता है न कि 'देवतों'। लाला, दादा, मामा, बाबा, काका, चाचा, पिता, योद्धा, नेता, कर्ता, दाता, भ्राता, अभिनेता, दारोगा, मुखिया, अगुआ आदि भी अपवाद हैं। इनमें किसी के भी एकवचन एकारात रूप नहीं बनते। बहुवचन में अलग से 'ओं' (अभिनेताओं, नेताओं), गण (नेतागण) आदि जोड़ते हैं।

विशेष

आकारांत पुल्लिंग शब्द के बाद यदि कोई कारक-चिह्न आए तो 'आ' का 'ए' हो जाता है : लड़के ने, घोड़े को, बच्चे से। यह जातिवाचक संज्ञा का नियम व्यक्तिवाचक संज्ञा पर भी लागू होता है। आगरे का पेठा, कलकत्ते से आया सामान, पटने की बाढ़। यों कुछ लोग ऐसे प्रयोगों में आगरा, कलकत्ता, पटना

को अपरिवर्तित रखते हैं, किंतु ऐसे प्रयोग मानक नहीं हैं। 'आ' का 'ए' किया जाना चाहिए। दो अपवाद हैं :

(1) अन्य देशों के नामों में ऐसा नहीं होता : अमरीका का, कनाडा से, उगाडा को।

(2) यदि द्वयाक्षरी शब्द के अंत में 'या' अथवा 'वा' हो तब भी यह परिवर्तन नहीं होता : गोवा का, गया से।

इकारांत पुंल्लिग—कवि

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कवि	कवि
	कवि ने	कवियों ने
कर्म	कवि को	कवियों को
करण	कवि से, के द्वारा	कवियों से, के द्वारा
सम्प्रदान	कवि को, के लिए	कवियों को, के लिए
अपादान	कवि से	कवियों से
संबंध	कवि का, की, के	कवियों का, की, के
अधिकरण	कवि में, पर	कवियों में, पर
संबोधन	हे कवि !	हे कवियो !

व्यक्ति, रवि, मुनि आदि अन्य इकारांत पुंल्लिग शब्दों के रूप भी ऐसे ही बनते हैं।

ईकारांत पुंल्लिग—भाई

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	भाई	भाई
	भाई ने	भाइयों ने
कर्म	भाई को	भाइयों को
करण	भाई से, के द्वारा	भाइयों से, के द्वारा
सम्प्रदान	भाई को, के लिए	भाइयों को, के लिए
अपादान	भाई से	भाइयों से
संबंध	भाई का, की, के	भाइयों का, की, के
अधिकरण	भाई में, पर	भाइयों में, पर
संबोधन	हे भाई !	ए भाइयो !

साथी, माली, हाथी, मोती, धोबी, ज्ञानी, धनी आदि अन्य ईकारांत शब्दों के रूप भी ऐसे ही बनते हैं। इन ईकारांत रूपों में बहुवचन में 'यों' अथवा 'यो' जोड़ते हैं तो 'ई' का 'इ' हो जाता है : हाथी—हाथियो, माली—मालियों। अर्थात् 'विद्यार्थीयो', 'भाईयों', 'साथीयों' जैसे रूप अशुद्ध हैं।

उकारांत पुंल्लिग—गुरु

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	गुरु	गुरु
	गुरु ने	गुरुओं ने
कर्म	गुरु को	गुरुओं को
करण	गुरु से, के द्वारा	गुरुओं से, के द्वारा
सम्प्रदान	गुरु को, के लिए	गुरुओं को, के लिए
अपादान	गुरु से	गुरुओं से
संबंध	गुरु का, की, के	गुरुओं का, की, के
अधिकरण	गुरु में, पर	गुरुओं में, पर
संबोधन	हे गुरु !	हे गुरुओ !

साधु, शत्रु, रिपु आदि के रूप भी इसी प्रकार के होते हैं।

ऊकारांत पुंल्लिग—डाकू

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	डाकू	डाकू
	डाकू ने	डाकुओं ने
कर्म	डाकू को	डाकुओं को
करण	डाकू से, के द्वारा	डाकुओं से, के द्वारा
सम्प्रदान	डाकू को, के लिए	डाकुओं को, के लिए
अपादान	डाकू से	डाकुओं से
संबंध	डाकू का, की, के	डाकुओं का, की, के
अधिकरण	डाकू में, पर	डाकुओं में, पर
संबोधन	ऐ डाकू !	ऐ डाकुओ !

साधू, बाबू, भालू आदि अन्य ऊकारांत पुंल्लिग के रूप भी इसी प्रकार बनते हैं। बहुवचन के रूपों से स्पष्ट है कि 'ओं' अथवा 'ओ' जोड़ने पर दीर्घ ऊ का ह्रस्व

'उ' हो जाता है : भालू—भालुओ, साधू—साधुओ। 'डाकूओं', 'डाकूओ' जैसे रूप अशुद्ध हैं।

व्यंजनांत स्त्रीलिंग—बहिन [बहन]

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	बहिन	बहिनें
	बहिन ने	बहिनों ने
कर्म	बहिनों को	बहिनों को
करण	बहिन से, के द्वारा	बहिनों से, के द्वारा
सम्प्रदान	बहिन को, के लिए	बहिनों को, के लिए
अपादान	बहिन से	बहिनों से
संबंध	बहिन का, की, के	बहिनों का, की, के
अधिकरण	बहिन मे, पर	बहिनों में, पर
संबोधन	हे बहिन !	हे बहिनो !

बात, मेज, पुस्तक, किताब, रात, आँख आदि अन्य स्त्रीलिंग व्यंजनांत शब्दों के रूप भी ऐसे ही बनते है।

स्त्री० आकारात (माता—माताएँ, माताओं, माताओ), स्त्री० उकारांत (वस्तु—वस्तुएँ, वस्तुओं), स्त्री० ऊकारांत (बहू—बहुएँ, बहुओं, बहुओ; ध्यान देने की बात है कि अंतिम दीर्घ 'ऊ' 'उ' में परिवर्तित हो जाता है), स्त्री० ओकारांत (गौ—गौएँ, गौओं, गौओ) के रूप भी इसी प्रकार बनते हैं।

इकारांत स्त्रीलिंग—जाति

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	जाति	जातियाँ
	जाति ने	जातियो ने
कर्म	जाति को	जातियों को
करण	जाति से, के द्वारा	जातियों से, के द्वारा
सम्प्रदान	जाति को, के लिए	जातियों को, के लिए
अपादान	जाति से	जातियों से
संबंध	जाति का	जातियों का की, के
अधिकरण	जाति में, पर	जातियों मे, पर
संबोधन	हे जाति !	हे जातियो !

शक्ति, आकृति, मति, नीति आदि के रूप भी इसी प्रकार होते हैं।

य्यांत (गुड़िया—गुड़ियाँ, गुड़ियों, गुड़ियो) तथा ईकारांत (रानी—रानियाँ, रानियों, रानियो; दीर्घ 'ई' ह्रस्व में परिवर्तित हो जाती है) स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के रूप भी 'जाति' की तरह ही बनते हैं। कुछ लोग चिड़ियें, गुड़ियें जैसे रूपों का प्रयोग करते हैं, जो गलत हैं। शुद्ध रूप चिड़ियाँ, गुड़ियाँ आदि हैं।

सर्वनाम

उत्तम पुरुष

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	मैं, मैंने	हम, हमने
कर्म	मुझे, मुझको	हमें, हमको
करण	मुझसे, मेरे द्वारा	हमसे, हमारे द्वारा
सम्प्रदान	मुझे, मेरे लिए, मुझको	हमें, हमारे लिए, हमको
अपादान	मुझसे	हमसे
संबंध	मेरा, रे, री	हमारा, रे, री
अधिकरण	मुझ में, पर	हममें, पर

एकवचन में कभी-कभी लोग 'मैं' तथा उनके रूपों के स्थान पर 'हम' तथा उसके रूपों का प्रयोग करते हैं। उस स्थिति में बहुवचन में 'हम सब' या 'हम लोग' (कारक-चिह्न रहित रूप में) तथा 'हम सब', 'हम लोगों' (कारक-चिह्न सहित रूप में, अर्थात् ने, को, से, का, की, के, में पर के साथ) का प्रयोग होता है। वैसे भी अब बहुवचन में प्राय: 'हम लोग' 'हम लोगों' का ही प्रयोग ज्यादा होता है। 'हम' के एकवचन में प्रयुक्त होने के कारण बहुवचन को स्पष्टतः व्यक्त करने के लिए ऐसा किया जाता है।

प्राय: लेखक, संपादक, संस्था, प्रदेश या राष्ट्र आदि के प्रतिनिधि आदि 'मैं' का प्रयोग न करके 'हम' का ही प्रयोग करते हैं :

हमारा विचार है......

हम आगे......करना चाहते हैं।

इन अपवादों को छोड़कर हिंदी में एकवचन में 'हम' 'हमसे' आदि का प्रयोग मानक नहीं माना जा सकता।

कुछ लोग को, से, में, पर के साथ 'मुझ' तथा 'हम' का प्रयोग न करके 'मेरे' तथा 'हमारे' का प्रयोग करते हैं। जैसे—'मुझको' की जगह 'मेरे को', 'हमसे' की

जगह 'हमारे से', 'मुझमें' की जगह 'मेरे में', 'हममें' की जगह 'हमारे में' या 'हम पर' की जगह 'हमारे पर' आदि किंतु ये प्रयोग अशुद्ध हैं।

उत्तम पुरुष सर्वनाम सामान्यत: विशेषण की तरह संज्ञा के पूर्व नहीं आते, जबकि यह, वह आदि अन्य सर्वनाम आते (वह लड़का, यह आदमी) हैं। 'हम भारतीय क्या नहीं कर सकते ?' 'हम औरतों को तो मर्द मूली-गाजर समझते हैं।' जैसे प्रयोग अपवाद है।

हम या उससे बने रूपों का प्रयोग एकवचन में भी होता है, तो क्रिया बहुवचन की ही आती है : हम जा रहे है।

मध्यम पुरुष

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	तू, तूने	तुम, तुमने
कर्म	तुझे, तुझको	तुम्हें, तुमको
करण	तुझसे, तेरे द्वारा	तुमसे, तुम्हारे द्वारा
सम्प्रदान	तुझे, तेरे लिए, तुझको	तुम्हें, तुम्हारे लिए, तुमको
अपादान	तुझसे	तुमसे
संबंध	तेरा, रे, री	तुम्हारा, रे री
अधिकरण	तुझसे, पर	तुममे, पर.

अब 'तुम' तथा उससे बनने वाले रूपों का प्रयोग एकवचन में ही होता है। बहुवचन में 'तुम सब', 'तुम लोग' (कारक-चिह्न-रहित होने पर) 'तुम सब', 'तुम लोगों' (कारक-चिह्न-सहित होने पर) का प्रयोग होता है। जैसे—'तुम सब कहाँ जा रहे हो','तुम लोगों को क्या चाहिए ?' आदि। 'सब' को 'तुम' के साथ प्राय: छोटे या समान और घनिष्ठ लोगों को संबोधित करने में जोड़ते है। 'लोग','लोगों' सभी के लिए प्रयुक्त होते है।

तुझको, तुझसे, तुमको, तुमसे आदि के स्थान पर कुछ लोग तेरे को, तेरे से, तुम्हारे को, तुम्हारे से जैसे रूपों का प्रयोग करते हैं, जो अशुद्ध हैं।

मध्यम-पुरुष में 'तू', 'तुम', 'आप' तीन शब्द इस समय हिंदी में चल रहे है। 'तू' बहुत नज़दीक के, छोटे या समान स्तर के व्यक्ति, माँ (माँ ! तू भी रूठ गई !), भगवान (हे भगवान ! तू बड़ा दयालु है), बच्चे या नौकर आदि के लिए प्रयुक्त होता है। इसमें आदर का प्राय: अभाव रहता है (तू भाग यहां से)। 'तुम' उसकी तुलना में कम अनादरसूचक है। 'आप' आदरसूचक तथा औपचारिक है। आपके रूप नीचे दिए जा रहे हैं :

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	आप, आपने	आप लोग, आप लोगों ने
कर्म	आपको	आप लोगों को
करण	आपसे	आप लोगों से
सम्प्रदान	आपको	आप लोगों को
अपादान	आपसे	आप लोगों से
संबंध	आपका, की, के	आप लोगों का, की, के
अधिकरण	आप में, पर	आप लोगों में, पर

मध्यम पुरुष सर्वनाम संज्ञा के पूर्व विशेषण की तरह प्राय: नहीं आते। 'तुम मज़दूरों को तो आज के मालिक कुछ समझते ही नहीं' या 'आप व्यवसायियों की स्थिति तो अब खस्ता होती जा रही है' जैसे प्रयोग अपवाद ही हैं।

'आप' का प्रयोग कभी-कभी अन्य पुरुष के लिए भी होता है। जैसे—मैं किसी से बात कर रहा हूँ, और बग़ल में कोई और व्यक्ति खड़ा है, जो मेरा आदरणीय है या जिससे मेरे संबंध औपचारिक हैं। मैं जिससे बात कर रहा हूँ, उससे कह सकता हूँ कि 'आपका (तीसरे व्यक्ति की ओर संकेत करते हुए) कुछ काम है, आप (मध्यम पुरुष) उसे कर दें तो बड़ी कृपा होगी।' 'आप' के साथ आज्ञा में इए (बैठिए), जिए (दीजिए), इएगा (बैठिएगा), जिएगा (दीजिएगा)—युक्त क्रिया रूप आते हैं। आदर और नैकट्य दोनों ही बातें हों तो कुछ अन्य क्षेत्रों में लोग 'तुम' के साथ प्रयुक्त होने वाली क्रियाएं ही 'आप' के साथ प्रयुक्त करते हैं—'आप चलो, मैं अभी आया।' 'आप उसे दे देना।' यों ऐसे प्रयोग मानक नहीं हैं।

अन्य पुरुष अथवा दूरवर्ती निश्चयवाचक

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	वह, उसने	वे, उन्होंने
कर्म	उसे, उसको	उन्हें, उनको
करण	उससे, उसके द्वारा	उनसे, उनके द्वारा
सम्प्रदान	उसे, उसके लिए, उसको	उन्हें, उनके लिए, उनको,
अपादान	उससे	उनसे
संबंध	उसका, के, की	उनका, के, की
अधिकरण	उसमें, पर	उनमें, पर

आदर के लिए बहुवचन के रूपों का प्रयोग एकवचन में होता है। उस स्थिति में इनके साथ क्रिया भी बहुवचन की ही आती है, एकवचन की नहीं। बहुवचन के

रूपों का एकवचन के लिए प्रयोग से उत्पन्न अस्पष्टता बचाने के लिए बहुवचन में 'वे सब', 'उन लोग' (कारक-चिह्न-रहित) तथा 'उन सबों', 'उन लोगों' (कारक-चिह्न-सहित) का प्रयोग होता है। इनमे 'वे सब' तथा 'उन सबों' का प्रयोग कुछ अनादर, नैकट्य या अनौपचारिकता व्यक्त करता है।

'वह', 'उस', 'वे', 'उन' का प्रयोग विशेषण के रूप मे संज्ञा के पूर्व भी खूब होता है। जैसे—वह आदमी, उस आदमी को, वे लोग, उन लोगों को। अर्थात् 'उस', 'उन' का प्रयोग केवल कारक-चिह्न-सहित संज्ञा के साथ होता है, तथा 'वह' 'वे' का कारक-चिह्न-रहित संज्ञा के साथ।

निकटवर्ती निश्चयवाचक

समीप के व्यक्ति अथवा समीप की वस्तु की ओर संकेत करने वाले सर्वनाम को निकटवर्ती निश्चयवाचक कहते हैं। जैसे—'यह रही तुम्हारी किताब।' 'यह' के कारकीय रूप है :

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	यह, इससे	ये, इन्होंने
कर्म	इसे, इसको	इन्हें, इनको
करण	इससे, इसके द्वारा	इनसे, इनके द्वारा
सम्प्रदान	इसे, इसके लिए, इसको	इन्हे, इनके लिए, इनको
अपादान	इससे	इनसे
संबंध	इसका, के, की	इनका, के, की
अधिकरण	इसमें, पर	इनमें, पर

आदर के लिए बहुवचन के रूप एकवचन मे आते हैं। इसीलिए अस्पष्टता न आने देने के लिए अब बहुवचन मे प्रायः 'ये', 'इन' से अधिक 'कारक-चिह्न-रहित' रूप में 'ये सब' (अनादरवाची), 'ये लोग' (आदरवाची) तथा 'कारक-चिह्न-सहित' रूप में 'इन सबों' (अनादरवाची), 'इन लोगों' (आदरवाची) का प्रयोग होता है। विशेषण के रूप मे संज्ञा के पूर्व यह, इस, ये, इन आते है। दोनों लिंगों की संज्ञाओं के लिए उनके रूपों का प्रयोग होता है।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

वह सर्वनाम जो किसी निश्चित व्यक्ति या वस्तु का बोध न कराए अनिश्चय-वाचक सर्वनाम कहलाता है। जैसे—कोई, कुछ। 'कोई' का प्रयोग प्रायः मनुष्य तथा बड़े जानवरों आदि के लिए होता है, इसके विपरीत 'कुछ' का प्रयोग निर्जीव

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	आप, आपने	आप लोग, आप लोगों ने
कर्म	आपको	आप लोगों को
करण	आपसे	आप लोगों से
सम्प्रदान	आपको	आप लोगों को
अपादान	आपसे	आप लोगों से
संबंध	आपका, की, के	आप लोगों का, की, के
अधिकरण	आप में, पर	आप लोगों में, पर

मध्यम पुरुष सर्वनाम संज्ञा के पूर्व विशेषण की तरह प्रायः नहीं आते। 'तुम मजदूरों को तो आज के मालिक कुछ समझते ही नहीं' या 'आप व्यवसायियों की स्थिति तो अब खस्ता होती जा रही है' जैसे प्रयोग अपवाद ही हैं।

'आप' का प्रयोग कभी-कभी अन्य पुरुष के लिए भी होता है। जैसे—मैं किसी से बात कर रहा हूँ, और बगल में कोई और व्यक्ति खड़ा है, जो मेरा आदरणीय है या जिससे मेरे संबंध औपचारिक हैं। मैं जिससे बात कर रहा हूँ, उससे कह सकता हूँ कि 'आपका (तीसरे व्यक्ति की ओर संकेत करते हुए) कुछ काम है, आप (मध्यम पुरुष) उसे कर दें तो बड़ी कृपा होगी।' 'आप' के साथ आज्ञा में इए (बैठिए), जिए (दीजिए), इएगा (बैठिएगा), जिएगा (दीजिएगा)—युक्त क्रिया रूप आते हैं। आदर और नैकट्य दोनों ही बातें हों तो कुछ अन्य क्षेत्रों में लोग 'तुम' के साथ प्रयुक्त होने वाली क्रियाएं ही 'आप' के साथ प्रयुक्त करते हैं—'आप चलो, मैं अभी आया।' 'आप उसे दे देना।' यों ऐसे प्रयोग मानक नहीं हैं।

अन्य पुरुष अथवा दूरवर्ती निश्चयवाचक

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	वह, उसने	वे, उन्होंने
कर्म	उसे, उसको	उन्हें, उनको
करण	उससे, उसके द्वारा	उनसे, उनके द्वारा
सम्प्रदान	उसे, उसके लिए, उसको	उन्हें, उनके लिए, उनको,
अपादान	उससे	उनसे
संबंध	उसका, के, की	उनका, के, की
अधिकरण	उसमें, पर	उनमें, पर

आदर के लिए बहुवचन के रूपों का प्रयोग एकवचन में होता है। उस स्थिति में इनके साथ क्रिया भी बहुवचन की ही आती है, एकवचन की नहीं। बहुवचन के

पदार्थ तथा छोटे जंतुओं या कीड़ों आदि के लिए होता है। कभी-कभी इसके विरोधी प्रयोग भी मिल जाते हैं : 'इन चीजों में कोई भी उठा लो', 'कुछ कहते हैं कि सूरदास जन्मान्ध नहीं थे।' कोई के कारकीय रूप हैं—

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कोई, किसी ने	कोई, कोई-कोई, किन्हीं ने
कर्म	किसी को	किन्हीं को
करण	किसी से	किन्हीं से
सम्प्रदान	किसी को, के लिए	किन्हीं को, के लिए
अपादान	किसी से	किन्हीं से
संबंध	किसी का, के, की	किन्हीं का, के, की
अधिकरण	किसी में, पर	किन्हीं में, पर

'कुछ' सर्वदा अपरिवर्तित रहता है। आवश्यकता पड़ने पर इसी में कारक-चिह्न जोड़ दिए जाते हैं। जैसे—'इन मशीनों में कुछ के नट ढीले हैं।' 'कुछ' के प्रयोग के विषय में कुछ बातें याद रखने की हैं। जैसे—कर्त्ता तथा कर्म के रूप में 'कुछ' का प्रयोग दोनों वचनों में होता है :

कर्त्ता : वहाँ कुछ था (एक०)
कुछ कहते हैं। (बहु०)
कर्म : अब कुछ सोचो। (एक०)
कुछ को यहाँ बुला लो (बहु०)

ध्यान देने की बात है कि एकवचन में तो 'कुछ' अनिश्चयवाचक सर्वनाम है, किन्तु बहुवचन में वह मूलतः अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण है। 'कुछ कहते हैं' का अर्थ है 'कुछ लोग कहते हैं।' ऐसे ही 'कुछ को यहाँ बुला लो' में 'कुछ' = कुछ लोग, कुछ छात्र, कुछ सिपाही आदि हो सकता है। अर्थात् बहुवचन का 'कुछ' विशेषण के लोप से सर्वनाम-सा दीखता है। 'बड़े लड़कों को बुला लो' तथा 'छोटों को जाने दो' वाक्य में जो स्थिति 'छोटों' की है, उपर्युक्त बहुवचन के वाक्यों में ठीक वही स्थिति 'कुछ' की भी है।

'किन्हीं' बहुवचन है, किंतु आदर के लिए एकवचन में भी आता है। बहुवचन में 'किन्हीं' और 'कोई-कोई' के अतिरिक्त 'किन्हीं लोगों' (कारक-चिह्न-सहित) का प्रयोग भी होता है।

संबंधवाचक सर्वनाम

संबंध व्यक्त करने के लिए संबंधवाचक का प्रयोग होता है। हिंदी में 'जो' संबंधवाचक सर्वनाम है—

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	जो, जिसने	जो, जो-जो, जिन्होंने
कर्म	जिसे, जिसको	जिन्हें, जिनको
करण	जिससे, जिसके द्वारा	जिनसे, जिनके द्वारा
सम्प्रदान	जिसको, जिसके लिए	जिनको, जिनके लिए
अपादान	जिससे	जिनसे
संबंध	जिसका, के, की	जिनका, के, की
अधिकरण	जिसमें, पर	जिनमें, पर

पहले 'जो' के साथ 'सो' का प्रयोग भी होता था। जैसे—'जो जाएगा, सो पाएगा', किंतु ऐसे वाक्यों में अब 'वह' का प्रयोग होता है। जैसे—'जो जाएगा, वह पाएगा'।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

किसी व्यक्ति अथवा वस्तु के बारे में प्रश्न करने के लिए प्रयुक्त होने वाला सर्वनाम प्रश्नवाचक कहलाता है। बाहर **कौन** आया है? इन चीजों में तुम **क्या** लोगे? इन दोनों प्रयोगों से स्पष्ट है कि 'कौन' का प्रयोग प्राणिवाचक के लिए तथा 'क्या' का अप्राणिवाचक के लिए होता है। किंतु 'कौन' के इसके विरोधी प्रयोग भी मिल जाते हैं: कौन स्कूल? प्राय: 'कौन-सा' का प्रयोग सभी के लिए होता है। कौन-सा आदमी, कौन-सी औरत, कौन-सा साँप, कौन-सी दवात, कौन-सी पुस्तक आदि।

	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	कौन, किसने	कौन, कौन-कौन, किन्होंने
कर्म	किसे, किसको	किन्हें, किनको
करण	किससे	किनसे
सम्प्रदान	किसको, के लिए	किनको, के लिए
अपादान	किससे	किनसे
संबंध	किसका, के, की	किनका, के, की
अधिकरण	किसमें, पर	किनमें, पर

'क्या' अकेले हो तो 'क्या' रूप में ही आता है। इसमें जब कारक-चिह्न जोड़ने होते हैं तो एकवचन में 'किस' तथा बहुवचन में 'किन' का प्रयोग होता है। 'कौन' तथा 'क्या' के कुछ विशेष प्रयोग भी मिलते हैं। जैसे—वही कौन आपका कहना मानेगा = वह आपका कहना नहीं मानेगा—वह भी क्या आदमी है = वह आदमी नहीं है। विशेष अनुतान (Intonation) में बोले गए इन वाक्यों में 'कौन', 'क्या' से 'नहीं' का अर्थ द्योतित होता है। इसी प्रकार, अब वह क्या आएगा = अब वह नहीं आएगा, वह कौन जा रहा है = वह नहीं जा रहा है। अन्य रूपों के भी ऐसे प्रयोग खूब मिलते हैं। जैसे—किसने कहा = किसी ने नहीं कहा।

विशेषण

विशेषण में केवल इतनी बात जानने की है कि आकारांत विशेषण के रूप विशेष्य के लिंग-वचन के अनुसार परिवर्तित होते हैं : बड़ा लड़का, बड़ी लड़की, बड़े लड़के, पहला आदमी, पहली औरत। अन्य सभी प्रकार के व्यंजनांत (सुंदर लड़का, सुंदर लड़की, सुंदर लड़के), उकारांत (दयालु महिला, दयालु पुरुष), ईकारांत (भारी सामान, भारी बात), ऊकारांत (चालू आदमी, चालू औरत) आदि विशेषण अपरिवर्तित रहते हैं।

आकारांत में भी बढ़िया, घटिया, सवा, ज्यादा, उमदा आदि यद्यपि आकारांत हैं, किंतु ये अपरिवर्तित रहते हैं।

कुछ संस्कृत विशेषण लिंग के अनुसार अलग-अलग होते हैं: श्रीमान्-श्रीमती, विद्वान्-विदुषी, महान्-महती, रूपवान्-रूपवती, गुणवान्-गुणवती, सुंदर-सुंदरी।

क्रिया

क्रिया के रूपों के विषय में कुछ मुख्य बातें निम्नांकित हैं :

(1) 'कर' धातु के रूप किया, कीजिए, कीजिएगा है। कुछ लोग इनके स्थान पर क्रमशः करा, करिए तथा करिएगा का प्रयोग करते हैं जो गलत हैं।

(2) चाहिए में कभी कोई परिवर्तन नहीं होता। कुछ लोग गलती से बहुवचन में चाहिएँ का प्रयोग करते हैं जो अशुद्ध है। शुद्ध प्रयोग है—

मुझे एक चीज चाहिए।

हम लोगों को बहुत-सी चीजें चाहिए।

(3) कुछ क्रियाओं के शुद्ध-अशुद्ध रूप इस प्रकार हैं—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
होगा	होवेगा, होएगा, होयगा,	जाए	जाय, जाये, जावे
देगा	देवेगा, देयेगा	दो, लो	देओ, दो, लेओ, ल्यो
दिए, लिए	दिये, लिये	हुए	हुवे, हुये
जाएगा	जायगा, जावेगा, जायेगा		

इन्हीं के आधार पर औरों को भी समझा जा सकता है।

8

वाक्य-रचना

वाक्य की रचना मूलतः पदों से होती है। ये पद संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय होते हैं।

पदों से वाक्य-रचना करने में तीन बातें महत्त्वपूर्ण होती हैं : पदक्रम, अन्वय, अध्याहार।

यहाँ तीनों के नियम अलग-अलग लिये जा रहे हैं।

पदक्रम

'पदक्रम' का अर्थ है 'वाक्य' में पदों के रखे जाने का क्रम। पद को 'शब्द' कहने के कारण कुछ लोग 'पदक्रम' को 'शब्दक्रम' भी कहते हैं। हर भाषा के वाक्य में पदों या शब्दों के अपने क्रम होते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में कर्त्ता + क्रिया + कर्म (Ram killed Mohan) का क्रम है तो हिंदी में कर्त्ता + कर्म + क्रिया (राम ने मोहन को मार डाला) का। यहाँ हिंदी वाक्यों में पदक्रम पर विचार किया जा रहा है। मुख्य बातें निम्नांकित हैं—

(1) कर्त्ता वाक्य में पहले और क्रिया प्रायः अन्त में होती है : मोहन गया, लड़का दौड़ा। यों बल देने के लिए क्रम उलट भी सकते हैं। गया वह लड़का, थक हो चुके तुम।

(2) कर्त्ता का विस्तार उसके पहले तथा क्रिया का विस्तार कर्त्ता के बाद आता है : राम का लड़का मोहन गाड़ी से अपने घर गया।

(3) कर्म तथा पूरक कर्त्ता और क्रिया के बीच में आते हैं : राम ने पुस्तक ली। यदि दो कर्म हों तो गौण कर्म पहले तथा मुख्य कर्म बाद में आता है : राम ने मोहन को पत्र लिखा है। कर्म तथा पूरक के विस्तार उनके पूर्व आते हैं : राम ने अपने मित्र के बेटे राजीव को बधाई का पत्र लिखा, मोहन अच्छा डाक्टर है।

बल देने के लिए कर्म पहले भी आ सकता है : पुस्तक ले ली तुमने ?

(4) विशेषण प्राय: विशेष्य के पूर्व आते हैं : तेज घोड़े को इनाम मिला, अकर्मण्य विद्यार्थी फ़ेल हो गया। पूरक विशेषण विशेष्य के बाद आता है : राम लम्बा है। यह केवल तब होता है जब क्रिया 'है', 'था', 'होगा' आदि हो। कई विशेषण हों तो संख्यावाचक पहले आता है : मैंने एक लम्बा काला आदमी देखा। सामान्यत: विशेषण क्रिया के पहले अवश्य आ जाता है, किन्तु कभी-कभी क्रिया के बाद में, अर्थात् वाक्यांत में भी आता है : चाहे कुछ भी कहो भाई, है वह सुन्दर।

(5) क्रियाविशेषण प्राय: कर्त्ता और क्रिया के बीच में आते हैं : बच्चा धीरे-धीरे खा रहा है। कालबोधक क्रियाविशेषण कभी-कभी जोर देने के लिए कर्त्ता के पहले भी आता है : अब मैं जा रहा हूँ—मैं अब जा रहा हूँ। स्थानबोधक की भी प्राय: यही स्थिति है : भारत के उत्तरी भाग में कश्मीर है—कश्मीर भारत के उत्तरी भाग में है। दोनों साथ भी प्रारंभ में आ सकते हैं : आज उस हाल में कवि-सम्मेलन हो रहा है। क्रियाविशेषण कर्त्ता और कर्म के बीच में तो आता है (मैं धीरे-धीरे उसे सिखा रहा हूँ, लड़का चुपके-चुपके तैयारी कर रहा है), किंतु अन्यत्र भी आ सकता है : चलो चलें अब; आ गए फिर यहाँ ? शीघ्र ही आऊँगा—मैं शीघ्र ही आऊँगा—मैं आऊँगा शीघ्र ही।

(6) सर्वनाम प्राय: संज्ञा के स्थान पर आता है, किंतु दो बातें ध्यान देने की हैं : (क) सर्वनाम वाक्य में संबोधन के रूप में नहीं आता, (ख) विशेषण सर्वनाम के पहले न आकर प्राय: बाद में आता है : वह अच्छा है, तुम मूर्ख हो। यों बोलचाल में बल देने के लिए कभी-कभी विशेषण को सर्वनाम से पहले भी ला देते हैं : अच्छा वह है मगर·········; मूर्ख तुम हो वह नहीं। यहाँ दूसरे में बल 'तुम' पर है पर साथ ही 'मूर्ख' पर भी बल है। यों ऐसे प्रयोगों में मूल वाक्य 'वह अच्छा है' 'तुम मूर्ख हो' ही होता है, अर्थात् विशेषण पूरक या विधेय विशेषण ही रहता है।

(7) हिंदी में क्रिया सामान्यत: अन्त में आती है : मैं चला, मैं अब चला। किन्तु बल देने के लिए वह आरम्भ में भी आ सकती है : चला मैं; चला अब मैं। प्रश्न में तो क्रिया प्राय: आरंभ में आती है : है भी वह यहाँ; गया भी होगा वह। आज्ञा की क्रिया बल देने के लिए प्राय: आरंभ में आती है : जाओ तुम—तुम जाओ। बैठो वहाँ—वहाँ बैठो, लिखो तो जरा—जरा लिखो तो—तो जरा लिखो—तो लिखो जरा। 'चाहिए' की भी प्राय: यही स्थिति है : चाहिए तो था कि मुझसे मिल लेते; चाहिए तो था बहुत कुछ मगर करता कौन है ?

(8) प्रविशेषण (विशेषण की विशेषता बतलाने वाले शब्द, जैसे 'बहुत अच्छा' में 'बहुत') तथा प्रक्रियाविशेषण (क्रिया विशेषण की विशेषता बतलाने वाले शब्द, जैसे : वह बहुत अच्छा खेलता है।) प्राय: विशेषण और क्रियाविशेषण के पहले आते हैं : वह बहुत लम्बा है, घोड़ा काफ़ी तेज भाग रहा था। प्रविशेषण

कभी-कभी बाद में भी आते हैं : वह लंबा बहुत है।

(9) प्रश्नवाचक सर्वनाम तथा क्रियाविशेषण, वाक्य के प्रारंभ में (कौन आ रहा है ? कहाँ जा रहे हो ?), बीच में क्रिया के पूर्व (वहाँ कौन आ रहा है ? तुम कहाँ जा रहे हो ?), या कभी-कभी क्रिया के बीच (वहाँ आ कौन रहा है ? तुम जा कहाँ रहे हो ?) या अन्त में (आएगा कौन ? वहाँ जाएगा कौन ? रहोगे कहाँ ?) आता है। यों प्रश्नवाचक शब्द उस शब्द के ठीक पूर्व ही प्रायः आता है, जिसके बारे में प्रश्न पूछा जाता है : कौन आदमी आएगा ? क्या चीज चाहिए ? तुम क्या (गुप्त) देख रहे हो ? वह कैसे (लुप्त) जा रहा है ? इसका स्थान बदलने से काफ़ी अन्तर पड़ जाता है, अतः प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए : क्या तुम लिख रहे हो ?—तुम क्या लिख रहे हो ?—तुम लिख क्या रहे हो ?—तुम लिख रहे हो क्या ?

(10) पूर्वकालिक क्रिया प्रायः मुख्य क्रिया के पहले आती है : मैं खाकर आया हूँ, वह आकर आराम कर रहा है। बल देने के लिए कर्ता के पहले भी आ सकती है : चलकर तुम देख लो। यदि कर्म हो तो प्रायः पूर्वकालिक क्रिया उसके पूर्व आती है : पंडित जी नहाकर पूजा करते हैं। यों बल देने के लिए इसका भी उल्लंघन कर लिया जाता है : नहाकर पंडित जी पूजा करते हैं—पंडित जी पूजा नहाकर करते हैं— पंडित जी पूजा करते हैं नहाकर।

(11) सम्बोधन प्रायः वाक्य के आरंभ में आता है : राम, कहाँ चले ? मित्र, आओ यहीं बैठें। कभी-कभी अन्त में भी आता है : बैठो मित्र !, चलो भाई !, उठो मोहन !, कहाँ जा रहे हो राजीव ?

(12) करण कारक वाक्य में प्रायः कर्ता-कर्म के बीच में आता है : शीला ने क़लम से पत्र लिखे। बल देने के लिए यों इसमें परिवर्तन भी सम्भव है : क़लम से शीला ने पत्र लिखे, मैंने पत्र तो लिखा था क़लम से और लो गई है पेंसिल।

(13) सम्प्रदान बल के अनुसार कर्ता के बाद तथा करण से पहले (मोहन अपनी बहिन के लिए डाक से साड़ी भेज रहा है) या करण के बाद (मोहन डाक से अपनी बहिन के लिए साड़ी भेज रहा है) आता है।

(14) अपादान कारक कर्ता-क्रिया के बीच में (लड़का छत से गिरा) अथवा कर्ता और कर्म के बीच में (मैंने आलमारी से कपड़े निकाले) आता है। बल देने के लिए दूसरे प्रकार के प्रयोग किए जाते हैं : (आलमारी से मैंने कपड़े निकाले— कपड़े निकाले आलमारी से और टूट गया सन्दूक, वाह यह भी कोई बात हुई !)

(15) अधिकरण कारक प्रायः वाक्य के बीच में क्रिया के पहले आता है (कपड़े सन्दूक में हैं, डाकू घोड़े पर है) किन्तु बल देने के लिए अन्यत्र भी आ सकता है : सन्दूक में कपड़े हैं, तुम्हें दूँ कैसे ? घोड़े पर डाकू है, और आप पैदल उसका पीछा करना चाहते हैं।

(16) आग्रहात्मक 'न' वाक्य के अन्त में आता है : तो तुम शाम की चाय पर आओगे न ? वह मेरा काम कर देगा न ?

(17) निषेधात्मक अव्यय प्रायः क्रिया से पहले आते है : मैं नहीं जा रहा हूँ। बल देने के लिए या कोई और उपवाक्य जोड़ने के लिए अन्यत्र भी इसे रखा जा सकता है . नहीं जाऊँगा मैं—नहीं मैं जाऊँगा, देखें क्या कर लेते हो — मैं जाऊँगा नहीं तुम चाहे कुछ भी बको।

(18) समुच्चयबोधक अव्यय दो पदों, पदबंधों आदि के बीच में आता है। यदि कई को जोड़ना हो तो प्रायः इसे अंतिम दो के बीच में रखते हैं और पूर्ववर्ती के बीच में कॉमा देते है : सुरेश, सौरभ, राजीव और गिरीश आ रहे हैं; सिपाहियों ने उसे पकड़ा, मारा और हवालात में बन्द कर दिया।

(19) ही, भी, तो, तक, भर जिस पर बल देना हो उसके बाद मे आते हैं : राम ही, मैं भी, वह तो, मोहन तक नही आया, वह आ भर जाए।

(20) 'केवल' पहले आता है : केवल राम जाएगा। 'राम केवल जाएगा' जैसे प्रयोग कम होते हैं।

(21) 'मात्र' पहले भी आता है, बाद मे भी : मात्र दस रुपये चाहिए—दस रुपये मात्र चाहिए।

(22) विस्मयादिबोधक प्रायः आरंभ में आते हैं : हाय ! यह क्या किया; अरे ! तुम भी आ गए।

(23) क्रम की दृष्टि से भाषा की विभिन्न इकाइयों मे तर्कसंगत निकटता होनी चाहिए, नहीं तो वाक्य हास्यास्पद हो जाता है : मुझे गर्म भैंस का दूध चाहिए—मुझे भैंस का गर्म दूध चाहिए, मरीज को एक दूध का गिलास पीने दो—मरीज को दूध का एक गिलास पीने दो।

अन्वय

'अन्वय' का अर्थ है 'पीछे जाना', 'अनुरूप होना' अथवा 'समानता'। व्याकरण में इसका अर्थ है 'व्याकरणिक एकरूपता'। अर्थात् वाक्य में दो या अधिक शब्दों की आपसी व्याकरणिक एकरूपता को अन्वय कहते हैं। यह लिंग, वचन, पुरुष, तथा मूल और विकृत रूप की होती है :

(क) सीता घर गई। (दोनों स्त्रीलिंग एकवचन)
(ख) लड़का घर गया। (दोनों पुंल्लिंग एकवचन)
(ग) वह नेता है। (दोनो अन्य पुरुष एकवचन)
(घ) सिपाही काले घोड़े पर बैठा है। (दोनों विकृत रूप)

आगे विभिन्न प्रकार के शब्दों के बीच अन्वय पर संक्षेप में विचार किया जा रहा है .

(क) कर्त्ता और क्रिया का अन्वय

(1) यदि कर्त्ता के साथ कारक-चिह्न न लगा हो तो क्रिया कर्त्ता के अनुसार होती है : लड़की खाना खा रही है, लड़का रोटी खा रहा है। यह ध्यान देने की बात है कि कर्म का प्रभाव क्रिया पर ऐसी स्थिति में नहीं पड़ता।

(2) इसके विपरीत यदि कर्त्ता के साथ ने, को, से आदि कारक-चिह्न लगे हों तो कर्त्ता और क्रिया का अन्वय नहीं होता : राम ने रोटी खाई, मोहन को जाना है, सीता को जाना है, लड़कों को जाना है, लड़कियों को जाना है, राम से चला नहीं जाता, सीता से चला नहीं जाता, लड़कों से चला नहीं जाता।

(3) कर्त्ता के प्रति यदि आदर सूचित करना है, तो एकवचन कर्त्ता के साथ बहुवचन की क्रिया आती है : भगवान बुद्ध महान व्यक्ति थे, महात्मा गांधी मानवता के सच्चे नेता थे।

(4) वाक्य में यदि एक ही लिंग, वचन, पुरुष के कारक-चिह्न रहित कर्त्ता 'और', 'तथा' आदि से जुड़े हों तो क्रिया उसी लिंग में बहुवचन में होती है : राम, मोहन और दिनेश विदेश जा रहे हैं; सीता, अलका तथा करुणा कल आएंगी। किन्तु यदि ऐसे कई शब्द, मिलकर एक ही वस्तु का बोध करा रहे हों तो क्रिया एकवचन में होगी : यह रही उसकी घोड़ा-गाड़ी।

(5) अलग-अलग लिंगों के दो एकवचन कर्त्ता यदि कारक-चिह्न रहित हों तो क्रिया पुंल्लिंग-बहुवचन में होती है : वर और वधू गए, माताजी और पिताजी आएंगे।

(6) यदि अलग-अलग लिंगों और वचनों के कई कर्त्ता कारक-चिह्न रहित हों तो क्रिया वचन की दृष्टि से तो बहुवचन में होगी किन्तु लिंग की दृष्टि से अंतिम कर्त्ता के लिंग के अनुसार : एक लड़का और कई लड़कियाँ जा रही हैं, एक लड़की और कई लड़के जा रहे हैं।

(7) यदि कर्त्ता कई पुरुषों में हों तो पहले अन्य पुरुष को उसके बाद मध्यम पुरुष को और सबसे अन्त में उत्तम पुरुष को रखना चाहिए। क्रिया अंतिम के अनुसार होगी। आओ, मोहन तुम और हम पढ़ें; मोहन और तुम जाओ; श्याम, तुम और मैं चलूँगा।

(8) दर्शन, आँसू, प्राण, होश, आदि के कर्त्ता रूप में आने पर क्रिया बहुवचन में होती है : बहुत दिनों बाद आपके दर्शन हुए हैं, शेर को देखते ही गीदड़ के प्राण ही सूख गए, उसके तो होश उड़ गए।

(9) कर्त्ता के लिंग का पता न हो तो क्रिया पुंल्लिंग होती है : अभी-अभी कौन (कोई) बाहर गया है?

(ख) कर्म और क्रिया का अन्वय

कर्त्ता के साथ कारक-चिह्न हो तो क्रिया कर्म के अनुसार होती है : राम ने रोटी खाई, सीता ने एक आम खाया, लड़कों ने वह प्रदर्शनी देखी, मोहन को रोटी खानी है, सीता को अभी अखबार पढ़ना है, शीला से यह खाना अब खाया नहीं जाता, रामू से ये सूखी रोटियाँ नहीं खाई जातीं, बीमार को रोटी खानी चाहिए, बीमार को दूध पीना चाहिए। क्रिया के कर्म के अनुसार होने के लिए यह आवश्यक है कि कर्म के साथ कारक-चिह्न न हो। यदि कारक-चिह्न हुआ तो क्रिया उसका अनुसरण नहीं करेगी : सीता ने उस चिट्ठी को पढ़ा, राम ने उस चिट्ठी को पढ़ा। ऐसे ही कर्त्ता के साथ कारक-चिह्न न हो तब भी क्रिया कर्म का अनुसरण नहीं करेगी : राम रोटी खा रहा है, सीता चावल खा रही है।

(ग) कर्त्ता और कर्म से निरपेक्ष क्रिया

यदि कर्त्ता और कर्म दोनों के साथ कारक-चिह्न हों तो क्रिया सदा ही पुंल्लिंग एकवचन होती है : छात्र ने छात्रा को देखा, छात्रों ने छात्रा को देखा, छात्राओं ने छात्रों को देखा, मैंने (पुरुष) उसे (स्त्री) देखा, उसने (स्त्री) मुझे (पुरुष) देखा।

(घ) विशेषण और विशेष्य का अन्वय

विशेषण के अन्वय का प्रश्न केवल उन्हीं विशेषणों के साथ उठता है जो आकारांत होते हैं। शेष सभी विशेषण, हमेशा एक रूप रहते हैं : सुन्दर फूल, सुन्दर पत्ती, सुन्दर फूलों को, सुन्दर पत्तियाँ।

(1) आकारांत विशेषण चाहे विशेष्य के पहले आए अथवा बाद में विधेय-विशेषण के रूप में, वह लिंग-वचन में विशेष्य के अनुसार ही रहता है : वह पेड़ बहुत लंबा है, वह लंबा पेड़ खूबसूरत है, वह लंबी डाली फूलों से लदी है, वह डाली लंबी है।

(2) यदि विशेष्य मूल रूप में है तो आकारांत विशेषण भी मूल रूप में आता है, किन्तु यदि वह विकृत रूप में है तो विशेषण भी विकृत रूप में आता है : लंबा लड़का गया, लंबे लड़के को बुलाओ। विशेष्य विकृत रूप में हो किन्तु परिवर्तित न हो, तब भी विशेषण परिवर्तित हो जाएगा : पीला फूल खिला है, पीले फूल को तोड़ लो।

(3) एक विशेषण के कई विशेष्य हों तब भी ये ही नियम लागू होते हैं : वह बड़ा और हरा मकान सुन्दर है, उस बड़े और हरे मकान में कौन रहता है ?

(4) अनेक समासरहित विशेष्यों का विशेषण निकटवर्ती विशेष्य के अनुरूप होता है : भोले-भाले बच्चे और बच्चियाँ, भोली-भाली बच्चियाँ और बच्चे।

(ङ) संबंध और संबंधी का अन्वय

संबंध के रूपों पर भी वही नियम लागू होते हैं, जो ऊपर विशेषण के बारे में दिए गए हैं। वस्तुतः संबंध के रूप विशेषण ही होते हैं तथा संबंधी विशेष्य होता है : यह मेरी छड़ी है, यह छड़ी मेरी है, उसकी माता जी तथा पिता जी गये, उसके पिता जी तथा माता जी गईं।

(च) सर्वनाम और संज्ञा का अन्वय

(1) सर्वनाम उसी संज्ञा के लिंग-वचन का अनुसरण करता है, जिसके स्थान पर आता है : वह (सीता) गई, वह (राम) गया, वे (लड़के) गए, मेरे पिता जी और बड़े भाई आए हैं, वे (लोग) कल जाएँगे।

(2) आदर के लिए एकवचन संज्ञा के लिए बहुवचन सर्वनाम का प्रयोग होता है : पिता जी आए हैं और वे एक-दो दिन रुकेंगे; उसके बाद उन्हें बम्बई जाना होगा, मुझे उनसे कुछ रुपये लेने हैं।

(3) किसी वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में 'मैं' के स्थान पर 'हम' का प्रयोग होता है। इसी प्रकार 'मेरा' के स्थान पर 'हमारा' आदि अन्य रूपों का भी। इसीलिए संपादक, प्रतिनिधि-मंडल का नेता, देश का प्रतिनिधि, देश की ओर से बोलने वाला राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री आदि हम, हमारा आदि का ही प्रयोग करते हैं, मैं, मेरा आदि का नहीं। यदि वे मैं, मेरा आदि का प्रयोग करें तो उसका अर्थ उनका व्यक्तिगत रूप आदि होता है।

अध्याहार

अध्याहार का अर्थ है, वाक्यों में ऐसे शब्दों को लाना, जिनके न रहने पर उस प्रसंग में वाक्य के अर्थ को समझने में बाधा पड़ती है। 'राम जा रहा है और मोहन भी' वाक्य मूलतः 'राम जा रहा है और मोहन भी जा रहा है' है, किन्तु अंतिम 'जा रहा है' का लोप करके वाक्य को यह संक्षिप्त रूप दे दिया गया है। अध्याहार कई प्रकार का होता है :

(क) कर्ता का अध्याहार—सुना है उसके घर चोरी हो गई; देखो है कि अपनी ही जान संकट में है; आपकी सहायता क्या करूँ ?

(ख) क्रिया का अध्याहार—(१) लोकोक्तियों में : घर का जोगी जोगड़ा, आन गाँव का सिद्ध, घर की मुर्गी दाल बराबर, नया नौ दिन पुराना सौ दिन। (2) राम जा रहा है और मोहन। यहाँ मोहन के बाद 'जा रहा है' का अध्याहार है। (3) 'राम नहीं जाता' वाक्य 'राम नहीं जाता है' का संक्षेप है। 'है', 'हूँ' आदि का इस रूप में अध्याहार हिंदी में बहुत सामान्य है : राम नहीं आ रहा, मोहन नहीं जाने का, मैं अब नहीं बोलने का।

(ग) वाक्यांश का अध्याहार—(अ) प्रश्नोत्तर में :

प्रश्न—तुम्हारा नाम क्या है ?
उत्तर—राम ('मेरा नाम' तथा 'है' का अध्याहार)
प्रश्न—कहाँ जा रहे हो ?
उत्तर—घर ('मैं' तथा 'जा रहा हूँ' का अध्याहार)
(आ) अन्यत्र :
(2) वह ऐसा सीधा है जैसे गाय ('सीधी होती है' का अध्याहार)
(3) अधिक विधेयों का एक उद्देश्य —राम आया, कुछ देर रुका, फिर लौट गया।
(4) अधिक उद्देश्यों का एक विधेय—वहाँ शेर है और चीते, बनमानुष, भेड़िये, जेब्रा आदि भी।

वाक्य-रचना की कुछ सामान्य अशुद्धियाँ

पुनरावृत्ति

वाक्य में कभी-कभी एक ही भाव या बात दो बार कहने की गलती हो जाती है। उदाहरणार्थ- -

अशुद्ध शुद्ध

(1) कृपया आने की कृपा करें—कृपया आने का कष्ट करें।
(2) कृपया आने की अनुकंपा करें— कृपया आने का कष्ट करें।
(3) दर असल में बात यह है—'दर असल' अथवा 'असल में' बात यह है।
(4) वह वापस लौट आया—वह लौट आया।
(5) तुम्हीं ने ही यह गलती की है—तुमने ही यह गलती की है।
(6) किसी ने ही यह कहा है—किसने यह कहा है।
(7) वह सदैव ही बीमार रहता है—वह सदैव बीमार रहता है।
(8) केवल चाय ही लूँगा—'चाय ही लूँगा' अथवा 'केवल चाय लूँगा।'
(9) केवल मात्र दो रुपये चाहिए—'केवल दो रुपये चाहिए' अथवा 'मात्र दो रुपये चाहिए।'
(10) इसे चार वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है—इसे चार वर्गों में रखा जा सकता है।

(11) इसका देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण कीजिए—इसका देवनागरी में लिप्यंतरण कीजिए।

(12) आजीवन भर, आजीवन पर्यन्त—जीवन भर, जीवन पर्यन्त।

अन्वय

अन्वय की गलतियों का अनुमान तो ऊपर अन्वय के प्रसंग में दिए गए नियमों से लगाया जा सकता है। यहाँ दो-तीन के संकेत दिए जा रहे हैं।

अशुद्ध — शुद्ध

(1) राम जैसा महान् चरित्र भारत की ही देन थी—राम जैसा महान् चरित्र भारत की ही देन था।

(2) रोटी खाना है—रोटी खानी है।

कुछ उर्दू वाले 'रोटी खाना है' 'कई काम करना है' आदि को शुद्ध मानते हैं, किंतु हिंदी में ऐसे वाक्य अशुद्ध हैं।

(3) लिंग के अन्वय की गलती कभी-कभी इसलिए भी हो जाती है कि दही, मोती, तकिया, रूमाल, दर्द, गोल, सोनिया आदि कुछ शब्द यद्यपि हिंदी में पुल्लिंग हैं किंतु कुछ क्षेत्रों में स्त्रीलिंग बोले जाते हैं।

क्रम

क्रम संबंधी नियम ऊपर दिए गए हैं। कुछ अशुद्धियों की ओर संकेत यहाँ किया जा रहा है—

अशुद्ध — शुद्ध

(1) एक फूलों की माला—फूलों की एक माला।

(2) नेता ने एक छात्रों की सभा में भाषण दिया—नेता ने छात्रों की एक सभा में भाषण दिया।

(3) कई मिल के मजदूर—मिल के कई मजदूर।

(4) मुझे गर्म गाय का दूध चाहिए—मुझे गाय का गर्म दूध चाहिए।

(5) एक पानी का गिलास लाइए—पानी का एक गिलास लाइए।

(6) विदेशी मिठाई के धागे—मिठाई के विदेशी धागे।

कभी-कभी क्रम-परिवर्तन से अर्थ भेद भी हो जाता है—

(1) टेढ़े खंभे गड़े हैं—खंभे टेढ़े गड़े हैं।
(2) पुलिस द्वारा चोरी का माल बरामद हुआ—चोरी का माल पुलिस द्वारा बरामद हुआ।
(3) यह भोजन बनाने की प्रक्रिया—भोजन बनाने की यह प्रक्रिया।
(4) व्यावहारिक हिंदी का स्वरूप—हिंदी का व्यावहारिक स्वरूप।
(5) गंदा आदमी काम कर रहा है—आदमी गंदा काम कर रहा है।

(11) इसका देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण कीजिए—इसका देवनागरी में लिप्यंतरण कीजिए।

(12) आजीवन भर, आजीवन पर्यन्त—जीवन भर, जीवन पर्यन्त।

अन्वय

अन्वय की गलतियों का अनुमान या तो ऊपर अन्वय के प्रसंग में दिए गए नियमों से लगाया जा सकता है। यहाँ दो-तीन के संकेत दिए जा रहे हैं।

अशुद्ध शुद्ध

(1) राम जैसा महान् चरित्र भारत की ही देन थी—राम जैसा महान् चरित्र भारत की ही देन था।

(2) रोटी खाना है—रोटी खानी है।

कुछ उर्दू वाले 'रोटी खाना है' 'कई काम करना है' आदि को शुद्ध मानते है, किंतु हिंदी में ऐसे वाक्य अशुद्ध है।

(3) लिंग के अन्वय की ग़लती कभी-कभी इसलिए भी हो जाती है कि दही, मोती, तकिया, रुमाल, दर्द, गोल, तौलिया आदि कुछ शब्द यद्यपि हिंदी में पुल्लिंग हैं किंतु कुछ क्षेत्रों में स्त्रीलिंग बोले जाते हैं।

क्रम

क्रम संबंधी नियम ऊपर दिए गए हैं। कुछ अशुद्धियों की ओर संकेत यहाँ किया जा रहा है—

अशुद्ध शुद्ध

(1) एक फूलों की माला—फूलों की एक माला।

(2) नेता ने एक छात्रों की सभा में भाषण दिया—नेता ने छात्रों की एक सभा में भाषण दिया।

(3) कई मिल के मज़दूर—मिल के कई मज़दूर।

(4) मुझे गर्म गाय का दूध चाहिए—मुझे गाय का गर्म दूध चाहिए।

(5) एक पानी का गिलास लाइए—पानी का एक गिलास लाइए।

(6) विदेशी सिलाई के धागे—सिलाई के विदेशी धागे।

कभी-कभी क्रम-परिवर्तन से अर्थ भेद भी हो जाता है—

(1) टेढ़े खंभे गड़े है—खंभे टेढ़े गड़े हैं।
(2) पुलिस द्वारा चोरी का माल बरामद हुआ—चोरी का माल पुलिस द्वारा बरामद हुआ।
(3) यह भोजन बनाने की प्रक्रिया—भोजन बनाने की यह प्रक्रिया।
(4) व्यावहारिक हिंदी का स्वरूप—हिंदी का व्यावहारिक स्वरूप।
(5) गंदा आदमी काम कर रहा है—आदमी गंदा काम कर रहा है।

9

विराम-चिह्न

लिखते समय शब्दों, वाक्यों और उपवाक्यों को पृथक् करने के लिए अनेक चिह्नों का प्रयोग होता है जिन्हें मोटे तौर पर विराम-चिह्न कहते हैं। यों विराम का सामान्य अर्थ है रुकना। परंतु विराम-चिह्नों में अनेक ऐसे चिह्न भी सम्मिलित हैं जिनका उद्देश्य अर्थ या भाव को स्पष्ट करना होता है, केवल रुकने का संकेत देना नहीं। उपयुक्त विराम-चिह्नों का प्रयोग न होने पर अर्थ अस्पष्ट रह जाता है और कहीं-कहीं भ्रामक भी हो जाता है।

हिंदी में मुख्यतः निम्नलिखित विराम-चिह्न प्रयुक्त होते हैं—

नाम	चिह्न
पूर्ण विराम	।
अल्प विराम	,
अर्ध विराम	;
प्रश्नवाचक चिह्न	?
विस्मयादिबोधक चिह्न	!
उद्धरण चिह्न	" "
निर्देश चिह्न	—
विवरण चिह्न	:
योजक चिह्न	-
कोष्ठक	( )
संक्षेप चिह्न	°

नोट—पूर्ण विराम का परंपरागत चिह्न '।' है। इधर कुछ प्रतिष्ठित पत्र-

पत्रिकाओं में अंग्रेजी विराम-चिह्नों की तरह पूर्ण विराम के लिए '.' चिह्न भी प्रयुक्त हो रहा है। ध्यान देने की बात है कि हिंदी के अन्य सब विराम-चिह्न अंग्रेजी में भी ज्यों-के-त्यों प्रयुक्त होते है हालांकि उनके प्रयोग के नियम एक-से नही है (वैसे संक्षेप चिह्नके रूप में भी मामूली-सा अंतर कर दिया गया है)। पूर्ण विराम के लिए चूंकि '।' चिह्न बहुत पहले से चला आ रहा है, इसलिए उसी का व्यापक प्रचलन है। परंतु जब से हिंदी में अंतर्राष्ट्रीय अंको (1, 2, 3,...) का प्रयोग शुरू हुआ है, तब से पूर्ण विराम में '।' चिह्न का प्रयोग दुविधा पैदा करने लगा है, विशेषत: वहाँ जहाँ किसी वाक्य के अंत मे कोई संख्या आए, या जहाँ पूर्ण विराम से एक वाक्य का अंत करने के बाद अगला वाक्य किसी संख्या से शुरू हो। लिखने में '।' और '1' में भ्रम हो जाना आम बात है। '.' चिह्न के प्रयोग से ऐसा भ्रम पैदा नही होगा। इसलिए पूर्ण विराम के लिए '.' चिह्न का प्रयोग एकदम त्याज्य नही हालांकि इसे प्रचलित होने में समय लगेगा।

अब हम इन विराम-चिह्नों के प्रयोग के नियम बताएँगे।

पूर्ण विराम का प्रयोग उन सभी वाक्यों के अंत मे होता है जिनमे कोई बात कही जाए या कोई आदेश दिया जाए। अत. पूर्ण विराम सबसे अधिक प्रयुक्त विराम-चिह्न है।

उदाहरण—यह संसार असार है।

अपने कर्तव्य का पालन करो।

नोट—प्रश्नवाचक तथा विस्मयादिबोधक वाक्यों के अंत में पूर्ण विराम का प्रयोग नहीं होता क्योंकि उनके लिए पृथक् चिह्न विहित है।

अल्प विराम—पूर्ण विराम के बाद सबसे अधिक प्रयुक्त चिह्न अल्प विराम है। पूर्ण विराम मे सबसे अधिक रुकना पड़ता है, अल्प विराम मे सबसे कम। इसका प्रयोग निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है—

(1) जब एक ही वाक्य या वाक्यांश में एक ही तरह के (संज्ञा, क्रिया, विशेषण, क्रियाविशेषण आदि) दो से अधिक शब्द एक साथ आए हों, उनके बीच अल्पविराम आता है। परंतु आखिरी दो शब्दों के बीच—जहाँ 'और' का प्रयोग होता है—अल्प विराम नही आता। अल्प विराम लगाने से वाक्य मे बार-बार 'और' शब्द का प्रयोग नही करना पड़ता।

उदाहरण—दिल्ली, बंबई, मद्रास और कलकत्ता भारत के प्रसिद्ध नगर है। मैं वहाँ गया, उनसे मिला और लौट आया। रास्ता बहुत लंबा, कठिन और सुनसान था। धीरे-धीरे, चुपके-चुपके, दबे पाँव चले आओ।

(2) यदि एक ही तरह के शब्दों के जोड़े प्रयुक्त हों जिनके बीच में 'और' आए तो इन जोड़ों को पृथक् करने के लिए अल्प विराम का प्रयोग होता है।

उदाहरण—सुख और दुःख, लाभ और हानि, मिलन और वियोग—सबमें

हमें अपने चित्त को स्थिर रखना चाहिए। बड़े और छोटे, ऊँचे और नीचे, धनी और निर्धन—सबका अंत एक-सा होगा।

नोट—परंतु हिंदी की प्रकृति के अनुरूप जहाँ शब्दों के जोड़े (या दो से भी अधिक शब्द) पुनरुक्ति के रूप में प्रयुक्त होते हैं, (अर्थात् उनके बीच में 'और' नहीं आता, बल्कि योजक चिह्न आता है) वहाँ अल्प विराम का प्रयोग इन जोड़ों को पृथक् करने के लिए होता है।

उदाहरण—सुख-दु:ख, लाभ-हानि, यश-अपयश—सब भाग्य के हाथ में है।

(3) वाक्य के अंतर्गत अंतर्वर्ती वाक्यांश आने पर उसके आरंभ और अंत दोनों में अल्प विराम प्रयुक्त होता है।

उदाहरण—राम, जो सबका रक्षक है, मेरी भी रक्षा करेगा।

(4) जहाँ किसी के कथन को उद्धृत किया जाए, वहाँ उद्धरण चिह्नों से पहले अल्प विराम लगता है।

उदाहरण—गाँधीजी ने कहा है, "सत्य ही ईश्वर है।"

(5) संबोधन में प्राय: अल्प विराम लगता है।

उदाहरण—राम, तुम कहाँ हो ?

नोट—परंतु संबोधन में भावावेश भी आ जाए तो विस्मयादिबोधक चिह्न प्रयुक्त होगा।

उदाहरण—नीच ! मेरी आँखों के सामने से हट जा।

(6) 'हाँ' और 'नहीं' के बाद जब कुछ और कहना हो।

उदाहरण—हाँ, मैं आ जाऊँगा। नहीं, यह मेरे वश की बात नहीं।

(7) संयुक्त वाक्य में आश्रित उपवाक्यों को पृथक् करने के लिए।

उदाहरण—मैं आना तो चाहता था, पर आ न सका। तुम्हारे मन में खोट है, इसलिए डरते हो। वह निर्धन है, फिर भी लालची नहीं।

(8) वाक्य में जहाँ समुच्चयबोधक अव्यय का लोप होता है, वहाँ अल्प-विराम आता है।

उदाहरण—जब गार्ड ने सीटी बजाई, गाड़ी चल पड़ी। मैं नहीं मानता, वह इतना महान लेखक है।

(9) वाक्य में जहाँ क्रिया की पुनरावृत्ति अभीष्ट हो, पर की न जाए।

उदाहरण—तुम उन्हें अपना समझते हो, हमें पराया। वह अवश्य सफल होगा, तुम नहीं।

(10) सर्वनाम का लोप होने पर भी अल्प विराम आता है।

उदाहरण—जो जिसे चाहे, ले जाए।

(11) किसी भी विवरण के हिस्सों को पृथक् करने के लिए।

उदाहरण—ऊँचा क़द, गोरा रंग, भूरे बाल, नीली कमीज़।

(12) बड़ी संख्याओं में हज़ार, लाख, करोड़ आदि को पृथक् करने के लिए।

उदाहरण—55, 43, 912.

अर्ध विराम—अर्ध विराम हिंदी में अपेक्षाकृत कम प्रयुक्त होता है। इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है—

(1) शब्दों के संग्रह के अंतर्गत विभिन्न वर्गों में भेद दर्शाने के लिए (एक ही वर्ग के शब्द अल्प विराम से पृथक् किए जाते हैं), जैसे शब्द कोश में।

उदाहरण—उचित, उपयुक्त; युक्तिसंगत, युक्तियुक्त, तर्कसंगत, तर्कसम्मत।

(2) इसी तरह अन्यत्र भी जहाँ कई तरह का विवरण देना हो और जगह-जगह अल्प विराम देने पर यह भ्रम पैदा हो जाए कि कहाँ एक तरह का विवरण समाप्त होता है और दूसरी तरह का शुरू, और विवरण अधूरा रह जाने के कारण पूर्ण विराम न दे सकते हों, वहाँ अर्ध विराम लगाते हैं।

उदाहरण—अंतर्राष्ट्रीय विधि; लेखक, चार्ल्स जी० फ़ेन्विक, अनुवादक, काशीप्रसाद मिश्र; प्रकाशक, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

(3) अर्ध विराम का प्रयोग ऐसे उपवाक्यों के बीच में भी होता है जो एक-दूसरे से जुड़े होने के बावजूद स्वतंत्र वाक्य प्रतीत हों; विशेषत: ऐसी स्थिति में जब बाद वाले उपवाक्य या उपवाक्यों का पूरा अर्थ लगाने के लिए पहले उपवाक्य के कुछ शब्दों से सहायता लेनी पड़े जिन्हें बाद वाले उपवाक्य या उपवाक्यों में दोहराया न गया हो।

उदाहरण—जिसे हम चाहते हैं, उसे अपना समझते हैं, जिसे नहीं चाहते, उसे पराया। राम शांत स्वभाव का था; मोहन, क्रोधी।

प्रश्नवाचक चिह्न—इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है—

(1) जिस वाक्य में प्रश्न पूछा गया हो उसके अंत में।

उदाहरण—क्या आप यहीं रहते हैं ? आप कहाँ जा रहे हैं ?

(2) जब वाक्य में प्रश्नवाचक शब्द न होने पर भी वाक्य का लहजा प्रश्नवाचक हो।

उदाहरण—आप भी पहुँच गए ? भोजन करेंगे ?

(3) ऐसे शब्दों, संख्याओं आदि के बाद कोष्ठक में, जिनके बारे में लेखक निश्चित न हो।

उदाहरण—सूरदास जन्मांध (?) थे।

शेक्सपियर (1564-1616?) के नाटक अँग्रेज़ी साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

विस्मयादिबोधक चिह्न—विस्मय, हर्ष, विषाद, भय, घृणा आदि प्रकट करने के लिए वाक्यों के अंत में इस चिह्न का प्रयोग करते हैं, चाहे वाक्य सीधा हो या प्रश्नवाचक।

उदाहरण — वाह, कितना सुंदर दृश्य है !
हाय, तुम भी इतने कठोर निकले !
मौसम कितना सुहाना है !
तुम-सा साथी और कहाँ मिलेगा !

उद्धरण चिह्न — इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है —

(1) किसी के कथन को ज्यों-के-त्यों दोहराने पर प्राय: दोहरे उद्धरण चिह्न से पृथक् करते हैं ताकि शेष कथ्य से उसे अलग पहचान सकें।

उदाहरण — राम ने कहा, "मैं पिता की आज्ञा का पालन करूँगा।"

(2) किसी बड़े उद्धरण के बीच में यदि कोई छोटा उद्धरण आ जाए तो उसे इकहरे उद्धरण चिह्न से पृथक् करते हैं।

उदाहरण — महात्मा ने कहा, "हमें 'अहिंसा परमो धर्मः' का व्रत निभाना होगा।"

(3) किसी भी विवरण में जब किसी शब्द, शब्दबंध, वाक्य या चिह्न को किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त किया जाए या किसी विशेष व्यक्ति, स्थान, परंपरा के संदर्भ में संबद्ध होने के कारण अलग दिखाना अभीष्ट हो, उसे प्राय: इकहरे उद्धरण चिह्नों में रखा जाता है।

उदाहरण — हम 'अहिंसा' के रास्ते पर चलें तो सारी आपाधापी मिट जाए।
हमें 'लोकतंत्र' की रक्षा के लिए कमर कस लेनी होगी।
जब तक 'वर्ग चेतना' नहीं आएगी, 'वर्ग संघर्ष' में गति नहीं आ सकेगी।

निर्देश चिह्न — इसके प्रयोग के नियम ये हैं —

(1) जब उपशीर्षक और उससे संबंधित विवरण एक ही पंक्ति में आते हैं तब उपशीर्षक के बाद निर्देश चिह्न लगाते हैं। उदाहरण के लिए यही विवरण देखें।

(2) जब कोई एक विवरण देने के बाद उसका कहीं संबंध निर्दिष्ट करना हो।

उदाहरण — आप यह निर्णय स्वयं करें — यही हम सब का मत है।

(3) किसी वाक्य में ऐसा अंतर्वर्ती उपवाक्य आने पर — जिसमें कोई विवरण दिया गया हो — उस उपवाक्य के आरंभ और अंत में निर्देश चिह्न लगाते हैं।

उदाहरण — तुम्हारा वही मित्र — जो कल पार्क में मिला था — आया हुआ है।

(4) संवाद में पात्रों के नाम के बाद।

(5) किसी रचना या उद्धरण के अंत में लेखक का नाम पृथक् पंक्ति में दाएँ कोने पर दिया जाता है और उससे पहले निर्देश चिह्न लगा देते हैं।

(6) जब कोई विस्तृत विवरण नई पंक्ति से शुरू करना हो, तो पिछली पंक्ति में विवरण चिह्न और निर्देश चिह्न मिलाकर (:—) लगाते हैं।

उदाहरण – निम्नलिखित शब्दों के अर्थ लिखो :—

स्थिति, दिवाकर, साधर्म्य ।

विवरण चिह्न —इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है—

(1) जब एक ही शीर्षक में मुख्य शब्द और उसके गौण अंग साथ-साथ निर्दिष्ट करने हों।

उदाहरण— नई आलोचना : समस्या और समाधान।

(2) जब पंक्ति को तोड़े बिना कोई विवरण शुरू करना हो।

उदाहरण—संज्ञा के तीन भेद हैं : व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक।

(3) विवरण चिह्न और निर्देश चिह्न मिलाकर लिखने के नियम के संबध मे निर्देश चिह्न के नियम देखिए।'

नोट—हिंदी मे विसर्ग और विवरण-चिह्न एक-से प्रतीत होते हैं। इन्हे पृथक् करने के लिए यह आवश्यक है कि विसर्ग तो अपने पूर्ववर्ती अक्षर से सटा कर लिखे जाएँ; विवरण चिह्न के दोनों ओर जगह छोड़ी जाए।

योजक चिह्न—यह निम्नलिखित स्थितियों मे लगाया जाता है—

(1) द्वंद्व समास के दोनों पदों के बीच।

उदाहरण—माता-पिता, बंधु-बांधव।

(2) ऐसी पुनरुक्तियो मे जिनके दोनो या एक घटक साधारणतः स्वतंत्र अस्तित्व रखते हों, चाहे उनमे एक ही शब्द को दोहराया गया हो; उसके पर्याय को, या विपर्याय को।

उदाहरण —नगर-नगर; घर-द्वार, सुख-दु:ख; आस-पास।

(3) जब कोई शब्द एक पंक्ति मे पूरा न आए और उसे तोड़ कर दूसरी पंक्ति तक खींचना पड़े तो पिछली पंक्ति मे आने वाले हिस्से के बाद योजक चिह्न लगाते हैं।

(4) तत्पुरुष समास होने पर यदि समस्त पद बहुत बड़ा बन जाए या उसके अर्थ मे भ्रांति पैदा हो सकती हो तो योजक चिह्न लगाते है।

उदाहरण—आनंद-निकेतन; भू-तत्त्व।

(5) साम्यसूचक 'सा', 'से', 'सी' जोड़ने से पहले।

उदाहरण—तुम-सा, बहुत-से, थोड़ी-सी।

नोट—योजक चिह्न आस-पास के शब्दों से सटा कर लगाना चाहिए, बीच मे जगह देकर नही।

कोष्ठक —इसके प्रयोग के नियम ये हैं—

(1) वाक्य या किसी शीर्षक के अंतर्गत कोई ऐसी बात जोड़ने के लिए जो मुख्य वाक्य या शीर्षक का अंश न होने पर भी उसके अर्थ या संदर्भ को स्पष्ट करे। जोड़ी गई बात को कोष्ठक मे रखा जाता है।

10

पत्र-लेखन

प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति को पत्र लिखना आना चाहिए। पत्र लिखने की आवश्यकता दूर बैठे व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करने के लिए तो होती ही है; कभी-कभी — विशेषत सरकारी काम-काज में—व्यक्तिगत रूप से या टेलीफोन पर संपर्क सुलभ होने पर भी किसी बात की आधिकारिक पुष्टि के लिए पत्र लिखना आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए, छुट्टी स्वीकार करानी हो तो इसके लिए लिखित अनुमति लेनी होगी। अतः आवेदन-पत्र लिखकर देना होगा, चाहे उसे दूर न भेजना हो।

पत्र के अंग और पत्र-लेखन की कला — पत्र कई तरह के होते हैं, और उनके लिखने के तरीके अलग-अलग हो सकते है। परंतु विभिन्न प्रकार के पत्रों मे आवश्यकतानुसार साधारणतः निम्नलिखित चीजों का समावेश होना चाहिए :

1. **सरनाम** —पत्र मे सबसे ऊपर लिखने वाले का नाम-पता दिया जाता है ताकि पाने वाला पत्र देखते ही यह जान सके कि पत्र कहाँ से आया है। नाम-पता ऊपर के दाएँ कोने में दिया जाता है, या फिर नाम बाएँ कोने पर और पता दाएँ कोने पर लिखा या छपा रहता है। यदि पत्र-प्रेषक के पास टेलीफ़ोन भी हो तो पते के ऊपर पृथक् पंक्ति मे टेलीफोन नं० भी लिख देना चाहिए। उसके नीचे दाएँ कोने पर दिनांक दिया जाता है। यदि पत्र सरकारी है तो दिनांक की सीध मे बाएँ कोने पर पत्र सं० लिखी जाती है। पत्र सं० मे उस फाइल का नंबर दिया जाता है जिसमें से पत्र जारी किया जाए। फाइल नं० के बाद प्रेषण सं० भी दी जा सकती है जो वर्ष विशेष मे कार्यालय से भेजे गए पत्रों की सम्मिलित क्रम स० की सूचक होती है।

अच्छे स्तर के पत्र मे सरनामा सुंदर अक्षरों मे छपवा लिया जाता है। सरकारी या व्यापारिक पत्रों में सरनामे के बाईं ओर, या कभी-कभी मध्य में

कार्यालय का प्रतीक-चिह्न भी छपवाया जाता है। सुरुचिसंपन्न लोग व्यक्तिगत पत्रों में भी कोई सुंदर किंतु छोटी कलाकृति सरनामे के साथ छपवा लेते हैं, और कभी-कभी सबसे ऊपर कोई सूक्ति या किसी की प्रेरक पंक्ति छपवा लेते हैं। दिनांक का स्थान भी छपाई से अंकित कराया जाता है, और यदि पत्र सं० देना अभीष्ट हो तो उसका स्थान भी अंकित कराया जाता है।

2. संबोधन —पत्र के आरंभ में पत्र पाने वाले को संबोधित किया जाता है। संबोधन बाएँ कोने पर लिखकर अल्प विराम देना चाहिए। संबोधन के लिए किस शब्द का प्रयोग करें— यह इस बात पर निर्भर है कि हम किसे और किस तरह का पत्र लिख रहे हैं। संबोधन में पत्र पाने वाले का नाम या उपनाम हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता। अनौपचारिक पत्रों में साधारणतः अपने से छोटे या बराबर वालों का नाम लिखा जाता है, बड़ों का नहीं लिखा जाता, हालांकि ऐसा कोई कठोर नियम नहीं। उदाहरण के लिए--

प्रिय राजीव/प्रिय पुत्र राजीव
प्रिय गिरीश/प्रिय मित्र गिरीश
पूज्य पिता जी/पूज्य माता जी
श्रद्धेय गुरुवर/बंधुवर/प्रियवर

सरकारी पत्रों में संबोधन के लिए साधारणतः 'महोदय/महोदया' शब्द का प्रयोग करते हैं। समकक्ष और अधीनस्थ अधिकारी या बाहर के व्यक्ति को सौजन्यवश 'प्रिय महोदय/प्रिय महोदया' भी लिखते हैं। पर यदि पत्र पाने वाला कोई विशिष्ट व्यक्ति है तो उसके लिए विशिष्ट संबोधन का प्रयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए सम्राट्/सम्राज्ञी या राजा/रानी को 'महागरिमामय/महागरिमामयी' संबोधित किया जाता है और राष्ट्रपति तथा राजदूत को 'महा-महिम' संबोधित करते हैं।

सरकारी और व्यापारिक पत्रों में साधारणतः संबोधन से पहले पत्र पाने वाले का नाम और पदनाम या केवल पदनाम और पता लिखा जाता है और उसके नीचे (साधारणतः संबोधन से पहले, और कभी-कभी बाद में) बाईं ओर 'विषय' लिखकर निर्देश चिह्न (—) दिया जाता है, और फिर संक्षेप में पत्र का विषय निर्दिष्ट किया जाता है।

(2-क) अभिवादन—अभिवादन की आवश्यकता सगे-संबंधियों, मित्रों, परिचितों आदि को लिखे जाने वाले पत्रों में होती है। कभी-कभी व्यापारिक पत्र भी इस ढंग से लिखे जाते हैं जैसे किसी मित्र को लिखे जाएँ। ऐसे पत्रों में संबोधन की जगह बंधुवर, बंधुश्री आदि लिखकर फिर अभिवादन के रूप में नमस्कार,

प्रणाम आदि लिखते हैं। अभिवादन संबोधन के बाद नई पंक्ति में हाशिया देकर लिखना चाहिए और उसके बाद पूर्ण विराम या निर्देश चिह्न देना चाहिए।

अभिवादन के लिए किस शब्द का प्रयोग करें—यह इस पर निर्भर है कि हम पत्र किसे लिख रहे हैं। बड़ों और बराबर वालों को साधारणतः नमस्कार, प्रणाम, सादर प्रणाम, आदि लिखते है। छोटों को आशीर्वाद, शुभाशीष, स्नेहाशीष आदि लिखा जाता है।

शुद्ध सरकारी और औपचारिक पत्रों में अभिवादन की आवश्यकता नहीं होती।

(3) **संदेश या पत्र की सामग्री**—अभिवादन के बाद पत्र की सामग्री आती है। यही वह संदेश होता है जिसे पत्र द्वारा भेजना अभीष्ट हो। यह उसी पंक्ति से शुरू कर देना चाहिए जिसमें अभिवादन लिखा हो। शुद्ध औपचारिक पत्रों में जहाँ अभिवादन की आवश्यकता नहीं होती, पत्र का संदेश संबोधन के बाद हाशिया देकर नई पंक्ति से शुरू कर देना चाहिए।

• सरकारी और व्यापारिक पत्रों में यह देख लेना चाहिए कि यदि उस विषय में पहले से पत्राचार हो रहा हो तो संदेश का आरंभ पिछले पत्र का संदर्भ देकर करना चाहिए। पिछला पत्र वह भी हो सकता है जिसका उत्तर भेजा जा रहा है, वह भी जो पत्र लिखने वाले ने स्वयं पहले भेजा हो और अब उसका स्मारक भेज रहा हो या उसी क्रम में कुछ और लिखना चाहता हो। संदर्भ के साथ विषय का उल्लेख भी करना चाहिए। यदि विषय ऊपर निर्दिष्ट कर दिया गया हो तो ऐसे लिख सकते है—"उपर्युक्त विषय पर कृपया अपना पत्र सं० ..दिनांक...देखें।" यदि विषय निर्दिष्ट नहीं किया गया हो ऐसे लिख सकते हैं—"...के संबंध में कृपया अपना पत्र सं०...दिनाक. .देखें।"

• यदि संदेश बहुत संक्षिप्त नहीं है तो उसे उपर्युक्त परिच्छेदों में बाँट लेना चाहिए। प्रत्येक नया तथ्य, नया तर्क, नया संकेत या नई माँग नए परिच्छेद से शुरू करनी चाहिए। औपचारिक पत्रों में पिछले संदर्भ और विषय के उल्लेख को एक परिच्छेद मान लेना चाहिए और आगे की बात नए परिच्छेद से शुरू करनी चाहिए।

• औपचारिक पत्र में विषयों का घालमेल नहीं करना चाहिए। जिस कार्यालय को हम पत्र लिख रहे है वहाँ यदि भिन्न-भिन्न विषयों पर भिन्न-भिन्न अनुभागों में कार्यवाही होनी है तो एक ही पत्र में उन विषयों को नहीं आने देना चाहिए बल्कि अलग-अलग पत्र लिखने चाहिए, हालांकि उन्हें एक ही लिफाफे में रखकर भेज सकते हैं। उदाहरण के लिए, मुख्यालय को लिखे गए पत्र में किसी कर्मचारी को छुट्टी देने और सामान भेजने की माँग एक साथ नहीं भेजनी चाहिए।

• पत्र में सीधी-साफ भाषा का प्रयोग करना चाहिए। द्वयर्थकता से बचना चाहिए। छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग उपयुक्त होगा। लंबी-चौड़ी बातें पत्र में शोभा नहीं देतीं। यदि तर्क देना आवश्यक हो तो उनमें मुख्य संकेत दब नहीं जाना चाहिए। पत्र पाने वाला यह न सोचता रहे कि पत्र भेजने वाला आखिर कहना क्या चाहता है।

• पत्र में पूरी बात आनी चाहिए। ऐसा न हो कि पत्र पाने वाले के मन में कोई संशय रह जाए और वह स्पष्टीकरण माँगता फिरे। पत्र समाप्त करने के बाद 'पुनश्च' के अंतर्गत कोई नई बात लिखना कुछ विशेष परिस्थितियों में ही उचित हो सकता है। साधारणतः यह तरीक़ा उपयुक्त नहीं।

• पत्र में सारे संकेत तर्कसंगत क्रम से आने चाहिए। ऐसा न हो कि एक बात शुरू करके बीच में दूसरी बात शुरू हो जाए; फिर पिछली बात का बचा-खुचा अंश आ जाए और इस तरह कई बातों का घालमेल हो जाए।

• पत्र की लिखाई साफ-सुथरी होनी चाहिए। लिखाई साफ न होने पर न केवल पढ़ने वाले को बहुत परिश्रम करना पड़ेगा बल्कि कहीं अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है। औपचारिक पत्र यथासंभव टाइप करा के भेजने चाहिए और उनकी एक प्रतिलिपि अपने पास रख लेनी चाहिए ताकि आगे के पत्राचार में संदर्भ के काम आ सके।

• पत्र में उपयुक्त विराम-चिह्नों का प्रयोग करना चाहिए। विराम-चिह्नों का ध्यान न रखने पर अर्थ में गड़बड़ पैदा हो सकती है।

(4) **समापन शब्द**—पत्र का संदेश समाप्त हो जाने पर अपने हस्ताक्षर करने से पहले पत्र पाने वाले से अपना संबंध व्यक्त करने के लिए समापन शब्द लिखा जाता है। कहीं-कहीं यह संबंध सौजन्य का ही सूचक होता है, और कुछ नहीं। उदाहरण के लिए, माता-पिता को तो 'आपका आज्ञाकारी पुत्र' आदि, लिखेंगे, आचार्य को 'आपका आज्ञाकारी' या 'विनीत' लिखेंगे, पुत्र या शिष्य को 'तुम्हारा' या 'शुभाकांक्षी' या 'शुभेच्छु' लिखेंगे, मित्र को 'तुम्हारा' लिखेंगे, औपचारिक पत्रों में साधारणतः 'भवदीय' लिखा जाता है। किसी को निमंत्रण दिया जाए तो अंत में 'दर्शनाभिलाषी' लिखेंगे। समापन शब्द पत्र के संदेश के बाद नई पंक्ति में दाएँ कोने पर लिखना चाहिए, और उसके बाद निर्देश चिह्न देना चाहिए।

(5) **हस्ताक्षर और नाम**—समापन शब्द के ठीक नीचे प्रेषक को अपने हस्ताक्षर करने चाहिए। हस्ताक्षर चूँकि साधारणतः सुपाठ्य नहीं होते, इसलिए उनके नीचे कोष्ठक में पत्र-प्रेषक का नाम साफ-साफ लिखा होना ठीक रहता है। औपचारिक पत्रों में नाम के नीचे पद-नाम भी देना चाहिए, हालाँकि कभी-कभी केवल पद-नाम ही दिया जाता है। यदि हस्ताक्षर किसी बड़े अधिकारी की ओर

से किए जाएँ तो उसके पद-नाम से पहले 'कृते' लिख देना चाहिए, जैसे--'कृते निदेशक', 'कृते कुलसचिव' आदि।

(6) पता—पत्र पाने वाले का पता लिफ़ाफ़े पर तो दिया ही जाएगा। औपचारिक पत्रों में पता पत्र के आरंभ में भी लिखा जाता है। अर्धसरकारी पत्रों में—जो व्यक्तिगत शैली में लिखे जाते हैं—पता पत्र के अंत में लिखा जाता है।

पता लिखते समय सबसे पहले पत्र पाने वाले का नाम आना चाहिए। औपचारिक पत्रों में नाम के बाद पद-नाम भी लिखना चाहिए, हालाँकि कभी-कभी केवल पद-नाम ही लिखा जाता है।

पता साफ़ लिखना चाहिए और यह यथासंभव नियत स्थान के ठीक बीच में होना चाहिए। नाम, स्थान और शहर अलग-अलग पंक्तियों में लिखना चाहिए, और पंक्तियों के बीच में जगह छोड़नी चाहिए ताकि घिचपिच न हो जाए। अंतिम पंक्ति में शहर के नाम के बाद (भारत में भेजे जाने वाले पत्रों में) योजक चिह्न लगाकर पिन (पोस्टल इंडेक्स नंबर) देना चाहिए ताकि डाकघर में छँटाई में देर न लगे।

लिफ़ाफ़े पर पते के लिए नियत स्थान पर बाएँ कोने में तिरछा करके यथासंभव छोटे अक्षरों में भेजने वाले का नाम-पता लिखा हो तो अच्छा रहता है। कभी-कभी भेजने वाले का नाम-पता लिफ़ाफ़े के उल्टी ओर दिया जाता है।

पत्र पाने वाले का नाम-पता देने से पहले ऊपर बाएँ कोने में अलग पंक्ति में 'सेवा में' लिखकर निर्देश चिह्न लगा देना चाहिए, और भेजने वाले का नाम-पता लिखने से पहले 'प्रेषक' लिखकर निर्देश चिह्न लगा देना चाहिए। दोनों को अलग करने के लिए एक तिर्यक रेखा खींच देनी चाहिए। पत्र पाने वाले और भेजने वाले के नाम-पते में अक्षरों के आकार में इतना स्पष्ट अंतर होना चाहिए कि संदेह या भूल की कोई गुंजाइश न रहे।

उपयुक्त मूल्य के डाक-टिकट वहीं ऊपर के दाएँ कोने पर लगाने चाहिए। टिकटों की संख्या यथासंभव कम-से-कम होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, 25 पैसे के एक टिकट की जगह दस-दस, पाँच-पाँच पैसे के टिकट लगाना ठीक नहीं। उससे डाकघर में जोड़ लगाने में भी समय लगता है, और सब टिकटों पर मोहर लगाने में भी अधिक श्रम पड़ता है।

• यदि पत्र के साथ संलग्नक भेजे जाने हों तो उनका विवरण पत्र के अंत में बाएँ कोने पर पृथक् पंक्ति में दे देना चाहिए। इसके चारों ओर कुछ जगह छूटी होनी चाहिए ताकि उस पर एकदम दृष्टि पड़े।

सरकारी पत्र का सामान्य रूप आगे दिया गया है।

कार्यालय का नाम

प्रेषक का नाम — टेलीफ़ोन नं०
पद-नाम — पता
पत्र सं०...... — दिनांक......

सेवा में,

पाने वाले का नाम
पद-नाम, पता

विषय—

महोदय,

(पत्र की सामग्री)

समापन शब्द
हस्ताक्षर

संलग्नक : ...... — (नाम)
पद-नाम

पता

डाक टिकट

सेवा में—
नाम/पद-नाम
पता

प्रेषक— पिन......
नाम
पता

नोट—सरकारी कामकाज में सामान्य पत्रों के अलावा ज्ञापन, परिपत्र, अधिकारिक आदेश आदि भी भेजे जाते हैं। इनका रूप सामान्य पत्र से भिन्न होता है। इनमें सरनामे, सं० और दिनांक के बाद बीच में पृथक् पंक्ति में 'ज्ञापन',

'परिपत्र', 'आधिकारिक आदेश' आदि लिख देते है। उसके नीचे उसकी सामग्री दे दी जाती है। चूंकि इसमें कोई संबोधन नही होता, इसलिए सारी सामग्री अन्य पुरुष मे लिखी जाती है और अंत मे समापन-शब्द भी नही लिखा जाता। हस्ताक्षर के बाद बाईं ओर पृथक् पंक्ति से शुरू करके पाने वाले/वालों का नाम/पद-नाम, पता लिखा जाता है। अन्य नियमो में कोई विशेष परिवर्तन नही होता है।

- अर्ध सरकारी पत्र व्यक्तिगत पत्र के रूप में लिखा जाता है। इसमें संबोधन में नाम/उपनाम का प्रयोग करते है और इनके अंत में समापन शब्द से पहले पृथक् पंक्ति में 'सादर' या 'शुभकामनाओं सहित' लिखा जाता है। पाने वाले का नाम, पता हस्ताक्षर के बाद बाईं ओर पृथक् पंक्ति से शुरू करते है।

11

सार-लेखन

सार-लेखन का अर्थ है निर्दिष्ट अवतरण के कथ्य को संक्षेप में प्रस्तुत करना। सार में उस अवतरण का मुख्य तत्त्व यथासंभव कम-से-कम शब्दों में रखना चाहिए। अतः वह मूल से बहुत छोटा होना चाहिए। चूंकि भिन्न-भिन्न लेखकों की शैलियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं— कई अपनी बात व्यास शैली में (अर्थात् विस्तार से) प्रस्तुत करते हैं, कई समास शैली में (अर्थात् नपे-तुले शब्दों में), इसलिए सार-लेख के आकार के बारे में कोई कठोर नियम निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता। साधारणतः सार-लेख मूल अवतरण का एक तिहाई होना चाहिए। यदि इससे भिन्न आकार की माँग की जाए तो बात दूसरी है। कुछ भी हो, आकार कम होने पर भी यह नहीं लगना चाहिए कि मूल अवतरण की कोई महत्त्वपूर्ण बात छूट गई है। कम शब्द रखने के लिए ऐसी अभिव्यक्तियाँ भी नहीं गढ़ लेनी चाहिए जो प्रचलित न हों।

सार-लेखन के नियम

सार-लेखन एक कला है जो हमारी अध्ययन-मनन की क्षमता की कसौटी होती है। सार-लेखन में निपुण व्यक्ति किसी भी कथ्य को नपे-तुले शब्दों में प्रभावशाली ढंग से व्यक्त कर सकता है, और सीमित समय, स्थान और शक्ति में भी बड़े-बड़े काम कर सकता है। इसमें संदेह नहीं कि निरंतर अभ्यास के बल पर ही सार-लेखन पर अधिकार किया जा सकता है। फिर भी सार-लेखन की प्रक्रिया के मोटे-मोटे नियम निर्दिष्ट किए जा सकते हैं जिनसे अभ्यास और कार्य-संपादन में कुछ सुविधा हो जाएगी। ये नियम हैं—

(1) मूल अवतरण को सावधानीपूर्वक पढ़ जाना चाहिए ताकि उसका सामान्य अर्थ समझ में आ जाए। यदि एक बार पढ़ने से काम न चले तो उसे कई

बार पढना चाहिए ताकि उसका भाव स्पष्ट हो जाए। एक-एक शब्द पर रुककर या बहुत धीरे-धीरे पढना लाभकर नहीं होगा क्योंकि इससे उसके मुख्य तत्त्व से ध्यान हट सकता है। पढ़ते समय यह सोचना चाहिए कि (क) लेखक किस बारे में कह रहा है ? (ख) वह क्या कर रहा है ?

(2) साधारणतः प्रस्तुत अवतरण या उसके सार का शीर्षक भी देना होता है। इसी समय उसका शीर्षक सोच लेना उपयुक्त होगा। शीर्षक एक शब्द या शब्दसंघ (phrase) के रूप में होना चाहिए या बहुत छोटे वाक्य के रूप में, जो अवतरण की मुख्य विषय-वस्तु का संकेत है। कभी-कभी प्रस्तुत अवतरण के आरंभिक या अंतिम वाक्य को ध्यान से पढ़ने पर शीर्षक सूझ सकता है, पर यह आवश्यक नही। उपयुक्त शीर्षक सूझ जाने पर सार लिखना अपेक्षाकृत सरल हो जाता है।

(3) अब आवश्यक हो तो अवतरण को फिर से पढ़ना चाहिए ताकि उसका मुख्य अभिप्राय और स्पष्ट हो जाए। यदि किसी शब्द, मुहावरे आदि का अर्थ स्पष्ट न हो तो अभ्यास करते समय शब्दकोश की सहायता ली जा सकती है। परीक्षा मे पूरे संदर्भ पर अच्छी तरह विचार करने से अर्थ स्पष्ट होने में सहायता मिलेगी। कभी-कभी एक ही शब्द या शब्दसंघ इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि उसे समझने में भूल होने पर सारा काम बिगड़ जाता है। अतः यह देख लेना आवश्यक है कि प्रस्तुत अवतरण का कोई शब्द अस्पष्ट न रह जाए।

(4) अब उस अवतरण मे से उन अंशों का चयन करना चाहिए जो मुख्य विषय से अधिक संबद्ध प्रतीत होते है। ऐसे अंशों को रेखांकित कर लेना चाहिए ताकि आखिरी दौर में उन्ही पर ध्यान केंद्रित किया जा सके। यदि मुख्य विषय स्पष्ट हो गया है तो यह चयन सरल होगा। देखना यह चाहिए कि कौन से शब्द ऐसे है जिनके वगैर वह बात कही ही नही जा सकती जो प्रस्तुत अवतरण में कहने की कोशिश की गई है; और कौन-से ऐसे हैं जिन्हें छोड़ देने पर भी बात अधूरी नही रह जाती। रेखाकित करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि सार का आकार कितना रखना है, और रेखाकित अंशों का कुल आकार सार के प्रस्तावित आकार से न बहुत अधिक होना चाहिए, न बहुत कम।

(5) अब इन रेखाकित अंशों के आधार पर, यथासंभव अपनी भाषा में, संकेत बना लेने चाहिए, ताकि सार-लेख की रूपरेखा उभर कर सामने आ जाए। इस रूपरेखा के आधार पर सार-लेख का कच्चा प्रारूप तैयार करना चाहिए।

(6) अब इस प्रारूप का मूल अवतरण से मिलान करके देखना चाहिए कि उसमें सभी महत्त्वपूर्ण बातें आ गई हैं या नही। कोई महत्त्वपूर्ण बात छूटनी नही चाहिए। अपनी ओर से कुछ जोड़ने का तो प्रश्न ही नहीं। प्रारूप में कई बार

रद्दोबदल की आवश्यकता हो सकती है।

(7) प्रारूप का अंतिम संशोधन इस दृष्टि से करना चाहिए कि उसका आकार निर्धारित या प्रस्तावित आकार से छोटा-बड़ा न हो जाए। इसके लिए मूल अवतरण के शब्दों तथा प्रारूप के शब्दों को गिन लेना लाभदायक होगा ताकि दोनों के आकार की तुलना की जा सके। सार-लेख को सही आकार में लाने के लिए फिर काट-छांट की जरूरत हो सकती है, परंतु शब्द बदलते समय मुख्य भाव या अर्थ पर आँच नहीं आनी चाहिए। अंतिम प्रारूप तैयार हो जाने पर उसका स्वच्छ रूप प्रस्तुत करना चाहिए। अंत में समुचित शीर्षक देना चाहिए।

कुछ ध्यान रखने योग्य बातें

(1) सार-लेख यथासंभव अपने शब्दों में देना चाहिए। यह मूल अवतरण के टुकड़ों को जोड़-जाड़ कर तैयार नहीं करना चाहिए। हाँ, मूल अवतरण की एकाध महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति को इसमें दोहरा सकते हैं।

(2) सार-लेख में विचारों का तारतम्य होना चाहिए, अर्थात् उसका प्रत्येक वाक्य दूसरे से इस तरह जुड़ा होना चाहिए कि पढ़ते समय विचार-प्रवाह खंडित न हो। बहुत बड़े अवतरण के सार-लेख को कई अनुच्छेदों में बाँट सकते हैं। परंतु ये ऐसे प्रतीत नहीं होने चाहिए जैसे कोई पृथक्-पृथक् संकेत हों। सार-लेख का उद्देश्य कथ्य को नया रूप देना होता है, केवल उसमें काट-छांट करके उसे छोटा कर देना नहीं।

(3) सार-लेख अपने आप में पूर्ण होना चाहिए, अर्थात् उसमें पूरा कथ्य स्पष्ट रूप में आ जाना चाहिए ताकि उसका पूरा अर्थ ग्रहण करने के लिए मूल अवतरण को या कहीं अन्यत्र देखने की आवश्यकता न पड़े।

(4) चूंकि यह सारांश मात्र होता है, इसलिए इसमें निर्दिष्ट अवतरण का मुख्य भाव या सामान्य अर्थ आना चाहिए। बोलचाल की भाषा या लंबी-चौड़ी कहावतों, पहेलियों, उदाहरणों या आलंकारिक अभिव्यक्तियों के लिए इसमें गुंजाइश नहीं होती। जो बातें अनावश्यक या अप्रासंगिक प्रतीत हों उन्हें हटा देना चाहिए। मुख्य विषय को हूबहू उतारना सार-लेख की पहली शर्त है; दूसरी शर्त यह है कि बात नपे-तुले शब्दों में कही जाए।

(5) सार-लेख सरल, व्याकरणसम्मत और प्रचलित भाषा में लिखा जाना चाहिए जिसका अर्थ ग्रहण करने में कठिनाई न हो।

(6) सार-लेख साधारणतः अन्यपुरुष की शैली में लिखना चाहिए। यदि मूल अवतरण किसी लेखक की कृति से उद्धृत किया गया है और लेखक का नाम अंत में दिया गया है तो सार लेख के आरंभ में उस लेखक का नाम देते हुए लिखना चाहिए कि अमुक लेखक ने कहा है, या उसका विचार है, इत्यादि। यदि मूल

अवतरण संवाद के रूप में है, तो भी सार-लेख के अंतर्गत उसे विवरण का रूप दे देना चाहिए और उसमे कोई बात उत्तम पुरुष या मध्यम पुरुष की शैली में नहीं रह जानी चाहिए। सर्वनामों के प्रयोग में पात्रों का घालमेल नहो. हो जाना चाहिए। अतः जहाँ ऐसी आशंका हो, वहाँ व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के प्रयोग से संकोच नही करना चाहिए। यदि मूल अवतरण में कहीं प्रश्न किया गया है, आदेश, प्रोत्साहन, चेतावनी या धमकी दी गई है तो इन स्थितियों को अपनी भाषा में व्यक्त करना चाहिए, उन्हीं के समानांतर वाक्य नहीं गढ़ लेना चाहिए।

अब हम दो अवतरण देकर उनके उपयुक्त शीर्षक और सारांश देंगे जिनमें उपर्युक्त नियमों का पालन किया गया है। अभ्यास के लिए पहले स्वयं प्रयत्न करके देख लेना चाहिए, और फिर मानक उत्तर से उसका मिलान करना चाहिए।

अभ्यास

(1)

गाधी ने अपने अहिंसा सिद्धांत द्वारा भारत के राजनैतिक जीवन में जिस सरलता, पवित्रता और ऋजुता को लाने का प्रयत्न किया है, उसके संबंध मे संदेह की जगह नही, और मानव-जाति के जीवन के लिए जो महान् संभावनाएँ दिखला दी है, उनका तो कहना ही क्या है! गांधी की शिक्षा आतंकवादी युवको को सन्मार्ग पर लगाने का आज एक प्रधान साधन है। केवल राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने मे ही नही, अंतर्राष्ट्रीय उलझनो को सुलझाने में भी सत्याग्रह का सिद्धांत काम में लाया जा सकता है। चाहे व्यक्तिगत व्यवहार हो, चाहे राष्ट्रीय और चाहे अंतर्राष्ट्रीय, गाधी बतलाते हैं कि यदि सत्य पर सदैव दृष्टि रखी जाए तो ऐसी स्थितियाँ आ ही नही सकती जो आदमी को एक दूसरे के खून का प्यासा बना दें। ऐसी दशा में यदि गलतफहमी हो भी जाए तो सत्य के न्यायालय मे उनका निराकरण आसानी से हो सकता है। बुराई का नाश करने के लिए बुरे का शत्रु होना जरूरी नही है। बुरे का मित्र होकर भी बुराई का नाश कर दिया जा सकता है। सत्य मे निष्ठा और असत्य का बहिष्कार—यही एक सीधी-सादी-सी बात है, जिससे मनुष्य-जाति के प्रायः सब संकट दूर हो सकते हैं। गांधी की सत्यनिष्ठा ने उन्हें अमर बना दिया है। यदि मानव-जाति उनके संदेश को खाली सिर झुका कर ही न सुने, उसे उत्साह के साथ काम में भी लाए, तो उसका अस्तित्व धन्य हो जाए।

शीर्षक—गांधी का संदेश

सारांश—गाधी ने अहिंसा और सत्याग्रह का संदेश देकर भारत के राजनैतिक जीवन को शुद्ध-सरल बनाया; विश्व को भी नई राह दिखाई। यह आतंकवादी

युवकों को राह पर लाने और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याएँ सुलझाने में सहायक होगा। सभी सत्य पर दृढ़ रहें तो वैर-विरोध पैदा ही न होगा, या जल्दी मिट जाएगा। बुराई को खत्म करें, बुरे को नहीं—गांधी के इस अमर संदेश का सक्रिय अनुकरण करें तो मनुष्य के दुःख दूर होंगे; उसका जन्म सार्थक हो जाएगा।

(2)

संसार में प्रत्येक सुंदर वस्तु उसी सीमा तक सुंदर है, जिस सीमा तक वह जीवन की विविधता के साथ सामंजस्य की स्थिति बनाए हुए है, और प्रत्येक विरूप वस्तु उसी अंश तक विरूप है जिस अंश तक वह जीवनव्यापी सामंजस्य को छिन्न-भिन्न करती है। अतः यथार्थ का द्रष्टा जीवन की विविधता में व्याप्त सामंजस्य को बिना जाने, अपना निर्णय उपस्थित नहीं कर पाता और करे भी तो उसे जीवन की स्वीकृति नहीं मिलती। और जीवन के सजीव स्पर्श के बिना केवल कुरूप और केवल सुंदर को एकत्र कर देने का वही परिणाम अवश्यभावी है जो नरक-स्वर्ग की सृष्टि का हुआ।

संसार में सबसे अधिक दंडनीय वह व्यक्ति है जिसने यथार्थ के कुत्सित पक्ष को एकत्र कर नरक का आविष्कार कर डाला, क्योंकि उस चित्र ने मनुष्य की सारी बर्बरता को चुन-चुन कर ऐसे ब्यौरेवार प्रदर्शित किया कि जीवन के कोने-कोने में नरक गढ़ा जाने लगा। इसके उपरांत, उसे यथार्थ के अकेले सुख-पक्ष को पुंजीभूत कर इस तरह सजाना पड़ा कि मनुष्य उसे खोजने के लिए जीवन को छिन्न-भिन्न करने लगा।

शीर्षक—यथार्थ का स्वरूप

सारांश—सुंदर वह है जो जीवन की विविधता में एकता स्थापित करे। यथार्थ के द्रष्टा को जीवन के सारे घृणित और बर्बर पक्ष का चित्रण नहीं कर देना चाहिए जैसा कि नरक की कल्पना में हुआ। इसका भयानक परिणाम यह हुआ कि मनुष्य जीवन के सामंजस्य को भुलाकर ऐसे काल्पनिक स्वर्ग को ढूँढ़ने लगा जिसमें सारे सुख निहित हों।

12

अनुवाद

एक भाषा में जो कुछ कहा जाए, उसे दूसरी भाषा में व्यक्त करना अनुवाद है। जिस भाषा से अनुवाद करते हैं उसे स्रोत भाषा कहा जाता है और उसका अनुवाद जिस भाषा में प्रस्तुत करते है, उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं।

अतः सफल अनुवादक में तीन योग्यताएँ होनी चाहिए—स्रोत भाषा का ज्ञान, लक्ष्य भाषा का ज्ञान, और उस विषय का ज्ञान जिससे संबंधित सामग्री का अनुवाद होना है।

यदि स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के व्याकरण और मुहावरे में काफ़ी समानता हो तो अनुवाद-कार्य अपेक्षाकृत सरल होता है। दूसरी ओर, स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के व्याकरण और मुहावरे में जितनी भिन्नता होगी, अनुवाद उतना ही कठिन होगा, और उसके लिए उतने ही कौशल, अभ्यास और सूझ-बूझ की जरूरत होगी। अंग्रेजी-हिंदी अनुवाद में यही भिन्नता देखने को मिलती है। इसलिए यह एक कठिन कार्य है। यदि कथ्य ही बहुत सीधा-सरल हो तो बात दूसरी है।

मोटे तौर पर, अनुवाद दो प्रकार का माना जाता है—शब्दानुवाद और भावानुवाद, हालांकि इनके बीच कोई कठोर सीमा-रेखा खींचना उपयुक्त नहीं। शब्दानुवाद में स्रोत भाषा के कथ्य को शब्दशः ग्रहण करते हुए लक्ष्य भाषा में व्यक्त करने का प्रयास होता है; भावानुवाद में अनुवादक को कुछ छूट रहती है और वह स्रोत भाषा के भाव को ग्रहण करके लक्ष्य भाषा में स्वतंत्र रूप से व्यक्त करता है। यह बात ध्यान देने की है कि यदि शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद करने की कोशिश की जाएगी तो अनुवाद अस्वाभाविक हो जाने का अंदेशा रहेगा, और यदि केवल भाव को ग्रहण करके अनुवाद किया जाएगा तो उसकी प्रामाणिकता नष्ट हो जाने का खतरा पैदा हो जाएगा। बढ़िया अनुवाद में प्रामाणिकता को

युवकों को राह पर लाने और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याएँ सुलझाने में सहायक होगा। सभी सत्य पर दृढ़ रहें तो वैर-विरोध पैदा ही न होगा, या जल्दी मिट जाएगा। बुराई को खत्म करें, बुरे को नहीं— गांधी के इस अमर संदेश का सक्रिय अनुकरण करें तो मनुष्य के दुःख दूर होंगे; उसका जन्म सार्थक हो जाएगा।

(2)

संसार में प्रत्येक सुंदर वस्तु उसी सीमा तक सुंदर है, जिस सीमा तक वह जीवन की विविधता के साथ सामंजस्य की स्थिति बनाए हुए है, और प्रत्येक विरूप वस्तु उसी अंश तक विरूप है जिस अंश तक वह जीवनव्यापी सामंजस्य को छिन्न-भिन्न करती है। अतः यथार्थ का द्रष्टा जीवन की विविधता में व्याप्त सामंजस्य को बिना जाने, अपना निर्णय उपस्थित नहीं कर पाता और करे भी तो उसे जीवन की स्वीकृति नहीं मिलती। और जीवन के सजीव स्पर्श के बिना केवल कुरूप और केवल सुंदर को एकत्र कर देने का वही परिणाम अवश्यभावी है जो नरक-स्वर्ग की सृष्टि का हुआ।

संसार में सबसे अधिक दंडनीय वह व्यक्ति है जिसने यथार्थ के कुत्सित पक्ष को एकत्र कर नरक का आविष्कार कर डाला, क्योंकि उस चित्र ने मनुष्य की सारी बर्बरता को चुन-चुन कर ऐसे ब्योरेवार प्रदर्शित किया कि जीवन के कोने-कोने में नरक गढ़ा जाने लगा। इसके उपरांत, उसे यथार्थ के अकेले सुख-पक्ष को पुंजीभूत कर इस तरह सजाना पड़ा कि मनुष्य उसे खोजने के लिए जीवन को छिन्न-भिन्न करने लगा।

शीर्षक— यथार्थ का स्वरूप

सारांश— सुंदर वह है जो जीवन की विविधता में एकता स्थापित करे। यथार्थ के द्रष्टा को जीवन के सारे घृणित और बर्बर पक्ष का चित्रण नहीं कर देना चाहिए जैसा कि नरक की कल्पना में हुआ। इसका भयानक परिणाम यह हुआ कि मनुष्य जीवन के सामंजस्य को भुलाकर ऐसे काल्पनिक स्वर्ग को ढूँढ़ने लगा जिसमें सारे सुख निहित हों।

12

अनुवाद

एक भाषा में जो कुछ कहा जाए, उसे दूसरी भाषा में व्यक्त करना अनुवाद है। जिस भाषा से अनुवाद करते हैं उसे स्रोत भाषा कहा जाता है और उसका अनुवाद जिस भाषा में प्रस्तुत करते हैं, उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं।

अतः सफल अनुवादक में तीन योग्यताएँ होनी चाहिए—स्रोत भाषा का ज्ञान, लक्ष्य भाषा का ज्ञान, और उस विषय का ज्ञान जिससे संबंधित सामग्री का अनुवाद होना है।

यदि स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के व्याकरण और मुहावरे में काफी समानता हो तो अनुवाद-कार्य अपेक्षाकृत सरल होता है। दूसरी ओर, स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के व्याकरण और मुहावरे में जितनी भिन्नता होगी, अनुवाद उतना ही कठिन होगा, और उसके लिए उतने ही कौशल, अभ्यास और सूझ-बूझ की जरूरत होगी। अँग्रेज़ी-हिंदी अनुवाद में यही भिन्नता देखने को मिलती है। इसलिए यह एक कठिन कार्य है। यदि कथ्य ही बहुत सीधा-सरल हो तो बात दूसरी है।

मोटे तौर पर, अनुवाद दो प्रकार का माना जाता है—शब्दानुवाद और भावानुवाद, हालाँकि इनके बीच कोई कठोर सीमा-रेखा खींचना उपयुक्त नहीं। शब्दानुवाद में स्रोत भाषा के कथ्य को शब्दशः ग्रहण करते हुए लक्ष्य भाषा में व्यक्त करने का प्रयास होता है; भावानुवाद में अनुवादक को कुछ छूट रहती है और वह स्रोत भाषा के भाव को ग्रहण करके लक्ष्य भाषा में स्वतंत्र रूप से व्यक्त करता है। यह बात ध्यान देने की है कि यदि शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद करने की कोशिश की जाएगी तो अनुवाद अस्वाभाविक हो जाने का अंदेशा रहेगा, और यदि केवल भाव को ग्रहण करके अनुवाद किया जाएगा तो उसकी प्रामाणिकता नष्ट हो जाने का खतरा पैदा हो जाएगा। बढ़िया अनुवाद में प्रामाणिकता को

निर्वाह भी होना चाहिए और स्वाभाविकता का भी। इन दोनों का निर्वाह अनुवादक के कौशल पर निर्भर है।

अनुवाद के सामान्य सिद्धांत

(1) जिस कृति या अंश का अनुवाद करना हो, उसे एक बार पूरा पढ़ लेना चाहिए ताकि उसका मुख्य भाव ग्रहण किया जा सके और उसके किसी भी अंश को पूरे कथ्य के परिप्रेक्ष्य में समझा जा सके।

(2) इसके बाद एक-एक वाक्य को अनुवाद के लिए लेना चाहिए। यह महत्त्वपूर्ण है कि अनुवाद की इकाई शब्द को नहीं, वाक्य को मानना चाहिए। यदि वाक्य से ध्यान हटा कर शब्दों के ही अनुवाद की कोशिश की जाएगी तो गड़बड़ पैदा हो सकती है।

(3) सबसे पहले क्रिया-पद का अर्थ मालूम होना चाहिए। यदि वह स्पष्ट न हो तो शब्दकोश की सहायता से पूरे वाक्य के संदर्भ में वह अर्थ निर्धारित करना चाहिए। चूँकि किसी भी शब्द की अनेक अर्थच्छटाएँ हो सकती हैं, इसलिए पूरे वाक्य और आस-पास के वाक्यों को भी सामने रखकर प्रस्तुत शब्द का संदर्भगत अर्थ निर्धारित करना चाहिए। शब्दों को अलग से नोट करके कोश में उनके अर्थ देखना सबसे निकृष्ट तरीका है।

(परंतु पारिभाषिक शब्दों को छाँटकर उपयुक्त पारिभाषिक शब्दावली से उनके पर्याय अलग नोट कर लेने में कोई हर्ज नहीं, शर्त यह है कि यदि कोई शब्द अर्ध-पारिभाषिक या अपारिभाषिक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तो आँख मींच कर पारिभाषिक शब्दावली से उसका पर्याय न निकाल लिया जाए, अन्यथा अनुवाद अस्वाभाविक, बोझिल और ग़लत हो सकता है।)

(4) क्रिया-पद का अर्थ निर्धारित हो जाने के बाद लक्ष्य भाषा में संभावित वाक्य की रूपरेखा उभार सकते हैं। लक्ष्य भाषा में सुगम अभिव्यक्ति के लिए वाक्यांशों का स्थान-परिवर्तन आवश्यक हो सकता है; एक जटिल वाक्य को अनेक सरल वाक्यों में तोड़ना भी पड़ सकता है। परंतु यह देख लेना चाहिए कि अन्य वाक्यों के साथ उसकी अन्विति में बाधा न आए।

(5) अब संज्ञा पदों का अर्थ निर्धारित करना चाहिए। इसके बाद विशेषणों और क्रिया-विशेषणों का। सारी प्रक्रिया में वही पद्धति अपनानी चाहिए, अर्थात् अपने शब्द-ज्ञान या शब्द-कोश का प्रयोग पूरे संदर्भ को सामने रखकर करना चाहिए।

(6) सारे अर्थ स्पष्ट हो जाने के बाद कथ्य को लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप सर्वथा सुगम और सुस्पष्ट रूप में प्रस्तुत करना चाहिए। जब शब्दों के अपने अर्थ पूरे संदर्भ के साथ जुड़ जाएँगे, तब लक्ष्य भाषा में उस संपूर्ण अर्थ को

व्यक्त करने का प्रयास होगा, और उसमें प्रामाणिकता और स्वाभाविकता दोनों आ पाएँगी। ऐसी स्थिति में, उदाहरण के लिए, यह भी आवश्यक नहीं रह जाता कि विशेषण की जगह विशेषण और क्रिया विशेषण की जगह क्रिया विशेषण ही रखा जाए। इसी तरह अनुवाद में विराम-चिह्नों का प्रयोग भी अपने ढंग से करना चाहिए, मूल का अनुकरण करते हुए नहीं। यह महत्त्वपूर्ण है कि अनुवादक स्रोत भाषा के कथ्य के अर्थ के साथ बँधा होता है, उसमें प्रयुक्त शब्दों से नहीं। उसी अर्थ को लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्ति देने के लिए उसे पुनर्रचना करनी होती है। इस तरह अनुवाद एक सचेतन प्रक्रिया है।

(७) अंत में अपने अनुवाद को (अर्थात् प्रस्तुत वाक्य को) मूल वाक्य से मिलाकर देखना चाहिए कि कहीं कुछ छूट तो नहीं गया, कहीं कुछ नया तो नहीं आ गया, और कहीं अनुवाद की भाषा अस्वाभाविक तो नहीं हो गई। ऐसी सभी त्रुटियों को यहीं सुधार लेना चाहिए। पूरी कृति या पूरे उद्धरण का अनुवाद कर लेने के बाद मूल को अलग रखकर केवल अनुवाद को पढ़ना चाहिए। यदि अब भी कहीं कुछ अटकाव हो तो उसे ठीक कर लेना चाहिए।

अब हम कुछ उद्धरणों के मानक अनुवाद देंगे जिसमें उपर्युक्त नियमों का पालन किया गया है। पाठक को चाहिए कि पहले स्वयं प्रयास करें; फिर मानक अनुवाद से मिलाकर अपनी त्रुटियों को दूर करे। उपयुक्त कौशल तो निरंतर अभ्यास के बाद ही आ पाएगा।

EXERCISES

(1)

The function of poetry is to make the life of man more full and real. It is to make him an independent hunter of the facts by which men live—the facts of the world and the facts of the universe. It enables him to escape out of the make-believe existence of every day in which perhaps an employer seems more huge and imminent than God, and to explore reality, where God and love and beauty and life and death are seen in truer proportions and where the desire of the heart is at least brought within sight of a goal. There are critics who hold that it is enough to say that art offers us an escape from life. Art, however, offers us not only an escape from life but an escape into life, and the first escape is of importance only if it leads to the second. . . . . . We often speak of the imagination as though it were a brilliant faculty

of lying; on the contrary, it is faculty by which not only do we see and hear things that the eye cannot see or the ear hear but which enables the eye to see and ear to hear, things that they did not see or hear before.

(2)

It is sometimes said that obscenity does not reside so much in the thing said as in the manner in which it is said. But as in the case of blasphemy this interpretation is not borne out by an examination of the works that have been subjected to censorship. Thus the condemnation not so long ago of such plays as 'Waste', or 'Ghosts', or 'Young Woodley', or such booksas 'The Well of Loneliness' was not based on indecency in the language used, but on the supposed social dangers of anypublic discussion of the ideas dealt with. In any case, the standards of decency vary greatly.

The advocacy of birth control was regarded as indecent a generation ago; it is so no longer. As far as the stage is concerned, the official attitude tries to follow changes in public opinion, but, as Bernard Shaw pointed out, keeps always at a respectful distance; say, twenty years behind it. On the whole, I cannot but conclude that, since indecency and obscenity are vague and obscure notions, they are not matters which can be effectively handled by the blunt machinery of the law.

(3)

The second qualification required in the action of an epic poem is that it should be an entire action.

An action is entire when it is complete in all its parts; or, as Aristotle describes it, when it consists of a beginning, a middle, and an end.

Nothing should go before it, be intermixed with it, or follow after it, that is not related to it. As on the contrary, no single step should be omitted in that just and regular process which it must be supposed to take from its original to its consumation.

(4)

War has been variously explained by different writers and schools of thought. Thus there are those who regard war as an instrument whereby gods intervene in human affairs. Another explanation of war is given in terms of what is called animism. By animism is meant the universal tendency to attribute all events in the world to deliberate activity of para-human will and the evil designs of neighbouring groups. Accordingly, all happenings—thunderstorms, hurricanes, murders and other evils—are attributed to either the magic of a neighbouring tribe or to the ill-will of demons and gods. This tendency of suspecting neighbours for the evils that befall a people culminates in war. It may, however, be noted that these causes are not capable of rational apprehension and verification. Hence, they cannot be regarded as satisfactory explanations of war.

(5)

The Ambassador, as he is the representative of his country, has to take particular care that neither by his conduct, nor by his talk does he bring discredit to his country. His style of living, while not ostentatious or extravagant, has to be such as to maintain his proper dignity. In appearance, behaviour and general contact with people, he should be careful not to forget that his individual personality is submerged in that of a representative of his country. This fact develops in many people a pompous manner and a generally formalised behaviour. But even that is better than conduct and behaviour which brings discredit to one's couutry and makes it a laughing stock. To strike a happy mean between excessive familiarity and disregard of conventions sometimes attempted by the practitioners of New Diplomacy and the pomposity and undue attachment to the rule of protocol should be the aim of an Ambassador.

अभ्यासमाला

(1)

काव्य का कार्य मनुष्य के जीवन को अधिक परिपूर्ण और अधिक यथार्थ बनाना है। इसका उद्देश्य उसे उन तथ्यों के स्वतंत्र अन्वेषण की प्रेरणा देना है जो मनुष्य के जीवन का आधार हैं—इस जगत् और इस सृष्टि से संबंधित तथ्य। यह उसे नित्यप्रति के झूठमूठ के अस्तित्व से पलायन में सहायता देता है—ऐसे अस्तित्व से कि हम जिसकी नौकरी करते हैं वह शायद हमें ईश्वर से भी अधिक विराट् और अधिक समीप प्रतीत होता है। साथ ही यह हमें यथार्थ के अन्वेषण की प्रेरणा देता है जिसमें ईश्वर, प्रेम, और सौंदर्य को सही परिप्रेक्ष्य में देखा जा सके और जहाँ हृदय की अभिलाषा को कम-से-कम सत्य के दृष्टिपथ में तो लाया जा सके। कुछ आलोचकों के मतानुसार यही कहना पर्याप्त है कि कला हमें जीवन से पलायन का अवसर देती है। देखा जाए तो कला हमें जीवन से पलायन में ही सहायता नहीं देती बल्कि यह हमें जीवन की ओर पलायन का रास्ता दिखाती है, और पहली कोटि के पलायन का महत्त्व तभी है जब उसकी परिणति दूसरी कोटि के पलायन में हो।···हम कल्पना के बारे में प्रायः ऐसी बात करते हैं जैसे यह झूठ बोलने की अद्भुत क्षमता हो। इसके विपरीत वस्तुतः यह ऐसी क्षमता है जिसकी सहायता से न केवल हम वे चीज़ें देखते और सुनते हैं जिन्हें आँखें देख नहीं सकतीं और कान सुन नहीं सकते, बल्कि यह लोगों को ऐसी चीज़ें देखने और कानों को ऐसी चीज़ें सुनने की शक्ति भी प्रदान करती है जो उन्होंने पहले कभी देखी-सुनी न हों।

(2)

कभी-कभी ऐसा कहा जाता है कि अश्लीलता किसी कृति के कथ्य में नहीं रहती बल्कि उसके प्रस्तुतीकरण की शैली में निहित होती है। परंतु ईश्वर-निंदा के मामले की तरह प्रस्तुत संदर्भ में भी यह व्याख्या उन कृतियों की जाँच करने पर सही सिद्ध नहीं होती जिन्हें आपत्तिजनक मानकर रोक लगा दी गई है। 'वेन्ट' या 'गोस्ट्स' या 'वस वुडली' जैसे नाटकों या 'द वैल ऑफ़ लोनलीनेस' जैसी पुस्तकों को निंद्य ठहराया गया था। इस निंदा का आधार यह नहीं था कि इनमें अशोभन भाषा का प्रयोग किया गया है, बल्कि सोचा यह गया था कि इनमें जो विचार प्रस्तुत किए गए हैं उनकी सार्वजनिक चर्चा से सामाजिक खतरे पैदा हो सकते हैं। कुछ भी हो, शालीनता के मानदंड कहीं कुछ होते हैं, कहीं कुछ।

पिछली पीढ़ी के समय संतति-निरोध का प्रचार अशोभन समझा जाता था, परंतु अब ऐसा नहीं समझा जाता। जहाँ तक रंगमंच का संबंध है, इसके प्रति

शासन का दृष्टिकोण बदलते हुए जनमत के पीछे-पीछे चलने की कोशिश तो करता है, परंतु जैसा कि बर्नार्ड शॉ ने कहा है, वह सदैव उससे बहुत पीछे—जैसे कि बीस साल पीछे—रह जाता है। सब मिलाकर, मैं एक ही निष्कर्ष पर पहुँच पाता हूँ कि अशोभनता और अश्लीलता चूँकि गूढ़ और क्लिष्ट धारणाएँ हैं, इसलिए क़ानून का कुंठित तंत्र इन्हें भली भाँति नहीं सँभाल सकता।

(3)

महाकाव्य मे कार्य-व्यापार में दूसरी विशेषता यह होनी चाहिए कि वह संपूर्ण कार्य-व्यापार हो। कार्य-व्यापार संपूर्ण तब होता है जब वह सर्वांगपूर्ण हो; या, जैसा कि अरस्तू ने कहा है, जब उसमें आरंभ, मध्य और अंत तीनों का समावेश हो। कोई भी ऐसी बात—जो उससे संबंधित न हो—न उससे पहले आनी चाहिए, न उसके बीच मे, न बाद में। दूसरी ओर, इस युक्तियुक्त और नियमित प्रक्रिया मे कोई भी ऐसा अवस्थान छूट नहीं जाना चाहिए जो उसके उद्‌भव से उसकी परिणति तक के क्रम में कहीं-न-कहीं आवश्यक समझा जाता हो।

(4)

विभिन्न लेखकों और विचार-संप्रदायों ने युद्ध की भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ दी हैं। अतः कुछ लोग युद्ध को ऐसा साधन मानते हैं जिसकी सहायता से देवी-देवता मानवीय क्रिया-कलाप में हस्तक्षेप करते हैं। युद्ध की एक और व्याख्या उस सिद्धांत के अनुसार की जाती है जिसे 'जीववाद' कहते हैं। 'जीववाद' से अभिप्राय वह सार्वजनीन प्रवृत्ति है जो संसार के संपूर्ण घटना-चक्र को ऐसी सुचिंतित प्रक्रिया माना जाता है जो परामानवीय इच्छा और पड़ोसी समूहों की दुर्भावना से प्रेरित होती है। इसके अनुसार सभी घटनाएँ—तड़ित-झंझा, चक्रवात, हत्याएँ और अन्य दुर्घटनाएँ—या तो पड़ोसी कबीलों के जादू-टोने का परिणाम होती हैं, या देवों और मानवों के प्रकोप का। जब लोगों पर विपत्तियाँ आती हैं तब पड़ोसियों पर संदेह किया जाता है और उसकी परिणति युद्ध के रूप में सामने आती है। परंतु यह बात ध्यान देने की है कि ये कारण तर्कबुद्धि को ग्राह्य नहीं, न इनका सत्यापन ही किया जा सकता है। अतः युद्ध की इन व्याख्याओं को संतोषजनक नहीं मान सकते।

(5)

राजदूत चूँकि अपने देश का प्रतिनिधि होता है, इसलिए उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह न तो ऐसा आचरण करे, न कोई ऐसी बात कहे जिससे उसके देश के नाम पर धब्बा लगे। उनके रहन-सहन मे बहुत तड़क-भड़क या

फिजूलखर्ची तो न झलकती हो, फिर भी यह इतना सुरुचिपूर्ण तो होना ही चाहिए कि उसकी अपनी गरिमा पर आँच न आए। अपनी साज-सज्जा, व्यवहार और मेलजोल में उसे यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि उसका अपना व्यक्तित्व अपने देश के प्रतिनिधि के व्यक्तित्व में विलीन हो जाए। इस बात से कई लोगों के व्यवहार में ठाट-बाट और बनाव की प्रवृत्ति आ जाती है। परंतु यह भी ऐसे रंग-ढंग में कहीं अच्छी है जिसमें किसी के देश की प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचे या जो उसे हास्यास्पद बना दे। नए राजनय के अनुयायी कभी-कभी लोगों से परिचय बढ़ाने लगते हैं और पुरानी परंपराओं को ताक पर रख देते हैं। दूसरा रास्ता ठाट-बाट और नयाचार के नियमों से चिपटे रहने का है। इन दोनों के बीच सुखद मध्य मार्ग अपनाना ही राजदूत का ध्येय होना चाहिए।

13

अपठित

अपठित का अर्थ 'जिसे पढ़ा न हो'। अतः जब परीक्षा में ऐसा अवतरण दिया जाता है जो निर्धारित पाठ्य पुस्तकों में से न आया हो, और उससे संबंधित प्रश्न पूछे जाते है तो इस अवतरण को 'अपठित' कहा जाता है। सार-लेखन के लिए जो अवतरण दिया जाता है, वह भी प्रायः अपठित होता है। सार-लेखन और शीर्षक सुझाने के अलावा अपठित अवतरण के सबंध में अनेक प्रश्न पूछे जा सकते हैं। मूल के एक तिहाई के बराबर सार के बजाय दसवें हिस्से के बराबर साराश या भावार्थ लिखने को कहा जा सकता है; (मूल के तिगुने के बराबर) व्याख्या माँगी जा सकती है; निर्दिष्ट शब्दों या अंशों का अर्थ देने को कहा जा सकता है; या फिर कुछ ऐसे प्रश्न पूछे जा सकते हैं जिनका उत्तर प्रस्तुत अवतरण के आधार पर देना हो।

अपठित अवतरण चूंकि पाठ्य पुस्तक से नही लिया जाता, इसलिए साधारणतः परीक्षार्थी उसकी विशेष तैयारी करके नही आया होता। अतः अपठित से सबधित प्रश्नो के उत्तर से उसके सामान्य ज्ञान तथा सोचने-समझने की क्षमता का परिचय मिलता है। परीक्षार्थियों को चाहिए कि अपनी पाठ्य पुस्तकों से बाहर अच्छी पुस्तको से उपयुक्त अवतरण छाँट-छाँट कर ऐसे प्रश्नों के उत्तर तैयार करने का समुचित अभ्यास कर लें जैसे कि साधारणतः अपठित के संदर्भ में पूछे जाते हैं।

कुछ ध्यान रखने योग्य बातें

अपठित का उत्तर देने के लिए साधारणतः इन बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(1) यदि अपठित का सार देना है या शीर्षक सुझाना है तो इसके लिए

सार-लेखन से संबंधित नियमों का पालन करना चाहिए जो कि पीछे विस्तार से दिए जा चुके हैं।

(2) अपठित का भावार्थ माँगा गया है तो सार-लेखन की प्रक्रिया को इस तरह दोहराना चाहिए कि केवल आधारभूत अंशों को रेखांकित किया जाए, अर्थात् उन्हीं अंशों को जो शीर्षक से सीधे जुड़े हैं, ताकि भावार्थ का जो अंतिम प्रारूप तैयार किया जाए वह अनुमानतः मूल अवतरण का दसवाँ हिस्सा रह जाए। भावार्थ में कोई ऐसी बात न आने पाए जिसे काट देने पर या छोटा कर देने पर भी भावार्थ का मूल स्वर सुरक्षित रह सके; मूल अवतरण की कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण बात छूट भी नहीं जानी चाहिए, जिसके कारण भावार्थ अधूरा प्रतीत हो।

(3) यदि अपठित अवतरण की व्याख्या देनी है तो भी सार-लेखन की भाँति ही प्रस्तुत अवतरण के मुख्य अंशों को रेखांकित कर लेना चाहिए। फिर प्रत्येक अंश को संकेत मानकर मूल अवतरण में उसकी व्याख्या देखनी चाहिए। फिर उसे भली भाँति समझकर विस्तार से समझाने का प्रयत्न करना चाहिए। परंतु व्याख्या सदैव प्रस्तुत कथ्य से जुड़ी होनी चाहिए; कोई नई बात उसमें अपनी ओर से नहीं जोड़नी चाहिए। व्याख्या देने के बाद कोई संकेत अस्पष्ट नहीं रह जाना चाहिए। और प्रत्येक संकेत को उसके महत्त्व के अनुसार ही विस्तार देना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं। व्याख्या में यथासंभव सरल, मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करना चाहिए। उपयुक्त कहावतें भी लाई जा सकती हैं, नए उदाहरण भी।

(4) अपठित से संबंधित प्रश्नों के उत्तर माँगे गए हैं तो पहले अपठित को दो-तीन बार पढ़ जाना चाहिए। फिर प्रस्तुत प्रश्नों को सामने रखकर मूल अवतरण में से उसका उत्तर ढूँढने की कोशिश करनी चाहिए। प्रश्न का सीमांकन स्पष्ट होना अत्यंत आवश्यक है। कहीं ऐसा न हो कि उत्तर में कोई आवश्यक बात छूट जाए या फालतू बात आ जाए। उत्तर संक्षिप्त और सुनिर्दिष्ट होना चाहिए। यदि मूल अवतरण में कुछ प्रश्न उठाकर छोड़ दिए गए हों तो परीक्षार्थी को उनमें लेखक का आशय देखना चाहिए, अपना उत्तर आरोपित नहीं करना चाहिए।

(5) यदि अपठित अवतरण निर्दिष्ट अंशों, शब्दों या अभिव्यक्तियों के अर्थ पूछे गए हों तो उत्तर में उन अंशों, शब्दों या अभिव्यक्तियों को उतारकर उनके सामने उनके अर्थ उसी तरह लिखने चाहिए जैसे शब्द कोश में दिए जाते हैं। अर्थ में यथासंभव शब्दों की सामान्य परिभाषा और व्याख्या भी देनी चाहिए, पर्याय भी। यदि प्रस्तुत शब्द की अनेक अर्थच्छटाएँ हों तो ऐसी अर्थच्छटाएँ देने की आवश्यकता नहीं जो प्रस्तुत संदर्भ से संबंधित न हों।

सार-लेखन के उदाहरण तो हम दे ही चुके हैं। यहाँ अपठित की अन्य समस्याओं से संबंधित उदाहरण दिए जाएँगे।

अभ्यास

(1)

निम्नलिखित अवतरण का भावार्थ अपने शब्दों में लिखो इसका उपयुक्त शीर्षक सुझाओ।

"हम कविता की बात करते आ रहे हैं। यह अच्छा ही हुआ था, क्योंकि नवयुग के आरंभ में अपने प्राचीनों से हमने जो कुछ वर्तमान साहित्य का पाया था, वह कविता ही थी। यहाँ हम बिना रुके कविता की बात करते जा सकेंगे। जहाँ तक कविता का संबंध है, बहुत कम दिन पहले ही हमारे साहित्यिकों को नवयुग की हवा लगी है। जिस दिन कवि ने परिपाटीविहीन रसज्ञता और रूढ़ि समर्थित काव्य कला को साथ ही चुनौती दी थी, उस दिन को साहित्यिक क्रांति का दिन समझना चाहिए, सब कुछ झाड़ फटकार कर कवि ने अपने आत्म निर्मित आधार की कठोर भूमि पर अपने आपको आजमाया। पहली बार उसने अपनी अनुभूति के ताने-बाने से एक संकीर्ण दुनिया तैयार की। संकीर्ण होने के साथ ही यह प्रसार-धर्मी थी। इस भूमि पर इस आत्म निर्मित बेड़े के अंदर खड़े होकर हिंदी के कवि ने अपनी आँखों से दुनिया को देखा, कुछ समझा। पहली बार उसने प्रश्न भरी मुद्रा से दुनिया के तथाकथित सामंजस्य की ओर देखा। उसे संदेह हुआ, असंतोष हुआ, संसार रहस्यमय दिखा। हिंदी कवि के विचार और हिंदी कविता की रूपरेखा दूसरी हो गई।"

शीर्षक—कविता का नवयुग

भावार्थ—हिंदी कविता में नवयुग तब आया जब कवि ने रस और कला के पुराने मानदंड छोड़कर अपनी ही अनुभूति से काव्य सृजन आरंभ किया।

(2)

निम्नलिखित अवतरण का उपयुक्त शीर्षक देकर उसकी व्याख्या करो और उसमें रेखांकित अभिव्यक्तियों के अर्थ लिखो। इन प्रश्नों के उत्तर भी दो: (1) क्या सौंदर्य और उपयोगिता एक ही गुण के दो पक्ष हैं? (2) सौंदर्य को किस दृष्टि से उपयोगी मान सकते हैं?

"वस्तुओं का सौंदर्य-तत्त्व उनके स्थूल उपयोग से एक भिन्न गुण है। किंतु एक भिन्न दृष्टि से देखने पर सौंदर्य भी उपयोगी समझा जा सकता है। फूल, नदी, पर्वत, बच्चे, कविता और नारी—सभी के सौंदर्य में एक लक्षित प्रभाव है जो हमारे भीतरी जीवन को पूर्ण करता है। प्रत्येक प्रकार के सौंदर्य को देखकर हमारे

हृदय में एक विशिष्ट प्रकार की अनुभूति उत्पन्न होती है जिससे हमारा जीवन समृद्ध होता है।"

शीर्षक : सौंदर्य और उपयोगिता

व्याख्या — सृष्टि में हमारे चारों ओर असंख्य ऐसी वस्तुएँ हैं जो अपने रूप-गुण और सुंदरता के कारण हमें आकर्षित और मुग्ध करती हैं। यही वस्तुएँ उपयोगी भी हो सकती हैं, अर्थात् किसी-न-किसी रूप में हमारे काम आ सकती हैं। उदाहरण के लिए, फूल सुंदर होने के अतिरिक्त इत्र बनाने के काम भी आ सकता है और लहलहाते खेत मनोहारी होने के साथ-साथ अन्न भी पैदा करते हैं, जो हमारे भोजन के रूप में उपयोगी होता है। परंतु सुंदरता और उपयोगिता—ये दोनों गुण एक दूसरे से भिन्न हैं। सुंदर वस्तु को हम इसलिए चाहते हैं कि वह सुंदर है; इसलिए नहीं कि वह हमारे लिए उपयोगी है, अर्थात् वह या तो हमारे उपभोग की वस्तु है, या ऐसी कोई वस्तु बनाने के काम आती है। परंतु इस स्थूल उपयोगिता से हटकर सोचा जाए तो सुंदरता का अपना उपयोग भी है। नीला आकाश, सूरज-चाँद-सितारे, पुष्प-पल्लव, लता-गुल्म, नदी-झरने, झील-सरोवर, वन-उपवन, पर्वत-उपत्यकाएँ, काव्य-संगीत, चंचल शिशु और युवा रमणी—इन सबका साक्षात्कार हमारे हृदय पर ऐसी अमिट छाप छोड़ देता है जिसे हम देख तो नहीं पाते, पर बहुत गहराई तक अनुभव करते हैं। अतः इससे हमारे बाह्य जीवन या नित्य-प्रति की आवश्यकताएँ चाहे पूरी न भी हों, परंतु हमारा आंतरिक जीवन—जिसका संबंध मन और आत्मा है—निश्चय ही अधिक उत्कृष्ट, मधुर, भव्य और संपन्न हो जाता है।

शब्दार्थ

सौंदर्य-तत्त्व—वह गुण जिसके कारण कोई वस्तु सुंदर प्रतीत होती है।

स्थूल उपयोग—किसी वस्तु का भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में काम आना।

लक्षित प्रभाव—ऐसा प्रभाव जिसे देखा या अनुभव किया जा सके।

समृद्ध—संपन्न, गुणमय, उन्नत, वैभवयुक्त।

प्रश्नों के उत्तर (1) किसी वस्तु का सौंदर्य और स्थूल उपयोग दो भिन्न-भिन्न गुण हैं। परंतु सौंदर्य की अपनी पृथक् उपयोगिता भी है जो उसके स्थूल उपयोग से भिन्न होती है।

(2) सौंदर्य को इस दृष्टि से उपयोगी मान सकते हैं कि सुंदर वस्तुओं का साक्षात्कार करने पर हमारी भौतिक आवश्यकताएँ भले ही पूरी न हों, उससे हमारा आंतरिक जीवन निश्चय ही अधिक समृद्ध हो जाता है।

14

मुहावरे और लोकोक्तियाँ

'मुहावरा' शब्द अरबी भाषा का है, जिसका अर्थ 'अभ्यास' 'मश्क' आदि होता है। यहां इस शब्द का प्रयोग विशेष अर्थ में किया जा रहा है। 'मुहावरा' शब्दों के उस समूह को कहते हैं जिसका प्रयोग प्रत्यक्ष अर्थ में न होकर उससे भिन्न किसी लाक्षणिक अथवा व्यंजनात्मक अर्थ में होता है। दूसरे शब्दों में मुहावरा भाषा मे ऐसे रूढ़ प्रयोग को कहते हैं जिसका वास्तविक अर्थ शब्दार्थ से भिन्न होता है। उदाहरण के लिए 'पानी-पानी होना' एक मुहावरा है। इसका शब्दार्थ या प्रत्यक्ष अर्थ 'जल-जल हो' जाना है, किंतु हिंदी में हम लोग इसका प्रयोग इस अर्थ से भिन्न 'शर्मिन्दा हो जाना' के अर्थ में करते हैं : पकड़े जाने पर मारे शर्म के वह विद्यार्थी पानी-पानी हो गया, और उसके बाद उसने कभी भी परीक्षा में नकल करने का प्रयास नहीं किया।

'लोकोक्ति शब्द का अर्थ है 'लोक की उक्ति', अर्थात् लोकोक्ति लोक मे प्रचलित ऐसा पूर्ण अथवा अपूर्ण वाक्य होता है, जिसमें कोई अनुभव की बात संक्षेप में व्यक्त रहती है। इसे कहावत भी कहते हैं। उदाहरण के लिए 'थोथा चना बाजे घना' एक लोकोक्ति है, जिसमें चना के माध्यम से बहुत ही गहरे अनुभव की बात कही गई है। इसका अर्थ है—फली के भीतर का थोथा अथवा सारहीन अत: छोटा चना बहुत आवाज करता है, अर्थात् ओछा अगंभीर या उथला व्यक्ति बहुत बढ़-चढ़कर बातें करता है।

मुहावरे और लोकोक्तियों में अंतर

(1) रचना के आधार पर—रचना के आधार पर मुहावरे और लोकोक्तियों में मुख्य अन्तर है : (क) मुहावरे प्राय: ना-अंत्य होते हैं : पानी-पानी होना, नौ दो ग्यारह होना, आकाश-पाताल एक करना, आंखों में धूल झोंकना

आदि। लोकोक्तियों में यह बात नहीं मिलती : आम के आम गुठलियों के दाम! नया नौ दिन पुराना सौ दिन; अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता। (ग) मुहावरा अपने आप में स्वतंत्र नहीं होता। प्रयोग में यह वाक्य का अंग बनकर आता है : वह शर्म के मारे पानी हो गया, सिपाही को देखते ही चोर नौ दो ग्यारह हो जाते हैं; अपना काम बनाने के लिए शरद ने आकाश-पाताल एक कर दिया; आँखों में धूल झोंक कर अपना काम निकालने की आदत तुम्हें छोड़ देनी चाहिए। इसके विपरीत लोकोक्तियाँ दूध-पानी की तरह वाक्य में घुल-मिल नहीं जातीं, बल्कि पानी में तेल की बूँद की तरह अपना अस्तित्व अलग बनाए रखती हैं : अरे भाई क्यों इस पुरानी चीज को फेंकते हो, इसका मुकाबला नई चीज नहीं कर सकती। सुना नहीं है, नया नौ दिन पुराना सौ दिन!

(2) अर्थ के आधार पर—मुहावरे में प्रायः मूल अर्थ को छोड़कर हम नया अर्थ लेते हैं, जो लक्षणा-व्यंजना पर आधारित होता है, किंतु लोकोक्ति में मूल अर्थ छोड़ते नहीं, बल्कि मूल अर्थ का ही एक प्रकार से निष्कर्ष अथवा सार उसका कथ्य होता है। उदाहरण के लिए 'पानी-पानी होना' में पहली बात है तो 'थोथा चना बाजे घना' में दूसरी बात।

महत्त्व—भाषा में सीधे शब्दों में हम जो कुछ कहते हैं, वह बहुत सशक्त, प्रभावशाली तथा आकर्षक नहीं होता, किंतु लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से उनमें सशक्तता, आकर्षण और प्रभावित करने की शक्ति आ जाती है, साथ ही थोड़े में अपनी बात सरलता और स्वच्छता से कह लेना संभव हो जाता है। इसीलिए अपने कथन को प्रभावशाली और आकर्षक बनाने के लिए इनका प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए।

प्रयोग में ध्यान देने योग्य बातें—मुहावरे अथवा लोकोक्ति के किसी शब्द के पर्याय का प्रयोग न करके मूल शब्द का ही प्रयोग करना चाहिए। 'पानी-पानी होना' को 'जल-जल होना' नहीं कह सकते और न 'आम के आम गुठलियों के दाम' को 'रसाल के रसाल……।'

यहाँ कुछ मुहावरे और लोकोक्तियाँ दी जा रही हैं—

मुहावरे

अंकुश रखना—नियंत्रण में रखना, मनमानी न करने देना।
अंग-अंग टूटना—सारे बदन में दर्द होना।
अंग-अंग ढीला होना—(1) बहुत थक जाना, थक कर चूर हो जाना;
(2) शिथिल हो जाना।
अंगार बरसाना—गर्मी में बहुत कड़ी धूप पड़ना।
अंगारे उगलना—कठोर वचन कहना, जली-कटी सुनाना।

अंगारों पर पैर रखना—जोखिम का काम करना, खतरा मोल लेना।
अंगूठा दिखाना—(1) ऐन मौके पर मना कर देना; (2) अवज्ञा कर देना।
अंजर-पंजर ढीले होना—(1) बहुत अधिक थक जाना; (2) बहुत पुराना अथवा बूढ़ा होने के कारण बेकार, शिथिल अथवा ढीला-ढाला हो जाना।
अंत न पाना—रहस्य न जान पाना, पार न पाना।
अंधे की लकड़ी—बुढ़ापे में एकमात्र सहारा।
अंधेरे घर का उजाला—(1) इकलौता बेटा; (2) एकमात्र सपूत।
अक़्ल का दुश्मन—एकदम मूर्ख।
अक़्ल के घोड़े दौड़ाना—अटकलें लगाना।
अक़्ल के पीछे लट्ठ लिए फिरना—समझाने पर भी उल्टा काम करना, मूर्खता से बाज़ न आना।
अक़्ल चरने चली जाना—(1) बेवकूफ़ी कर बैठना; (2) सोच-समझकर काम न करना।
अक़्ल दंग रह जाना—आश्चर्यचकित होना।
अक़्ल पर पत्थर पड़ना—बुद्धि से काम न करना, कुछ समझ में न आना।
अगर-मगर करना—टाल-मटोल करना।
अठखेलियां सूझना—मस्ती या मज़ाक सूझना; मौज-मज़ा करना।
अड़ियल टट्टू—जो सीधी तरह काम न करे, बीच-बीच में अड़ जाए।
अधर में लटकना—न इस पार रहना, न उस पार पहुंचना; (कोई काम) बीच में रह जाना, अधूरा रह जाना।
अपना उल्लू सीधा करना—अपना काम निकालना।
अपना-सा मुंह लेकर रह जाना—मुकाबले में हार कर शर्मिन्दा हो जाना।
अपनी खिचड़ी अलग पकाना—सबके साथ न चलकर अलग रहना।
अपने तक रखना—किसी से न कहना, गुप्त रखना।
अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारना—जानबूझकर अपने ऊपर संकट मोल लेना; अपना भविष्य बिगाड़ना।
अपने पैरों पर खड़ा होना—स्वावलंबी होना, जीविका उपार्जन करने योग्य होना।
अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना—अपनी बड़ाई आप करना।
अभयदान देना—रक्षा का वचन देना।
आंख लगाना—(1) झपकी आ जाना; नींद आ जाना; (2) प्रेम हो जाना।
आंखें ऊंची न होना/आंख ऊपर न उठना—शर्म से गड़ जाना।
आंखें खुल जाना—सच्चाई जानकर सावधान हो जाना।
आंखें चार होना—नज़र से नज़र मिलना।

आदि। लोकोक्तियों में यह बात नहीं मिलती : आम के आम गुठलियों के दाम! नया नौ दिन पुराना सौ दिन; अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता। (ख) मुहावरा अपने आप मे स्वतंत्र नहीं होता। प्रयोग में वह वाक्य का अंग बनकर आता है : वह शर्म के मारे पानी हो गया, सिपाही को देखते ही चोर नौ दो ग्यारह हो जाते है; अपना काम बनाने के लिए शरद ने आकाश-पाताल एक कर दिया; आंखों में धूल झोंक कर अपना काम निकालने की आदत तुम्हें छोड़ देनी चाहिए। इसके विपरीत लोकोक्तियां दूध-पानी की तरह वाक्य मे घुल-मिल नहीं जाती, बल्कि पानी में तेल की बूद की तरह अपना अस्तित्व अलग बनाए रखती हैं : अरे भाई क्यों इस पुरानी चीज को फेंकते हो, इसका मुकाबला नई चीज नहीं कर सकती। सुना नहीं है, नया नौ दिन पुराना सौ दिन !

(2) अर्थ के आधार पर—मुहावरे में प्रायः मूल अर्थ को छोडकर हम नया अर्थ लेते है, जो लक्षणा-व्यंजना पर आधारित होता है, किंतु लोकोक्ति में मूल अर्थ छोड़ते नही, बल्कि मूल अर्थ का ही एक प्रकार से निष्कर्ष अथवा सार उसका कथ्य होता है। उदाहरण के लिए 'पानी-पानी होना' में पहली बात है तो 'थोथा चना बाजे घना' में दूसरी बात।

महत्त्व—भाषा में सीधे शब्दों मे हम जो कुछ कहते हैं, वह बहुत सशक्त, प्रभावशाली तथा आकर्षक नहीं होता, किंतु लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से उसमें सशक्तता, आकर्षण और प्रभावित करने की शक्ति आ जाती है, साथ ही थोड़े मे अपनी बात सरलता और स्वच्छता से कह लेना संभव हो जाता है। इसीलिए अपने कथन को प्रभावशाली और आकर्षक बनाने के लिए इनका प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए।

प्रयोग में ध्यान देने योग्य बातें—मुहावरे अथवा लोकोक्ति के किसी शब्द के पर्याय का प्रयोग न करके मूल शब्द का ही प्रयोग करना चाहिए। 'पानी-पानी होना' को 'जल-जल होना' नहीं कह सकते और न 'आम के आम गुठलियों के दाम' को 'रसाल के रसाल······।'

यहां कुछ मुहावरे और लोकोक्तियां दी जा रही हैं—

मुहावरे

अंकुश रखना—नियंत्रण में रखना, मनमानी न करने देना।
अंग-अंग टूटना—सारे बदन में दर्द होना।
अंग-अंग ढीला होना—(1) बहुत थक जाना, थक कर चूर हो जाना;
(2) शिथिल हो जाना।
अंगार बरसना—गर्मी मे बहुत कड़ी धूप पड़ना।
अंगारे उगलना—कठोर वचन कहना, जली-कटी सुनाना।

अंगारों पर पैर रखना—जोखिम का काम करना, खतरा मोल लेना।
अंगूठा दिखाना—(1) ऐन मौके पर मना कर देना; (2) अवज्ञा कर देना।
अंजर-पंजर ढीले होना—(1) बहुत अधिक थक जाना; (2) बहुत पुराना अथवा बूढा होने के कारण बेकार, शिथिल अथवा ढीला-ढाला हो जाना।
अंत न पाना—रहस्य न जान पाना, पार न पाना।
अंधे की लकड़ी—बुढ़ापे में एकमात्र सहारा।
अंधेरे घर का उजाला—(1) इकलौता बेटा; (2) एकमात्र सपूत।
अक्ल का दुश्मन—एकदम मूर्ख।
अक्ल के घोड़े दौड़ाना—अटकलें लगाना।
अक्ल के पीछे लट्ठ लिए फिरना—समझाने पर भी उल्टा काम करना, मूर्खता से बाज न आना।
अक्ल चरने चली जाना—(1) बेवकूफी कर बैठना; (2) सोच-समझकर काम न करना।
अक्ल दंग रह जाना—आश्चर्यचकित होना।
अक्ल पर पत्थर पड़ना—बुद्धि से काम न करना, कुछ समझ में न आना।
अगर-मगर करना—टाल-मटोल करना।
अठखेलियां सूझना—मस्ती या मजाक सूझना; मौज-मजा करना।
अड़ियल टट्टू—जो सीधी तरह काम न करे, बीच-बीच में अड़ जाए।
अधर में लटकना—न इस पार रहना, न उस पार पहुचना; (कोई काम) बीच में रह जाना, अधूरा रह जाना।
अपना उल्लू सीधा करना—अपना काम निकालना।
अपना-सा मुंह लेकर रह जाना—मुकाबले में हार कर शर्मिन्दा हो जाना।
अपनी खिचड़ी अलग पकाना—सबके साथ न चलकर अलग रहना।
अपने तक रखना—किसी से न कहना, गुप्त रखना।
अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारना—जानबूझकर अपने ऊपर संकट मोल लेना; अपना भविष्य बिगाड़ना।
अपने पैरों पर खड़ा होना—स्वावलंबी होना, जीविका उपार्जन करने योग्य होना।
अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना—अपनी बड़ाई आप करना।
अभयदान देना—रक्षा का वचन देना।
आंख लगाना—(1) झपकी आ जाना; नींद आ जाना; (2) प्रेम हो जाना।
आंखें ऊंची न होना/आंख ऊपर न उठना—शर्म से गड़ जाना।
आंखें खुल जाना—सच्चाई जानकर सावधान हो जाना।
आंखें चार होना—नजर से नजर मिलना।

आँखें चुराना—नज़र बचाना, कतराकर निकल जाना।
आँखें डबडबाना—आँखों में आँसू भर आना।
आँखें तरसना—आँखें प्यासी होना, देखने की प्रबल इच्छा होना।
आँखें दिखाना—(1) संकेत से मना करना; (2) क्रोध से घूरना; (3) धृष्टता से पेश आना।
आँखें बिछाना—तत्परता से स्वागत करना।
आँखें नीची होना—लज्जित होना।
आँखें लड़ना—(1) प्रेम हो जाना; (2) देखा देखी होना।
आँखों का तारा—अत्यंत प्रिय।
आँखों में खटकना/गड़ना—बुरा लगना।
आँखों में खून उतरना—गुस्से से आँखें लाल होना, अत्यंत क्रुद्ध होना।
आँखो में धूल झोंकना—(1) धोखा देना; (2) बेवकूफ़ बनाना।
आँखों में रात काटना—रात-भर जागना।
आँखों में सरसों फूलना—अत्यंत प्रसन्न होना, गद्‌गद् होना।
आँच न आने देना—तनिक भी क्षति न पहुँचने देना।
आँधी के आम—ऐसी वस्तु जो बिना प्रयास के हाथ लग गई हो, सस्ती चीज।
आँसू पीकर रह जाना—हृदय का दुःख प्रकट न कर पाना।
आइने में मुंह देखना—अपनी योग्यता, रूप-रंग अथवा हैसियत पर विचार करना।
आकाश के तारे तोड़ लाना—असंभव कार्य संभव कर दिखाना, नायाब चीज हासिल कर दिखाना।
आकाश-पाताल एक कर देना—कोई प्रयत्न बाकी न रखना।
आकाश-पाताल का अंतर होना—बहुत अधिक अन्तर होना।
आग उगलना—जोश और बग़ावत से भरा वक्तव्य अथवा भाषण देना, या बातें कहना।
आग में घी डालना—और अधिक उत्तेजित करना, क्रोध को और भी बढ़ाना।
आग-बबूला होना—अत्यंत क्रोधित होना।
आग लगे पर कुआँ खोदना—मुसीबत आ पड़ने पर उसके निवारण का उपाय करना, पहले से सावधान न रहना।
आगा-पीछा करना—हीला-हवाला करना, हिचकिचाना।
आटे-दाल का भाव मालूम होना—होश ठिकाने आ जाना।
आधा तीतर, आधा बटेर—जिसमें एकरूपता और सामंजस्य न हो।
आन की आन में—तत्काल, देखते ही देखते।
आपे से बाहर होना—क्रोध में अपने ऊपर नियंत्रण न रख पाना।

आवाज उठाना/आवाज़ बुलन्द करना—विरोध या प्रतिवाद करना।
आसमान सिर पर उठाना—बहुत शोरगुल करना।
आस्तीन का साँप—ऐसा आदमी जो ऊपर से मित्र और भीतर से परम शत्रु हो, भीतर घुसकर नुकसान पहुँचाने वाला।
इधर की उधर लगाना—कान भरना, चुगली करना।
इधर कुआँ, उधर खाई—हर तरफ़ मुश्किल ही मुश्किल।
इस कान सुनना उस कान निकाल देना—ध्यान से न सुनना।
ईंट का जवाब पत्थर से देना—आक्रमण करने वाले को मज़ा चखा देना।
ईंट से ईंट बजाना—नष्ट-भ्रष्ट कर देना।
ईद का चाँद होना—दर्शन दुर्लभ होना।
ईश्वर को प्यारा हो जाना—मृत्यु हो जाना।
उँगली उठाना—बुराई करना, निंदा या बदनामी करना।
उँगली पकड़कर पहुँचा पकड़ना—थोड़ी-सी ढील मिलने पर पूरा अधिकार करने की चेष्टा करना, क्रमशः अधिकार करते जाना।
उँगली पर नचाना—पूरी तरह वश में रखना, जैसे चाहे वैसे चलाना।
उड़ती खबर—अफ़वाह, सुनी-सुनाई, ऐसी खबर जिसकी पुष्टि न हुई हो।
उड़ती चिड़िया पहचानना—बहुत अनुभवी होना, मामूली संकेत से सब-कुछ समझ लेना।
उधेड़-बुन—(1) तर्क-वितर्क; (2) परिणामहीन सोच-विचार।
उन्नीस-बीस का फ़र्क होना—मामूली-सा फ़र्क होना।
उल्टी गंगा बहाना—जो जैसे होता आया है उसके प्रतिकूल करना, अनहोनी बात करना।
उल्टी-सीधी सुनाना—बुरा-भला कहना।
उल्लू बनाना—मूर्ख बनाना।
उल्लू बोलना—उजाड़ होना।
एक से इक्कीस होना—फलना-फूलना, समृद्ध होना।
एड़ी-चोटी का जोड़ लगाना—भरपूर जोर लगाना, हर संभव साधन जुटाकर प्रयत्न करना।
एड़ी-चोटी का पसीना एक करना—घोर परिश्रम या प्रयत्न करना।
औसान खता होना—होश उड़ जाना, घबराहट के मारे कुछ भी कर-धर न पाना।
कंधे से कंधा मिलाकर चलना—एक-दूसरे को सक्रिय सहयोग देना, साथ-साथ चलना।
कच्चा चिट्ठा खोलना—भंडा-फोड़ करना, गुप्त रहस्य खोल देना।

कमर कसना—तैयार होना, दृढ़ निश्चय कर लेना।
कमर टूटना—उत्साह टूट जाना, भारी दुःख पहुँचना, एकदम निराश हो जाना।
क़लई खुलना—(1) भेद खुल जाना; (2) भीतर की हीनता प्रकट हो जाना।
क़लम तोड़ देना—मार्मिक बात लिख जाना, बहुत अच्छा लिखना।
कलेजा छलनी होना—बेहद व्यथित होना, लगातार कष्टों-क्लेशों के कारण हृदय अत्यंत दु:खी होना।
कलेजा टूक-टूक होना—अकस्मात् विपत्ति आने से हृदय को गहरा आघात पहुँचना, गहरे मानसिक आघात से हृदय विदीर्ण होना।
कलेजा ठंडा होना—संतोष होना, शान्ति मिलना।
कलेजा फटना/कलेजा मुँह को आना—मन अत्यंत दुःखी होना, दारुण व्यथा होना।
कलेजे पर पत्थर रखना—विपत्ति में धैर्य धारण करना, जी कड़ा करना।
कलेजे से लगाकर रखना—बेहद स्नेह के कारण कभी अपने से अलग न करना; अपने पास अथवा अपनी देख-रेख में प्यार से रखना।
कसौटी पर कसना—अच्छी तरह जाँच-परख करना।
कसौटी पर खरा उतरना—परीक्षा में सफल होना।
कहने में आना—बहकावे में आना।
काँटे बिछाना—अनिष्ट की योजना बनाना, कार्य में बाधा उपस्थित करना।
काँटों में घसीटना—आवश्यकता से अधिक प्रशंसा, बहुत सम्मान देकर लज्जित करना।
काग़ज़ काले करना—व्यर्थ की बातें लिखना।
काठ का उल्लू होना—निपट मूर्ख होना।
कान कतरना अथवा कान काटना—बहुत चतुर निकलना, चतुराई में किसी को बहुत पीछे छोड़ जाना।
कान का कच्चा—(1) बात सुनकर तुरन्त यक़ीन कर लेने वाला; (2) किसी की शिकायत, चुगली आदि को सच मान लेने वाला।
कान पर जूँ न रेंगना—बार-बार कहने पर भी कोई असर न होना।
कानों-कान खबर न होना—बिल्कुल पता न चलना।
कानों को हाथ लगाना—तौबा करना, फिर न करने की क़सम खाना।
काम आना—(1) उपयोगी होना; (2) युद्ध में वीरगति प्राप्त करना।
काम तमाम कर देना—मार डालना।
काया-पलट होना—(1) बिल्कुल बदल जाना; (2) एकदम नया रूप ग्रहण कर लेना।
काल के गाल में चले जाना—मर जाना।
कुआँ खोदना—(किसी के) अनिष्ट या विनाश की योजना बनाना।

कुत्ते की दुम—जो सदा कुटिल रहे, जिसमें किसी भी तरह का कोई अच्छा परिवर्तन न आए।
खटाई में पड़ना—कोई काम बीच में रुक जाना या अधूरा रह जाना।
खरी-खोटी सुनाना—भला-बुरा कहना।
खालाजी का घर—आसान काम; ऐसा स्थान जहां आराम ही आराम हो।
खुशामदी टट्टू—जो आत्मसम्मान छोड़कर सदा खुशामद में लगा रहे।
खून का प्यासा होना—जानी दुश्मन होना।
खून खौलना—अत्यंत क्रोधित होना।
ख्याली पुलाव पकाना—असंभव बातें सोच-सोचकर मन को प्रसन्न करना।
गड्ढा खोदना—(किसी के) अनिष्ट या विनाश की योजना बनाना।
गड़े मुर्दे उखाड़ना—बीती हुई बातों को व्यर्थ में दोहराना।
गढ़ जीत लेना—कोई बहुत कठिन और श्रेय का काम करना।
गर्दन पर सवार होना—पीछे पड़ जाना।
गले का हार होना—अत्यंत प्रिय होना।
गागर में सागर भरना—थोड़े शब्दों में बहुत बड़ी बात कह जाना।
गाल बजाना—बढ़-चढ़कर बातें करना, लम्बी-चौड़ी बातें करना।
गिन-गिनकर दिन काटना—बड़े कष्ट से समय बिताना।
गिरगिट की तरह रंग बदलना—(1) जल्दी-जल्दी विचार बदलना; (2) कभी किसी की तरफ़ होना, कभी किसी की तरफ।
गीदड़ भभकी—झूठा डरावा।
गुड़ गोबर कर देना—बना-बनाया काम बिगाड़ देना।
गुदड़ी का लाल—देखने में फटेहाल, किन्तु वास्तव में अत्यंत गुणी।
गूलर का फूल—असंभव अथवा सर्वथा दुर्लभ वस्तु।
गोबर गणेश—निपट मूर्ख और आलसी व्यक्ति।
घड़ों पानी पड़ना—बेहद लज्जित होना।
घाट-घाट का पानी पिए होना—तरह-तरह से अनुभवों से युक्त होना।
घास खोदना—वृथा काम करना, व्यर्थ समय गँवाना, कोई भी अनुभव या संपत्ति अर्जित न कर पाना।
घी के दिये जलाना—खुशियाँ मनाना।
घुटने टेक देना—आत्म-समर्पण कर देना, हार मान लेना।
घोड़े बेचकर सोना—एकदम निश्चिंत होकर सोना।
चकमा देना—धोखा देना।
चल बसना—मृत्यु होना।
चार चाँद लगाना—शोभा बहुत बढ़ा देना।

चिकना घड़ा—ऐसा व्यक्ति जिसे किसी भी तरह शर्म न आए, निर्लज्ज ।
चिकनी-चुपड़ी बातें करना—बहकावे या धोखा देने के लिए मीठी-मीठी बातें करना; खुशामद के लिए अच्छी-अच्छी बातें करना ।
चींटी के पर निकलना—(1) किसी ऐसे व्यक्ति से टक्कर लेना जिससे मौत निश्चित हो; (2) कुछ ऐसा करना शुरू करना जिससे अपने ऊपर बन आए ।
चुल्लू भर पानी में डूब मरना—बेहद शर्मिंदा होना, शर्म के मारे डूब मरना ।
छक्के छुड़ाना—(पारस्परिक मुठभेड में) दुर्दशा कर देना; हरा देना ।
छठी का दूध याद आना—ऐसी दुर्गत होना जैसी जीवन में पहले कभी न हुई हो, बहुत दुर्दशा होना ।
छाती पर मूंग दलना—सामने या पास रहकर (किसी के लिए) निरंतर दुःख का स्रोत बने रहना ।
छाती पर साँप लोटना—ईर्ष्या या डाह से अत्यंत दुःखी होना ।
छीछालेदर करना—बुरी हालत करना, दुर्गत कर देना । (कुछ क्षेत्रों में इसमें 'छीछालेदार' भी कहते हैं ।)
छोटे मुँह बड़ी बात—हैसियत से बढ़कर बात करना ।
जली-कटी सुनाना—भला-बुरा कहना, खरी-खोटी सुनाना ।
जले पर नमक छिड़कना—कष्ट में और कष्ट देना, दुःखी व्यक्ति पर व्यंग्य करके उसे और भी दुःखी करना ।
ज़हर उगलना—बहुत कड़वी बातें करना ।
जान के लाले पड़ना—जीना दूभर हो जाना, अत्यंत कष्ट में पड़ना ।
जान पर खेलना—जान की परवाह न करके किसी काम में कूद पड़ना, जान जोखिम में डाल देना ।
जान हथेली पर रखना—मरने की परवाह न करना ।
जी खट्टा होना—अरुचि होना, मन फिर जाना ।
जी तोड़कर काम करना—दिल लगाकर परिश्रम से काम करना ।
जूती चाटना—अपनी इज्ज़त का कुछ भी ख्याल न करके किसी की खुशामद करना ।
जौहर दिखाना—(1) पराक्रम का प्रमाण देना; (2) खूबी या गुण का प्रदर्शन करना ।
झंडा गाड़ना—धाक जमाना ।
झाँसा देना—धोखा देना ।
टका-सा जवाब देना—साफ़ इनकार कर देना ।
टक्कर का—मुकाबले का, वह जो बराबरी कर सके ।

टस से मस न होना—(1) अपनी जगह या अपनी ज़िद पर अड़े रहना; (2) किसी की भी बात न सुनना।
टांग अड़ाना—बेकार दखल देना, बाधा डालना।
टूट पड़ना—वेग से धावा बोल देना, ज़ोरों से आक्रमण कर देना।
टेढ़ी खीर—अत्यंत कठिन कार्य, अत्यंत जटिल समस्या।
ठकुरसुहाती कहना—चापलूसी की बातें करना, जिसको जैसी भाए, वैसी बातें करना।
ठगा-सा रह जाना—आश्चर्यचकित रह जाना।
ठोकरें खाना—मारे-मारे फिरना, कहीं शरण न पाना।
डंके की चोट पर—स्पष्ट घोषणा करके, सबको सुनाकर।
डींग मारना/हांकना—बढ़-चढ़कर बातें करना।
डोरे डालना—प्रेम के जाल में फँसाना।
ढिंढोरा पीटना—किसी बात को लोगों में फैलाना, कोई बात चारों ओर प्रचारित कर देना।
ढेर करना—मार कर गिरा देना।
तलवार की धार पर चलना—अत्यंत कठिन और जोखिम का काम करना।
तलवे चाटना—आत्म-सम्मान खोकर दूसरे की खुशामद करना।
तहस-नहस करना—नष्ट-भ्रष्ट करना, ध्वस्त करना।
ताक पर रखना—उपेक्षा करना, कोई महत्त्व न देना।
ताक में रहना—मौके की तलाश में रहना।
तारे गिनना—रात में नींद न आना, बेचैनी से रात काटना।
ताल-ठोकना—लड़ाई के लिए ललकारना।
ताव आना—(1) क्रोध आना; (2) जोश आना।
तिल का ताड़ बनाना—छोटी-सी बात को बहुत बड़ी बना देना।
तिलांजलि देना—सदा के लिए त्याग देना।
तीन-तेरह करना—तितर-बितर करना, संगठित न रहने देना।
तूती बोलना—प्रभाव जमना, धाक जमना, दबदबा होना, बोलबाला होना।
तूल देना—किसी बात या मामले को बढ़ा देना।
त्रिशंकु की-सी गति होना—कहीं का न रहना, बीच में लटके रहना।
थाली का बैंगन—ऐसा आदमी जिसका कोई सिद्धांत न हो, कभी इस तरफ हो जाए तो कभी उस तरफ, ढुलमुलयकीन।
दबी ज़बान से कह देना—धीरे-से, संकोच और संकेत से कह देना।
दबे पाँव आना—चुपचाप धीरे-से आना ताकि आहट भी न हो।
दम तोड़ना—आखिरी साँस लेना, मर जाना।

दाँत खट्टे करना—बुरी तरह हरा देना।
दाँत दिखाना—गिड़गिड़ाकर प्रार्थना करना, अपनी विवशता प्रकट करना।
दाँत पीसना—क्रोध प्रकट करना।
दाल गलना—(1) बस चलना; (2) मतलब निकलना।
दाल-भात में मूसलचंद—बने बनाए काम मे रुकावट डालने वाला, रंग में भंग करने वाला।
दाल में कुछ काला होना—रहस्य की कोई-न-कोई बात होना, संदेह की बात होना।
दिन दूनी रात चौगुनी—खूब उन्नति करना।
दिन पूरे होना—मृत्यु या अंत निकट होना।
दिमाग सातवें आसमान पर होना—बहुत घमंड होना।
दिल की कली खिलना/दिल बाग़-बाग़ होना—चित्त प्रसन्न अथवा प्रफुल्लित होना।
दुम दबाकर भागना—डरकर भाग या हट जाना।
दूध का धुला—जिस पर कोई कलंक न हो, निर्दोष।
दूध पीता बच्चा—नासमझ, नादान।
दूर की कौड़ी लाना—कोई ऐसी बात सोच निकालना जिस पर किसी का ध्यान न गया हो, खींच-तान कर के दूर का सूत्र जोड़ने की कोशिश करना।
दूर से ही नमस्कार करना—पास न आने देना, दूर रहना।
दो कौड़ी का—तुच्छ, घटिया।
दो टूक जवाब देना—साफ़ इनकार कर देना।
धरती पर पाँव न पड़ना—बहुत खुश होना, ख़ुशी से फूले न समाना।
धावा बोलना—पूरे जोर-शोर से आक्रमण कर देना।
धुन का पक्का—वह जो किसी काम में लग जाए तो उसे पूरा करके ही रहे, लगनवाला (व्यक्ति)।
धुन सवार होना—(कोई काम) करने की लगन होना।
धूप में बाल सफ़ेद नहीं किए हैं—अनुभवहीन नहीं हैं।
धूल में मिला देना—नष्ट-भ्रष्ट कर देना, बेकार कर देना।
नक़्क़ारख़ाने में तूती की आवाज होना—ऐसी आवाज़ होना जिस पर कोई ध्यान न दे, या जिसका कोई महत्त्व न हो।
नमक मिर्च लगाना—किसी बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहना।
नाक-भौं सिकोड़ना—अरुचि, घृणा या अप्रसन्नता आदि व्यक्त करना।
नाक रगड़ना—बहुत दीनता दिखाते हुए विनती करना।

नाकों चने चबवाना—बहुत तंग करना।
निन्यानबे के फेर में आना—संपन्नता बढ़ाने की फ़िक्र में रहना, किसी ऐसे चक्कर में फँस जाना जिसका कोई अंत न हो।
नींव का पत्थर—मूल आधार।
नौ दो ग्यारह होना—एकदम चंपत हो जाना।
पंथ निहारना—राह देखना, प्रतीक्षा करना।
पत्थर की लकीर—अटल बात, ऐसी बात जो काटी या बदली न जा सके।
परलोक सिधारना—मर जाना।
पलक पाँवड़े बिछाना/पलकें बिछाना—सप्रेम स्वागत करना।
पहाड़ टूट पड़ना—बहुत बड़ी आफ़त आ जाना।
पहुँचा हुआ—पारंगत, सिद्ध, जिसे सिद्धि प्राप्त हो।
पाँव उखड़ जाना—(1) अस्थिर या डावाँडोल हो जाना; (2) हार जाना।
पाँव तले की जमीन खिसक जाना—होश गुम हो जाना, होश-हवास खो बैठना।
पानी का बुलबुला—अस्थायी, क्षणभंगुर।
पानी न माँगना—तुरंत मर जाना।
पानी-पानी होना—बेहद लज्जित होना।
पानी फेर देना—बर्बाद कर देना, बेकार कर देना।
पानी में आग लगाना—असंभव को संभव कर देना; शांति की स्थिति में झगड़ा पैदा कर देना।
पापड़ बेलना—(1) जगह-जगह मारे-मारे फिरना, बहुत दुःख झेलना।
पार उतारना/लगाना—उद्धार करना, कष्ट से मुक्त करना।
पार पाना—(1) जीतना; (2) बराबरी करना; (3) रहस्य जान लेना।
पारा चढ़ना—गुस्सा आना।
पासंग भी न होना—तुलना में अत्यंत तुच्छ होना।
पीठ ठोकना—प्रोत्साहित करना, हौसला बढ़ाना।
पीठ दिखाना—(युद्ध-क्षेत्र में) भाग जाना, पराजय स्वीकार करना।
पेट में चूहे कूदना—बहुत भूख लगना।
पेट में दाढ़ी होना—छोटी उम्र में बहुत चालाक होना।
पोल खोलना—रहस्य प्रकट करना, किसी की कमी या कमजोरी जाहिर कर देना।
प्रकाश डालना—स्पष्ट करना, समझाना, विवेचन करना, उजागर करना।
फूँक-फूँककर पैर रखना—बहुत सावधानी से काम करना।
फूटी आँख न सुहाना—तनिक भी अच्छा न लगना, बहुत बुरा लगना।
फूला न समाना—अत्यंत प्रसन्न होना।

बंदर घुड़की—झूठा डरावा।
बच्चों का खेल—सरल कार्य।
बदन चुराना—लाज से सिमट-सिमट जाना।
बराबर कर देना—मुश्किल या मेहनत से पाई हुई चीज गँवा देना।
बाँछें खिल जाना—अत्यंत प्रसन्न-वदन दिखाई देना, बहुत खुश हो जाना।
बाट जोहना—राह देखना, प्रतीक्षा करना।
बाल की खाल निकालना—(1) बेहद बारीकियों में जाना; (2) नुक्ताचीनी करना।
बाल बाँका न होना—तनिक भी आँच न आना, कुछ भी हानि न पहुँचना।
बाल-बाल बचना—मुसीबत में पड़ते-पड़ते बच जाना।
बालू की भीत—क्षणस्थायी, जो ठोस और दृढ़ न हो।
बीड़ा उठाना—कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करने का संकल्प करना अथवा जिम्मेदारी लेना।
बेड़ा पार लगाना—उद्धार करना, कष्ट से मुक्त करना।
बेसिर-पैर का—जिसमें कोई क्रम, व्यवस्था या संगति न हो, असंगत।
भंडा फोड़ना—भेद खोलना।
भनक पड़ना—सुनाई पड़ना।
भाड़े का टट्टू—किराये का आदमी।
भेड़ चाल/भेड़िया धसान—अंधाधुंध अनुकरण।
मक्खन लगाना—चापलूसी करना।
मक्खी पर मक्खी मारना—बिना सोचे-समझे ज्यों-की-त्यों नकल करना।
मक्खियाँ मारना—कुछ भी काम न करना, निकम्मे समय काटना।
मटियामेट कर देना—नष्ट-भ्रष्ट कर देना।
मन के लड्डू खाना—निरर्थक आशा में प्रसन्न होना।
मन छोटा करना—किसी चीज़ के प्राप्त न होने पर निराश होना।
मल्हार गाना—प्रसन्नता प्रकट करना।
माथा रगड़ना—दीनता दिखाते हुए खुशामद करना।
मिट्टी का माधो—निपट मूर्ख।
मिट्टी में मिला देना—(1) नष्टभ्रष्ट कर देना; (2) बेकार कर देना।
मुंहतोड़ जवाब देना—निरुत्तर कर देना।
मुँह मोड़ना—विमुख होना।
मुँह लटकाना—रुष्ट हो जाना।
मुँह से फूल झड़ना—मधुर और प्यारी बातें करना।
यमपुर पहुँचाना—मार डालना।

रंग में भंग होना—मज़ा किरकिरा होना।
रँगा सियार—(1) धूर्त; (2) ऊपर से कुछ, भीतर से कुछ।
राई से पर्वत करना—छोटी-सी बात या छोटी-सी चीज़ को बहुत बड़ी बना देना।
रोड़ा अटकाना—बाधा डालना, अड़चन डालना।
लंकाकांड होना—मार-काट अथवा लड़ाई-झगड़ा होना।
लकीर का फ़कीर—परंपरा का अंधानुकरण करने वाला।
लकीर पीटना—परंपरा का अंधानुकरण करना।
लट्टू होना—मोहित होना।
लुटिया डुबोना—सर्वनाश करना।
लेना एक न देना दो—कोई सरोकार न होना।
लोहा लेना—वीरता से मुकाबला करना।
लोहे के चने चबाना—अत्यंत कठिन कार्य में लगना।
शामत आना—पिटने या मुसीबत में फँसने की घड़ी आना।
शेखी बघारना—डींग हाँकना, बढ़-चढ़कर बातें करना।
शेर के दाँत गिनना—अत्यंत साहस का कार्य करना।
श्रीगणेश करना—कोई कार्य आरंभ करना।
सत्यानाश करना—पूरी तरह बर्बाद कर देना।
सफ़ाचट करना—(1) खत्म कर देना; (2) खा लेना, खा डालना।
सफ़ाया करना—(पूरी सेना आदि को) मार डालना; पूरे घर, शहर इत्यादि को लूट लेना, बरबाद कर देना।
सब्ज़ बाग़ दिखाना—व्यर्थ की आशा बँधाना।
साँचे में ढला—अत्यंत सुगठित और सुडौल।
साँप-छछूँदर की-सी दशा होना—दुविधा में पड़ना।
सात घाट का पानी पिए होना—तरह-तरह के अनुभवों से युक्त होना।
सात तालों के अंदर रखना—बहुत सुरक्षित रखना, ऐसी जगह रखना जहाँ किसी की पहुँच न हो।
सात-पाँच करना—छल-कपट करना।
सिक्का जमाना—प्रभाव जमाना, धाक जमाना।
सिट्टी-पिट्टी गुम होना—होश-हवाश गुम होना।
सितारा बुलंद होना—भाग्य का उत्कर्ष होना।
सिर-माथे पर बैठाना—बहुत आदर देना।
सीधी सुनाना—स्पष्ट शब्दों में कह देना।
सुनी-अनसुनी कर देना—सुनकर भी ध्यान न देना।
सोने की चिड़िया—अत्यंत सुंदर और सम्पन्न देश अथवा व्यक्ति आदि।

सोने में सुगंध होना—एक अच्छे गुण के साथ दूसरे दुर्लभ गुण का संयोग होना, और भी अच्छा हो जाना।

हँसी-खेल—आसान काम।

हथियार डाल देना—(1) हार मान लेना; (2) आत्म-समर्पण कर देना।

हवा से बातें करना—बहुत तेज़ चलना।

हाँ में हाँ मिलाना—(1) हर बात में साथ देना; (2) चापलूसी करना।

हाथ की कठपुतली होना—(किसी के) वश में होना; (किसी के) इशारे पर ही सब काम करना।

हाथ पर हाथ धर कर बैठना—निश्चेष्ट बैठे रहना, कुछ भी प्रयत्न न करना।

हाथ बटाना—साथ देना, सहायता करना।

हाथ मलते रह जाना—पछताते रह जाना।

हाथों के तोते उड़ जाना—बहुत घबरा जाना।

हाथों हाथ बिक जाना—लाते ही बिक जाना, तुरत बिक जाना।

होश उड़ जाना/गुम हो जाना—घबरा जाना, कुछ भी न सूझना।

होश ठिकाने होना—घमंड चूर होना।

लोकोक्तियाँ

अंत भले का भला—जो दूसरों के साथ भलाई करता है, अंत में उसका अपना भी भला होता है।

अंत भला सो भला—जो कार्य अंत में अनुकूल रहे, वही ठीक समझा जाना चाहिए।

अंधा क्या चाहे दो आँखें—जिसे जिस वस्तु की सबसे अधिक आवश्यकता या इच्छा हो, वह उसे मिल जाए तो फिर उसे और क्या चाहिए।

अंधा क्या जाने बसंत की बहार—जिसने जो देखा नहीं उसकी विशेषता वह क्या जानेगा।

अंधा बाँटे रेवड़ी, फिर-फिर अपनों ही को दे—जहाँ गुणों और योग्यताओं को न देखकर अपने सगे-संबंधियों को ही पूरा लाभ पहुँचाया जाता हो।

अंधे के आगे रोए दोनों नैना (दीदा) खोए—जो किसी का दुखदर्द नहीं समझता उसके आगे अपना दुख व्यक्त करने में अपनी ही हानि है, लाभ कोई नहीं।

अंधों में काना राजा—जहाँ सभी अयोग्य हों वहाँ थोड़ी-सी योग्यता होने पर भी कद्र होती है।

अंधेर नगरी चौपट राजा—जहाँ अंधेरगर्दी, धाँधली और अन्याय का ही बोलबाला हो।

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता—अकेला व्यक्ति चाहे जितना जोर लगा ले, पूरे ढांचे या पूरे समाज को नही बदल सकता।

अपना पैसा खोटा तो परखने वाले का क्या दोष—अपनी ही चीज़ या अपनी ही संतान बुरी हो और कोई उसकी आलोचना करे तो बुरा नही मानना चाहिए, न आलोचक को बुरा समझना चाहिए।

आँख के अंधे नाम नयनसुख—ऐसा व्यक्ति जिसके नाम और गुण एकदम विरोधी हो—जिसमें गुण तो न हो पर नाम मे लगे मानो वही उसका विशेष गुण है।

आप मरे जग परलै—जब हमीं नही रहेंगे तब हमारे जाने से हमारे लिए तो प्रलय हो जाएगी अर्थात् संसार ही मिट जाएगा।

आपत्ति काले मर्यादा नास्ति—आपत्ति आ जाने पर धर्म-अधर्म का विचार नही रह जाता, तब अपनी रक्षा के लिए जो कुछ भी किया जाए, उचित होता है।

आम के आम गुठलियों के दाम—ऐसा सौदा जिसमें सब प्रकार से लाभ ही लाभ हो।

आम खाने से मतलब या पेड़ गिनने से ?—व्यर्थ की बातो मे न उलझकर सीधे मतलब की बात पर ध्यान देना चाहिए।

आसमान से गिरा, खजूर में (पर) अटका—जब कोई काम बनते-बनते रह जाए या कोई मुसीबत टलते-टलते फिर गले पड़ जाए तो कहते हैं।

ईश्वर की माया कहीं धूप नहीं छाया—संसार की विचित्रता, संसार में सुख-दुःख दोनों हैं, इन्हें ईश्वर की इच्छा मानकर स्वीकार कर लेना चाहिए।

उल्टा चोर कोतवाल को डांटे—जब अपराधी स्वयं अपराध करके दूसरों को उसके लिए डांटने लगे तो कहते हैं।

ऊँची दूकान फीका पकवान—टीम-टाम बहुत, सार कुछ भी नही।

ऊँट के मुँह में जीरा—जहाँ आवश्यकता बहुत अधिक हो पर बहुत थोड़ी वस्तु दी जाए।

ऊँट-घोड़े बहे जाएँ, गधा कहे कितना पानी—जहाँ बड़े-बड़े समर्थ हार मान जाएँ, किंतु कोई मामूली व्यक्ति मूर्खतावश सफल होने की आशा करे।

ऊँट रे ऊँट तेरी कौन कल सीधी—ऐसा आदमी जो हर तरह से टेढा हो।

एक और एक ग्यारह होते हैं—जहाँ दो मिल जाते है, उनकी शक्ति कई गुना बढ़ जाती है।

एक तो करेला, दूजे (दूसरे) नीम चढ़ा—किसी में पहले से ही कोई अवगुण हो और जिसके साथ संयोग हो उससे वह अवगुण और भी बढ़ जाए तो कहते है।

एक मछली सारे तालाब को गंदा करती है—एक बुरा व्यक्ति सारे वर्ग, समुदाय अथवा समाज को कलंकित कर देता है।

एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं—जहाँ एक की जगह हो वहाँ दो का अधिकार नहीं हो सकता, उनमें लड़ाई होगी ही।

एक हाथ से ताली नहीं बजती—झगड़ा केवल एक पक्ष के कारण नहीं होता दूसरे पक्ष का भी उसमें कुछ-न-कुछ योग अवश्य होता है।

एक ही थैली के चट्टे-बट्टे—समानधर्मा, एक जैसे (अव) गुणों वाले (प्रायः तिरस्कारसूचक)।

ओछे की प्रीत जैसे बालू की भीत—नीच व्यक्ति की मित्रता रेत की दीवार की तरह कच्ची होती है।

ओस चाटने से प्यास नहीं बुझती—बहुत ही थोड़ी-सी वस्तु मिलने से तृप्ति नहीं होती।

कभी के दिन बड़े कभी की रात—(1) समय एक-सा नहीं रहता, आज एक का मौक़ा हो तो कल दूसरे का भी आता है; (2) कभी सुख, कभी दुःख।

कर सेवा खा मेवा—सेवा और परिश्रम का फल अच्छा होता है। सेवा और परिश्रम करने वाला सुखी रहता है।

करेगा सो भरेगा—जो जैसा करेगा उसे उसका फल भी वैसा ही मिलेगा।

कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू (भोजवा) तेली—जहाँ कोई मुक़ाबला ही न हो, दोनों में ऊँच-नीच का बहुत अंतर हो; एक दरिद्रता की चरम सीमा पर हो, दूसरा वैभव के शिखर पर।

काजल की कोठरी में जाएगा तो कालिख लगेगी ही—बुरे स्थान पर जाने से अपयश तो मिलेगा ही।

काठ की हाँडी बार-बार नहीं चढ़ती—छल-कपट का व्यापार हमेशा नहीं चलता, लोग जल्दी ही सचेत हो जाते हैं।

कोयलों की दलाली में हाथ काले—बुरे काम में हाथ डालने पर बुराई ही हाथ आती है।

कौवा चला हंस की चाल, अपनी (चाल) भी भूल गया—अपने में बड़ाई न हो, और बड़ों की नकल की जाए, तो हानि ही होगी; बड़ों की नक़ल करके जगहँसाई कराने पर कहते हैं।

खरबूज़े को देखकर खरबूज़ा रंग बदलता है—जैसा कोई बड़ा करता है, वैसा ही उसके साथी या उससे छोटे भी करने लग जाते हैं; एक को कुछ करते देख दूसरे भी उसका अनुकरण करने लगते हैं।

खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे—अपनी करनी पर शर्मिंदा होने पर कोई किसी बेक़सूर की लानत-मलामत करे अथवा इस प्रकार का व्यवहार करे तो कहते हैं।

ख़ुदा गंजे को नाख़ून न दे—ओछा व्यक्ति ऊँचे पद पर पहुँच जाएगा तो अंधेर ही करेगा। बुरा व्यक्ति अच्छे साधन का भी दुरुपयोग ही करता है। भगवान बुरे को साधन न दे।

ख़ुदा देता है तो छप्पर फाड़कर देता है—ईश्वर को जब देना होता है तो वह किसी बहाने देता ही है और भरपूर देता है।

खोटा सिक्का और नालायक बेटा भी वक़्त पर काम आते हैं—कोई वस्तु निकम्मी समझकर फेंक नहीं देनी चाहिए, वह कभी-कभी अप्रत्याशित रूप से काम दे जाती है। निकम्मी वस्तु और नालायक व्यक्ति भी कभी-कभी बड़े काम के साबित होते हैं।

खोदा पहाड़ निकली चुहिया—भारी परिश्रम करने के बाद भी कुछ खास हाथ न लगे, अथवा जितनी मेहनत की जाए उसके देखे अत्यंत नगण्य उपलब्धि हो तो कहते हैं।

गंगा गए गंगादास, जमुना गए जमुनादास—अवसरवादी व्यक्ति, जिसकी निष्ठा का कोई भरोसा न हो।

ग़रीब की जोरू सबकी (गाँव भर की) भाभी (भौजाई)—सीधे-सादे आदमी को सब दबाते हैं।

गले पड़ा ढोल बजाना ही पड़ता है—जब कोई जिम्मेदारी सिर पर आ ही पड़े तो फिर उसे निभाना ही पड़ता है।

गेहूँ के साथ घुन भी पिस जाता है—जिसका विनाश होना है, उसके संपर्क में आने वाला भी नष्ट हो जाता है।

घर का भेदी लंका ढाए—व्यक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन वह होता है जो उसके अंतरंग भेद जानता हो। घर में फूट ही तो विनाश निश्चित है (जैसे विभीषण ने रामचन्द्रजी से मिलकर रावण का भेद दे दिया था और उससे लंका का नाश हुआ था)।

घर/गाँव का जोगी जोगना, आन गाँव का सिद्ध—अपने निकट के सुयोग्य व्यक्ति को छोड़कर बाहर के सामान्य व्यक्ति को भी प्रायः लोग ऊँचा या बड़ा मानते हैं। योग्य व्यक्ति की क़द्र पास-पड़ोस में नहीं होती।

घर की मुर्ग़ी दाल बराबर—घर की चीज की क़द्र नहीं होती; जो चीज सहज उपलब्ध हो वह बहुत मूल्यवान् होने पर भी साधारण लगती है।

घर में नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने—जब कोई साधन न होने पर भी व्यक्ति बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाए या आशाएँ करने लगे तो कहते हैं।

घोड़ों को घर कितने दूर—जिसमें काम करने की सामर्थ्य हो उसे काम करने में देर नहीं लगती।

चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए—बेहद कंजूस के लिए कहते हैं, जो एक दमड़ी बचाने के लिए कितना भी कष्ट झेलने को तैयार हो।

चांद को भी ग्रहण लगता है—चरित्रवान् पर भी कभी कलंक लग जाता है।

चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात—सुख-वैभव (और सौंदर्य) थोड़े ही दिन टिकता है।

चिराग तले अंधेरा—जहां जिस चीज़ का होना सबसे अधिक स्वाभाविक हो वहीं उसका अभाव होने पर कहते हैं। जहां न्याय, व्यवस्था इत्यादि की आशा हो वहीं इन सबका अभाव हो तो कहा जाता है।

चील के घर में मांस की धरोहर—कोई चीज ऐसे व्यक्ति को सौंपना जो स्वयं उसे हड़प जाए; मूर्खतापूर्ण कार्य।

चोर का भाई गठकटा—अपराधी का पक्षधर भी कोई अपराधी ही होता है।

चोर की दाढ़ी में तिनका—अपराधी अपने अत्यधिक चौकन्नेपन से अपना भंडा फोड़ देता है। अपराध करने वाले को खटका लगा ही रहता है और वह अपनी चेष्टाओं से अपने अपराध का संकेत दे देता है।

चोर-चोर मौसेरे भाई—बुरे व्यक्तियों में जल्दी मेल हो जाता है।

चोर के घर मोर—जब चालाक व्यक्ति को भी ठग ले जाए तो कहते हैं।

चोर चोरी से गया तो क्या हेरा-फेरी से भी गया—बुरी आदत कोशिश करने पर भी पूरी तरह साथ नहीं छोड़ती।

छछूंदर के सिर में (पर) चमेली का तेल—क्षुद्र व्यक्ति को वैभव मिल जाने पर कहते हैं।

छोटा मुंह बड़ी बात—बड़ों के सामने धृष्टता करने पर कहा जाता है।

जंगल में मोर नाचा किसने देखा—सौंदर्य अथवा योग्यता का ऐसी जगह अस्तित्व या प्रदर्शन, जहां कोई कद्रदान न हो।

जल में रहकर मगर (मगरमच्छ) से बैर—जहां रहना हो वहां के बड़े लोगों से दुश्मनी मोल लेना, अपनी मुसीबत बुलाना।

जाके पैर न फटी बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई—जिसने स्वयं कष्ट नहीं सहा, वह दूसरे के कष्ट को क्या समझेगा?

जाको राखे साइयां, मार सके ना कोय—जिसका रक्षक ईश्वर हो, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

जान बची, लाखों पाए—जब किसी मुसीबत से छुटकारा मिल जाए तब अपार सुख होता है। ऐसा होने पर कहते हैं।

जिसकी बिल्ली उसी से म्याऊँ—जब आश्रित ही आश्रयदाता के आगे अकड़ दिखाने लगे तो कहते है।

जिसकी (जाकी) लाठी उसकी (वाकी) भैंस—जहाँ शक्ति ही अधिकार का प्रतीक हो, न्याय नही, वहाँ के लिए कहा जाता है।

जिसके सिर पर ताज, उसके सिर में खाज—ऊँचे पद की जिम्मेदारी निभाना भी कठिन होता है।

जिसका खाइए, उसका गाइए—अपने आश्रयदाता का गुणगान करना चाहिए।

जिसकी फ़िक्र, उसका ज़िक्र—मनुष्य को जिस बात की चिंता होती है उसी की चर्चा करता है।

जान है तो जहान है—जब तक जीवन है तब तक सब-कुछ है, उससे बाद कुछ नही।

जो बोले सो कुंडा खोले—जो अच्छा सुझाव दे, वह उसकी जिम्मेदारी भी उठाए।

झूठे का मुंह काला, सच्चे का बोलबाला—झूठे की हमेशा हार होती है, और सच्चे की जीत।

डूबते को तिनके का सहारा—विपत्ति में पड़ा व्यक्ति थोड़ी-सी सहायता पाकर भी उबर सकता है।

तलवार का घाव भरता है, बात का घाव नहीं भरता—कोई बात मन को चुभ जाए तो वह फिर भुलाए नही भूलती।

तेतो (तेते) पांव पसारिए जेती लांबी सौर—अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही जिम्मेदारी लेनी चाहिए या खर्च करना चाहिए।

तेल देखो, तेल की धार देखो—अच्छी तरह जाँचने-परखने के बाद ही कोई निर्णय करो या करना चाहिए।

तेलची (तेली) का तेल जले, मसालची का दिल (जी) जले—दूसरे का व्यय हो और दूसरे को बुरा लगे तो कहते है।

थोथा चना बाजे घना—ओछा व्यक्ति बढ़-बढ़कर बातें करता है।

दूध का जला छाछ फूंक-फूंककर पीता है—एक बार धोखा खाने पर मनुष्य आवश्यकता से अधिक सावधान हो जाता है।

दूध का दूध, पानी का पानी—दोषी-निर्दोष अथवा उचित-अनुचित का स्पष्ट हो जाना।

दूर के ढोल सुहावने—दूर की चीज़ साधारण होने पर भी आकर्षक लगती है।

देखें ऊँट किस करवट बैठता है—देखें आगे क्या होता है?

दो मुल्लों में मुर्ग़ी हराम—जब दो आदमियों की बहस में कोई काम आगे न बढ़ पाए तो कहते हैं।

धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का—कहीं का न रहना, कहीं भी ठौर न मिलना।

नक्कारखाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है—बड़ों के आगे ग़रीब-असहायों की बात कोई नहीं सुनता।

न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी—बड़ी-बड़ी शर्तें रखना—न शर्तें पूरी होंगी, न काम बनेगा।

नया नौ दिन पुराना सौ दिन—(1) नई वस्तु कुछ ही दिन नई रहती है, पुरानी वस्तु ही लम्बा साथ देती है। (2) नई की तुलना में पुरानी चीज़ अधिक टिकाऊ होती है।

न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी—झगड़े की जड़ ही ख़त्म कर देना।

नाच न जाने आँगन टेढ़ा—काम न आता हो, और अन्य वस्तुओं में दोष निकाल-कर कोई बहाना बनाए तो कहते हैं।

नाम बड़े, दर्शन छोटे (थोड़े)—ख्याति अधिक, गुण कम।

नीम हकीम, ख़तरा-ए-जान—अधूरा ज्ञान रखने वाले से सलाह लेने पर काम बिगड़ जाता है।

नेकी कर दरिया में डाल—परोपकार करके भूल जाना चाहिए, उसकी जगह-जगह चर्चा नहीं करनी चाहिए।

नौ नक़द तेरह उधार—बाद में होने वाले बड़े लाभ से तुरंत मिलने वाला थोड़ा या छोटा लाभ अच्छा होता है।

पंचों का कहना सिर आँखों पर, मगर परनाला यहीं गिरेगा (बहेगा)—बड़ों का फ़ैसला मान लेने का ढोंग करके अपनी ज़िद पर अड़े रहना।

पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं—पराधीन व्यक्ति सुख की कल्पना भी नहीं कर सकता।

पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होतीं—सब मनुष्य (या सभी चीज़ें) एक-से (सी) नहीं होते (होतीं), कोई बुरा होता है तो कोई अच्छा भी होता है।

बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद—जब किसी व्यक्ति को किसी चीज़ के गुणों की परख न हो तो कहते हैं।

बकरे की माँ कब तक ख़ैर मनाएगी—जब कोई विपत्ति आनी ही है तो उससे कब तक बचा जा सकता है?

बगुला भगत—जो सच्चरित्र व्यक्ति का ढोंग करके स्वार्थ साधन की चिंता में रहे।

बाप बड़ा न भैया सबसे बड़ा रुपैया—रुपये-पैसे के लोभ में सब रिश्तेदारी धरी रह जाती है, पैसे के प्रति लगाव और सबको भुला देता है।
बिल्ली के भागों (भाग से) छींका टूटा—अकस्मात् कोई चीज़ हाथ लग जाना।
बूँद-बूँद करके तालाब भरता है—थोड़ा-थोड़ा संचय करने से बहुत इकट्ठा हो जाता है।
भागते भूत की लँगोटी भली—जब कुछ न मिल रहा हो तब थोड़ा-सा मिल जाने पर भी संतोष करना पड़ता है।
भूखे भजन न होइ गुपाला—पेट भूखा हो तो भगवान् के ध्यान में भी मन नहीं लगता।
मन चंगा तो कठौती में गंगा—मन शुद्ध है तो घर में ही तीर्थ है।
मान न मान, मैं तेरा मेहमान—जबरदस्ती गले पड़ना।
मियाँ की जूती मियाँ के सिर—किसी से कोई वस्तु लेकर या कोई बात सीखकर उसीसे उस पर वार करना।
मुँह में राम बगल में छुरी—सच्चरित्रता का ढोंग करके किसी को हानि पहुँचाने की ताक में रहने वाले के लिए कहते हैं।
यह मुँह और मसूर की दाल ?—योग्यता कुछ भी नहीं और पाना इतना कुछ चाहते हो !
रस्सी जल गई, ऐंठन न गई—दुर्दशा होने पर भी अकड़ बनी रहना।
लंका में सब बावन गज/हाथ के—जब किसी देश क्षेत्र, गाँव, परिवार आदि में सब लोग असामान्य कोटि के हों तो कहते है।
लिखे मूसा पढ़े खुदा/ईसा—ऐसी लिखावट जो किसी से पढ़ी न जाए।
वहम का इलाज तो लुकमान के पास भी नहीं था—शक्की को कोई नहीं समझा सकता।
शेर बकरी एक घाट पानी पीते हैं—इतना अच्छा शासन कि किसी को किसी से डर न हो।
सब्र का फल मीठा होता है—धैर्य से अच्छा फल मिलता है।
साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे—काम भी बन जाए और हानि भी न हो।
सिर दिया ओखली में तो मूसलों से क्या डरना—जब किसी खतरनाक काम का बीड़ा उठाया तो फिर उसमें आने वाले खतरों से क्या डरना।
सिर मुँडाते ही ओले पड़े—कार्य आरंभ करते ही विघ्न आ जाना।
सौ सुनार की, एक लुहार की—जब एक व्यक्ति थोड़ा-थोड़ा करके लम्बे समय तक किसी को नुकसान पहुँचाता रहे और उसके जवाब में दूसरा एक

ही वार करके सारी कसर पूरी कर दे, या पूरी कर देने की शक्ति रखता हो तो कहते हैं।

हाथ कंगन को आरसी क्या—प्रत्यक्ष को प्रमाण की क्या आवश्यकता ?

होनहार बिरवान के होत चीकने पात—जो होनहार होता है उसके गुणों और उज्ज्वल भविष्य के संकेत बचपन में ही मिलने लगते हैं।

• •